बृहज्जातक सटीक

(फलित ज्योतिष का अपूर्व संग्रह ग्रंथ)

टीकाकार

पण्डित रामरत्न अवस्थी, बाराबंकी

[संशोधित संस्करण]

प्रकाशक—तेजकुमार बुकडिपो (प्रा०) लिमिटेड,

उत्तराधिकारी—नवलकिशोर बुकडिपो,

हजरतगंज—लखनऊ,

सर्वाधिकार सुरक्षित

छठीबार ३०००] सन् १९९२ ई०

T.K.B.D
Lko.
Rs. 35/2

बृहज्जातक सटीक

की

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
राशिभेदाध्यायः १	
मंगलाचरण	१
मंगलश्लोकार्थ सवैया ...	२
ग्रन्थकारप्रतिज्ञा	२
होरशब्दार्थनिर्णय ...	३
कालनरोग	३
सवैया	३
मेषादि राशियों में नक्षत्र-चरण व पर्याय-ज्ञान ...	४
राशिस्वरूप	४
राशिस्वामी	५
राशिस्वामिचक्र	५
नवांशविधि	५
नवांशचक्र	६
द्वादशांशविधि	७
द्वादशांशचक्र	७
त्रिंशांशविधि	८
त्रिंशांशचक्र	८
राशि-संधि	८
मेषादि राशियों के नामान्तर	९
षड्वर्ग	९
पृष्ठोदयादिचक्र	१०
राशियों की क्रूर-सौम्य, पुरुष-स्त्री, चर-स्थिर-द्विस्वभाव-संज्ञा	१०
क्रूर-सौम्य, पुरुष-स्त्री, चर-स्थिर-द्विस्वभाव चक्र ...	११
दिगीशराशियाँ	११
दिगीशचक्र	११
होरा	११
होराचक्र	१२
द्रेष्काण	१२
द्रेष्काणचक्र	१२
अन्यमत से होरा	१३
अन्यमत से होरा चक्र ...	१३
अन्यमत से द्रेष्काण ...	१३
द्रेष्काणचक्र	१३
ग्रहोच्च-नीचराशि-अंश ...	१४
ग्रहोच्च-नीचचक्र	१४
वर्गोत्तमसंज्ञक नवांश ...	१५
वर्गोत्तमचक्र	१५
सूर्यादित्रिकोण	१५
त्रिकोणचक्र	१५
लग्नादि के नाम	१५
भावनामचक्र	१६
उपचय-अपचयसंज्ञा ...	१६
उपचय-अपचयसंज्ञा चक्र ...	१६
लग्नादि के नामान्तर ...	१७
नामान्तरचक्र	१७
केन्द्रादि संज्ञा	१७
भावनाम	१८
भावनामचक्र	१८
होरादिबल	१९
केन्द्रादिबल	१९
केन्द्रादिबल चक्र	१९
लग्नबल	१९
लग्नबलचक	२०

विषय	पृष्ठ
राशिभाग	२०
राशिभागचक्र	२०
राशिस्वरूप	२१
राशिस्वरूपचक्र	२१
राशिप्लवचक्र	२१

ग्रहभेदाध्यायः २

विषय	पृष्ठ
कालात्मादि संज्ञा ...	२२
ग्रहनामसंज्ञा-पर्याय ...	२३
ग्रहों का वर्ण	२३
वर्णेश ग्रह	२४
वर्णेशचक्र	२४
ग्रहेश	२४
ग्रहेशचक्र	२४
दिगीश	२४
दिगीशचक्र	२४
पापग्रह	२५
ग्रहों की पुरुषादि संज्ञा	२५
पुरुषादिचक्र	२५
पञ्चभूतेश	२५
पञ्चभूतेशचक्र	२५
ब्राह्मणादिवर्णेश	२६
ब्राह्मणादिवर्णेशचक्र ...	२६
गुणेश	२६
गुणेशचक्र	२६
ग्रहस्वरूप	२६
ग्रहधातुसार	२७
ग्रहधातुसारचक्र	२८
ग्रहों के स्थान	२८
ग्रहस्थानचक्र	२८
ग्रहवस्त्र	२८
वस्त्रचक्र	२८
ग्रहों का द्रव्य	२९
ग्रहद्रव्यचक्र	२९
लग्नगत ग्रह और द्रेष्काण से ऋतुज्ञान	२९
ऋतुचक्र	२९
ग्रहदृष्टिस्थान	३०
दृष्टिचक्र	३०
ग्रहों से कालज्ञान ...	३०
कालज्ञानचक्र	३१
ग्रहों से रसज्ञान	३१
ग्रहरसचक्र	३१
ग्रहमित्रशत्रुनिर्णय	३१
अन्योक्तमित्रामित्रचक्र ...	३२
सत्याचार्योक्त मित्रचक्र ...	३३
उक्तचक्रविशेषभेदचक्र ...	३३
वराहमिहिरोक्त मित्रा-मित्रादि	३४
वराहमिहिरोक्त मित्रादिचक्र	३४
तात्कालिकमित्रादि ...	३५
तात्कालिकमित्रादिचक्र ...	३५
स्थानबल	३६
दिग्बल	३६
ग्रहचेष्टाबल	३७
ग्रहकालबल	३८
नैसर्गिक बल	३८

वियोनिजन्माध्यायः ३

विषय	पृष्ठ
वियोनिपश्वाकार कालचक्र ...	३९
वियोनिवर्णज्ञान	४०
पक्षिजन्मज्ञान	४१
वृक्षजन्मज्ञान	४१
वृक्षसंख्याज्ञान	४१
जल-निर्जलवृक्ष-विशेषज्ञान ...	४२
वृक्षशुभाशुभभूमिज्ञान ...	४२
पुनर्वृक्षसंख्याज्ञान	४३

निषेकाध्यायः ४

विषय	पृष्ठ
गर्भाधानयोग्य ऋतुयोग ...	४३

विषय	पृष्ठ
स्त्री पुरुषसंयोग-सम्भव ...	४३
मैथुन प्रकार ज्ञान ...	४४
गर्भसम्भव	४४
गर्भवती स्त्री और पुरुष का शुभाशुभ-ज्ञान ...	४५
गर्भस्थ मातापित्रादि शुभाशुभज्ञान	४६
गर्भिणीमरण-योग ...	४७
गर्भस्रावयोग	४८
गर्भपुष्टियोग	४८
पुत्र कन्याज्ञान	४९
नपुंसकयोग	५०
सन्ततिद्वययोग	५०
सन्ततित्रययोग	५१
अधिक सन्ततियोग ...	५१
गर्भमासेश	५२
अधिकांगयोग	५३
मूकयोग	५३
बहुत दिन पर बोलने का योग	५३
सदन्तयोग	५३
कूबरयोग	५४
पंगुलायोग	५४
जड़योग	५४
वामनयोग	५४
हीनांगयोग	५५
अन्धादियोग	५५
काणयोग	५६
प्रसवकालज्ञान	५६
वर्षत्रयगर्भधारणयोग ...	५७
द्वादशवर्षगर्भधारणयोग ...	५८

सूतिकाध्यायः ५

विषय	पृष्ठ
पितृपरोक्षजन्मज्ञान ...	५८
विदेशस्थपितृज्ञान ...	५८
सर्प और सर्पवेष्टित-जन्मज्ञान	५९
कोशवेष्टित यमलयोग ...	५९
नालवेष्टित जन्मज्ञान ...	६०
जारजातज्ञान	६०
जातपितृबन्धनयोग	६०
नौकास्थजन्मज्ञान	६१
जलस्थजन्मज्ञान	६१
कारागृहस्थजन्मज्ञान ...	६१
गर्तस्थजन्मज्ञान	६२
क्रीड़ागृह-देवगृह-ऊषर-भूमिजन्मज्ञान... ...	६२
श्मशानादिजन्मज्ञान ...	६२
जन्मदेशज्ञान	६३
मातृत्यक्त सन्तानज्ञान ...	६३
मातृत्यक्त मृत्युयोग ...	६३
जन्मगृहज्ञान	६४
दीपासंभव-संभवज्ञान ...	६५
भूशयनज्ञान	६५
प्रसवप्रकारज्ञान	६५
प्रसवकालिक मातृकष्टज्ञान ...	६६
दीपज्ञान	६६
सूतिकागृहद्वारज्ञान ...	६७
सूतिकागृहस्वरूपज्ञान ...	६७
घर में भी सूतिकाघर का ज्ञान	६८
सूतिकाशयनस्थानज्ञान ...	६८
खट्वाङ्गज्ञान	६८
उपसूतिका-संख्याज्ञान ...	६९
बालस्वरूपज्ञान	७०
ह्रस्वदीर्घाङ्गज्ञान ...	७०
व्रणमशकादिनिरूपण ...	७१
अङ्गचिह्नचक्र	७२
व्रणनिश्चयज्ञान	७३

अरिष्टाध्यायः ६

विषय	पृष्ठ
अरिष्टयोग	७४
अन्य अरिष्टयोग	७५
अरिष्टयोगान्तर, पृष्ठ ७४ से ७९ पर्यन्त	
अनुक्तमरणकालज्ञान ...	८०
अरिष्टयोग दोहा छन्दों में ...	८०

विषय	पृष्ठ
आयुर्दायाध्यायः ७	
मयादिकथित ग्रहोच्चायुर्दाय ...	८२
परमोच्चायुर्दायचक्र ...	८२
नीचायुर्दायप्रमाण ...	८२
परमनीचायुर्दायचक्र ...	८२
लग्नायुर्दाय	८४
आयुर्दायह्रास	८४
आयुर्दायचक्रार्द्धहानि ...	८५
सर्वायुर्दाय विशेषसस्कार ...	८६
मनुष्यादि की परमायुर्दाय ...	८७
परमायुर्दाययोग	८८
अन्यमत से आयुदोष ...	८९
जीवशर्म मतायुर्दाय ...	९५
सत्याचार्यमतायुर्दाय ...	९६
सत्याचार्यमतायुर्दाय गणित ...	९६
लग्नायुर्दायविधि	९९
सत्याचार्यमताङ्गीकरण ...	१००
अमितायुर्दाययोग	१०१
दशान्तर्दशाध्यायः ८	
दशाक्रमज्ञान	१०२
दशाप्रमाण तथा बहुग्रहदशा-क्रमज्ञान	१०३
अन्तर्दशाक्रमज्ञान	१०३
अथान्तर्दशा-विभाग-क्रम ...	१०४
शुभाशुभदशान्तर्दशानिर्णय ...	१०६
दशान्तर्दशा-नामान्तर ...	१०७
पुनः दशान्तर्दशा नामान्तर ...	१०८
शुभाशुभलग्नदशा ...	१०८
नैसर्गिक ग्रहदशा-काल ...	१०९
नैसर्गिक दशाप्रयोजन ...	१०९
लग्न का नैसर्गिक दशाकाल	१०९
दशाप्रारम्भकालिक शुभाशुभज्ञान	१११
तात्कालिक दशादि का शुभाशुभ ज्ञान	११२
दशान्तर्दशाकालिक चंद्राक्रान्त-राशि से शुभाशुभफलज्ञान	११२
सूर्य की शुभदशा का फल	११३
सूर्य की अशुभदशा का फल	११३
चन्द्रमा की शुभदशा का फल	११४
चन्द्रमा की अशुभदशा का फल	११४
मङ्गल की शुभदशा का फल	११४
मङ्गल की अशुभदशा का फल	११४
बुध की शुभदशा का फल	११५
बुध की अशुभदशा का फल	११५
बृहस्पति की शुभदशा का फल	११५
बृहस्पति की अशुभदशा का फल	११६
शुक्र की शुभदशा का फल	११६
शुक्र की अशुभदशा का फल	११६
शनैश्चर की शुभदशा का फल	११७
शनैश्चर की अशुभदशा का फल	११७
सर्वदशाओं का शुभाशुभ फल	११८
लग्नदशा का फल ...	११८
दशाओं का साधारण फल	११८
ग्रहजीवैक्यभाव का वर्णन	११९
वर्तमान भोग से वर्तमान दशा का निर्णय	१२०
वीर्यनिग्रहोक्तफल की सार्थकता	१२०
एकग्रहदत्त फलद्वय-विरोध का नियम	१२०
अष्टकवर्गाध्यायः ९	
सूर्याष्टकवर्गाङ्क	१२१
सूर्यशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२२
सूर्य्यानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२२
चन्द्राष्टकवर्गाङ्क	१२३
चन्द्रशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२३
चन्द्रानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२४
मङ्गलाष्टकवर्गाङ्क ...	१२४
मङ्गलशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२५
मङ्गलानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२५

विषय	पृष्ठ
बुधाष्टकवर्गाङ्क	१२६
बुधशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२६
बुधानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२७
बृहस्पत्यष्टकवर्गाङ्क ...	१२७
बृहस्पतिशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२८
बृहस्पति अनिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र	१२८
शुक्राष्टकवर्गाङ्क	१२९
शुक्रशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१२९
शुक्रानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१३०
शनैश्चराष्टकवर्गाङ्क ...	१३०
शनिशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१३१
शन्यनिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ...	१३१
अष्टकवर्गाङ्कफल ...	१३२

कर्माजीवाध्यायः १०

विषय	पृष्ठ
धनप्राप्तियोग	१३३
उक्त नवांशपति-वृत्ति ...	१३४
कर्मेश से गोचरकालिक सिद्धि	१३५
धनप्राप्ति-ज्ञान	१३५

राजयोगाध्यायः ११

विषय	पृष्ठ
यवनमत से राजयोग ...	१३६
जीवशर्म-मत से राजयोग ...	१३६
राजयोग १३६ से १४५ पर्यन्त	१३६
राज्यप्राप्ति-कालज्ञान ...	१४६
भोगयोग	१४७
शबरदस्यु-स्वामियोग ...	१४७

नाभसयोगाध्यायः १२

विषय	पृष्ठ
नाभसयोग-संख्याज्ञान ...	१४८
आश्रययोगत्रय	१४९
दो दलयोग	१५०
अन्यमत-आश्रययोगानुक्ति-कारणज्ञान	१५०
आकृतियोग	१५१
स्वान्यमत-त्रिभाग ...	१५२
यूप-इषु-शक्ति-दण्डयोग ...	१५२
नौका-कूट-छत्र-चापयोग ...	१५३
अर्धचन्द्रयोग	१५३
समुद्रयोग	१५४
चक्रयोग	१५४
संख्यायोग	१५४
आश्रय-दलयोगफल ...	१५५
आकृतियोगफल	१५५
संख्यायोगफल	१५७

चन्द्रयोगाध्यायः १३

विषय	पृष्ठ
जातस्वभावज्ञान ...	१५८
धनसुखयोग	१५९
अधियोग-योग	१५९
सुनफा-अनफा-दुरुधरा-केमद्रुमयोग ...	१६०
सुनफा-अनफा-दुरुधराभेदज्ञान	१६१
सुनफायोगफल	१६७
अनफायोगफल	१६७
दुरुधरायोगफल	१६८
केमद्रुमयोगफल	१६८
उक्तयोगकारकग्रहफल ...	१६८
चन्द्रफल	१६९
लग्न-चन्द्रोपचयस्थ-शुभग्रहफल	१६९

द्विग्रहयोगाध्यायः १४

विषय	पृष्ठ
सूर्यान्यसंयोगफल ...	१७०
चन्द्रान्यसंयोगफल ...	१७०
मंगलान्यसंयोगफल ...	१७१
बुधान्यसंयोगफल ...	१७१
बृहस्पतिअन्यसंयोगफल ...	१७२
शुक्रशनैश्चरसंयोगफल ...	१७२
त्रिग्रहयोगफल	१७२

विषय — पृष्ठ

प्रव्रज्यायोगाध्यायः १५

प्रव्रज्यायोग १७३
प्रव्रज्यायोगान्तर ... १७५
शास्त्रकृद्योग १७५
राजप्रव्रज्यायोग १७६

ऋक्षशीलाध्यायः १६

अश्विनी-भरणी जन्मफल ... १७६
कृत्तिका-रोहिणी जन्मफल ... १७७
मृगशिरार्द्रा जन्मफल ... १७७
पुनर्वसु जन्मफल ... १७७
पुष्य-श्लेषा जन्मफल ... १७७
मघा-पूर्वाफाल्गुनी जन्मफल १७८
उत्तराफाल्गुनी-हस्त जन्मफल १७८
चित्रा-स्वाती जन्मफल ... १७८
विशाखानुराधा जन्मफल ... १७८
ज्येष्ठा-मूल जन्मफल ... १७९
पूर्वोत्तराषाढ़ा जन्मफल ... १७९
श्रवण-धनिष्ठा जन्मफल ... १७९
शतभिष-पूर्वभाद्रपद जन्मफल १७९
उत्तराभाद्रपद-रेवती जन्मफल १८०

चन्द्रराशिशीलाध्यायः १७

जन्मकालिक मेषस्थ चन्द्रफल १८०
वृषस्थ चन्द्रफल ... १८१
मिथुनस्थ चन्द्रफल ... १८१
कर्कस्थ चन्द्रफल ... १८२
सिंहस्थ चन्द्रफल ... १८२
कन्यास्थ चन्द्रफल ... १८३
तुलास्थ चन्द्रफल ... १८३
वृश्चिकस्थ चन्द्रफल ... १८४
धनस्थ चन्द्रफल ... १८४
मकरस्थ चन्द्रफल ... १८५
कुम्भस्थ चन्द्रफल ... १८५
मीनस्थ चन्द्रफल ... १८५
उक्तापवादफल १८६

विषय — पृष्ठ

ग्रहराशिशीलाध्यायः १८

राशिस्थ रविफल ... १८६
मेष-वृषस्थ सूर्यफल ... १८६
मिथुन-कर्क-सिंह-कन्यास्थ सूर्यफल १८७
तुला-वृश्चिक-धन-मकरस्थ सूर्यफल १८७
कुम्भमीनस्थ सूर्यफल ... १८८
राशिस्थ भौमफल ... १८८
मेष-वृश्चिक-वृष-तुलास्थ मङ्गलफल १८९
मिथुन-कन्या-कर्कस्थ मङ्गलफल १८९
सिंह-धन-मीन-मकर-कुम्भस्थ-मङ्गलफल १८९
राशिस्थ बुधफल ... १९०
मेष-वृश्चिक-वृष-तुलास्थ बुधफल १९०
मिथुन-कर्कस्थ बुधफल ... १९०
सिंह-कन्यास्थ बुधफल ... १९१
मकर-कुम्भ-धन-मीनस्थ बुधफल १९१
राशिस्थ गुरुफल १९२
मेष-वृश्चिक-वृष-तुला-मिथुन कन्यास्थ बृहस्पतिफल ... १९२
कर्क-सिंह-धन-मीन-कुम्भ-मकरस्थ बृहस्पतिफल ... १९२
राशिस्थ भृगुफल ... १९३
मेष-वृश्चिक-वृष तुलास्थ शुक्रफल १९३
मिथुन-कन्या-मकर-कुम्भस्थ शुक्रफल १९३
कर्क-सिंह-धन-मीनस्थ शुक्रफल १९४
राशिस्थ शनिफल ... १९४
मेष-वृश्चिक-मिथुन-कन्यास्थ शनिफल १९४
वृष-तुला-कर्क-सिंहस्थ शनिफल १९५
धन-मीन-मकर-कुम्भस्थ शनिफल १९५

विषय	पृष्ठ
लग्नफल	१९६

दृष्टिफलाध्यायः १९

विषय	पृष्ठ
मेषादिराशिस्थित मङ्गलादिदृष्ट चन्द्रफल	१९७
सिंहादिराशिस्थ बुधादिदृष्ट चन्द्र-फल	१९८
धनादिराशिस्थ बुधादिदृष्ट चन्द्र-फल	१९९
होरास्थ ग्रहदृष्ट चन्द्रफल ...	१९९
द्रेष्काणस्थ ग्रहदृष्टचन्द्रफल ...	२००
मेषादिद्वादशांशस्थ चन्द्रोपरि दृष्टिफल	२००
मेषादिनवांशस्थ चन्द्रोपरि दृष्टिफल	२००
उक्त नवांश का विशेष दृष्टिफल	२०२

भावफलाध्यायः २०

विषय	पृष्ठ
भावस्थितानां ग्रहाणां फलानि	२०३
लग्न तथा द्वितीयस्थ सूर्यफल	२०३
तृतीयादि स्थानस्थ सूर्यफल	२०४
लग्नादि भावस्थ चन्द्रफल	२०५
लग्नादि भावस्थ मंगलफल	२०६
लग्नादि भावस्थ बुधफल ...	२०६
लग्नादि भावस्थ गुरुफल ...	२०७
लग्नादि भावस्थ शुक्रफल ...	२०७
लग्नादि भावस्थ शनिफल ...	२०८
लग्नादि द्वादशभावस्थ सर्वग्रह-विशेषफल	२०८
ग्रहकुण्डली-विशेषफल ...	२०९

आश्रयाध्यायः २१

विषय	पृष्ठ
स्वगृहस्थ ग्रहैकवृद्धिफल ...	२१०
मित्रगृहस्थ ग्रहैकवृद्धिफल ...	२१०
मित्रदृष्ट एकोच्चस्थ ग्रहफल	२११
नीचादिस्थ ग्रहैकवृद्धिफल	२११
कुम्भलग्नजातफल ...	२१२
होरास्थ ग्रहफल ...	२१२
द्रेष्काणस्थ चन्द्रफल ...	२१३
मेषादिनवांशजातस्वरूप ...	२१४
त्रिशांशफल	२१४

प्रकीर्णकाध्यायः २२

विषय	पृष्ठ
कारकसंज्ञकग्रह	२१६
उक्तार्थोदाहरण	२१६
कारकान्तर	२१७
कारकफल	२१७
यौवनसुखयोग	२१८
दशाफलज्ञान	२१८
अष्टकवर्गफल का ज्ञान ...	२१९

अनिष्टाध्यायः २३

विषय	पृष्ठ
त्रिप्रकारक स्त्रीमरणयोग ...	२२०
पुरुष-स्त्री-काण-हीनांग योग	२२१
बन्ध्यापतियोग	२२१
अपुत्रकलत्रयोग	२२१
परस्त्रीगमनयोग	२२२
अभार्यासुतयोग	२२२
वृद्धस्त्रीपुरुषयोग	२२२
वंशच्छेदयोग	२२२
शिल्पीयोग	२२३
दासीजातज्ञान	२२३
नीचकर्मकृद्योग	२२३
वातरोगयोग	२२३
गुह्यरोगयोग	२२३
श्वित्रीयोग	२२३
हीनांगयोग	२२४
श्वासक्षयादिरोगयोग ...	२२४
कुष्ठयोग	२२४
अन्धयोग	२२५
बधिरयोग	२२५
पिशाचयोग	२२६
पुनः अन्धयोग	२२६
वातरोगियोग	२२६
उन्मादयोग	२२६
दासयोग	२२७
खल्वाटयोग	२२७

विषय	पृष्ठ
अदृढेक्षणयोग	२२७
अनेकव्याधियोग	२२७
हीनाङ्गयोग	२२७
बन्धनयोग	२२८
परुषवचनादियोग	२२८
भृतकयोग	२२९
स्त्रीजातकाध्यायः २४	
स्त्रीजातकफल	२२९
स्त्रीस्वभावज्ञान	२३०
त्रिशांशफल	२३०
लग्न तथा चन्द्रमा का फल-विभाग	२३२
स्त्री-स्त्रीमैथुन-योगद्वय ...	२३३
कापुरुषादि पतियोग ...	२३३
बन्धनकी-परोगभगा-पतिप्रिया-योग	२३५
वृद्धपत्यादियोग	२३५
लग्नस्थग्रहफल	२३६
वैधव्यादियोग	२३७
पुरुषिणीयोग	२३७
ब्रह्मवादिनीयोग	२३७
स्त्रीप्रव्रज्यायोग	२३८
निर्याणाध्यायः २५	
निर्याणाध्यायस्थ मृत्यु का विचार	२३८
मरण-प्रदेश का ज्ञान ...	२३९
अन्य प्रकार से मृत्यु का ज्ञान	२३९
अन्य मृत्युयोग २४० से २४३ पर्यन्त ...	२४०
मृत्युयोगान्तर ...	२४४
मरण-भूमि का ज्ञान ...	२४४
मरणकालिकमोह-काल का ज्ञान	२४५
मृतशरीर-परिणाम-ज्ञान ...	२४५
त्यक्तलोकज्ञान	२४६
उक्त लोकों में भी श्रेष्ठादि-ज्ञान	२४७
मृतप्राणि-गम्य-लोक-ज्ञान	२४७
मोक्ष के दो योग ...	२४८
नष्टजातकाध्यायः २६	
नष्टजातकान्तर्गत जन्म-समय का ज्ञान	२४८
वर्षज्ञान	२४९
जन्मकालिक ऋतु का ज्ञान	२५०
ऋतु और अयन का विपरीत होने पर ऋतु का ज्ञान ...	२५१
मासज्ञान	२५२
तिथि-ज्ञान	२५२
चान्द्र-तिथि-ज्ञान ...	२५२
दिवा-रात्रि-जन्म-ज्ञान ...	२५३
जन्म-वेला-ज्ञान ...	२५३
लक्ष्मणपुर (लखनऊ) के पलात्मक लग्न	२५३
मतान्तर से मासज्ञान ...	२५३
जन्मराशि-ज्ञान ...	२५५
प्रकारान्तर से जन्मराशि-ज्ञान	२५५
जन्म-लग्न-ज्ञान	२५६
प्रकारान्तर से जन्म-लग्न-ज्ञान...	२५७
प्रकारान्तर से नष्ट-जातक की विधि	२५७
राशि-गुणकचक्र ...	२५८
ग्रह-गुणकचक्र	२५८
नक्षत्र-ज्ञान	२५८
वर्षादि-ज्ञानोपाय ...	२५९
प्रकारान्तर से जन्म-नक्षत्र-ज्ञान	२६१
नष्टजातकोपसंहार ...	२६२
द्रेष्काणाध्यायः २७	
बारहों राशियों के प्रथम-द्वितीय-तृतीय द्रेष्काण का स्वरूप २६२ से २६७ पर्यन्त...	२६२
उपसंहाराध्यायः २८	
ग्रन्थस्य विषय-परिगणन ...	२७७
टीकाकार का परिचय ...	२८०
संपादक का परिचय ...	२८०

इति ।

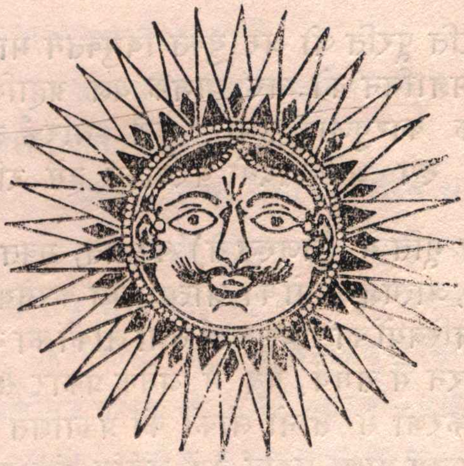

श्रीसूर्याय नमः ।

बृहज्जातक

भाषा-टीका-सहित ।

—:०:—

अथ राशिभेदाध्यायः प्रथमः ।

मंगलाचरण ।

मूर्तित्वे परिकल्पितश्शशभृतो वर्त्माऽपुनर्जन्मना-
मात्मेत्यात्मविदां क्रतुश्च यजतां भर्तामरज्योतिषाम् ।
लोकानां प्रलयोद्भवस्थितिविभुश्चानेकधा यः श्रुतौ
वाचं नस्स ददात्वनेककिरणस्त्रैलोक्यदीपो रविः ॥ १ ॥

मंगलश्लोकार्थ सवैया ।

चन्द्र कि मूरति पूरति जो अरु युक्त विमुक्तन मारग जोई ।
आतम आतमज्ञानिन को अरु याजक यज्ञ ग्रहादि भरोई ॥
लोकलयादिक कारगुजार हजार करै धरिकै तम खोई ।
वेदनिरूपित रूप अनेक दियो वरवाक्य हमें रवि सोई ॥

चन्द्रमा की मूर्ति में (तेजरूप से) कल्पित, मुक्त होनेवालों के जाने का मार्ग, आत्मज्ञानियों का आत्मा, यज्ञ करनेवालों का यज्ञ, देवता और तेजस्वियों का पोषणकर्ता तथा लोकों का नाश, उत्पत्ति और पालन करने में समर्थ, वेद में अनेक प्रकार से वर्णित तथा अपरिमित किरणों से तीनों लोकों को प्रकाशित करनेवाले वे श्रीसूर्यनारायण हमें वाणी प्रदान करें अर्थात् ग्रंथ बनाने के लिये बुद्धि दें ॥ १ ॥

ग्रन्थकारप्रतिज्ञा ।

भूयोभिः पटुबुद्धिभिः पटुधियां होराफलज्ञप्तये
शब्दन्यायसमन्वितेषु बहुशः शास्त्रेषु दृष्टेष्वपि ।
होरातन्त्रमहार्णवप्रतरणे भग्नोद्यमानामहं
स्वल्पं वृत्तविचित्रमर्थबहुलं शास्त्रप्लवं प्रारभे ॥ २ ॥

दो० बुधिमानन को होय जेहि, होराफल को ज्ञान ।
शब्दविवेक समेत बहु, शास्त्र रचे सज्ञान ॥
तिन्हें महार्णव जानिकै, जिन्हें न उतरन चाव ।
तिन्हें स्वल्प बहुलार्थ यह, शास्त्र अरंभौ नाव ॥

बहुत से चतुर बुद्धिवालों द्वारा दिखाये हुए शब्द (व्याकरण) और न्याय से युक्त अनेक शास्त्रों में प्रसृत बुद्धि तथा होरातंत्ररूपी महासमुद्र के तरने में भग्न उद्यमवालों को होराशास्त्र का फल बताने के लिये, थोड़े तथा विचित्र छंदों से युक्त, बहु अर्थवाले नावरूप शास्त्र का मैं (वराहमिहिर) प्रारंभ करता हूँ ॥ २ ॥

होराशब्दार्थनिर्णय ।

होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके
वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात् ।
कर्म्मार्जितं पूर्वभवे सदादि
यत्तस्य पंक्ति समभिव्यनक्ति ॥ ३ ॥

दो० अहोरात्र के भेद को, होरा कह कोइ लोग ।
आदिम अंतिम वर्ण को, करिकै यहाँ वियोग ॥
पूर्वजन्म के कर्म जे, शुभ अरु अशुभ मिलान ।
तिन सबके सब फलन को, सोई करत बखान ॥

कोई एक आचार्य अहोरात्र इस शब्द के पूर्व (अ) और पर (त्र) इन दोनों का लोप करके जो शेष रहा उसे होरा कहते हैं। दिन रात्रि में होने के कारण लग्न का होरा नाम है । वह होरा पूर्व जन्म में किये हुए शुभ, अशुभ और मिले हुए कर्मों के फल को प्रकट करता है ॥ ३ ॥

कालनरांग ।

कालाङ्गानि वराङ्गमाननमुरो हृत्कोडवासो भृतो
बस्तिर्व्यञ्जनमूरुजानुयुगले जङ्घे ततोऽङ्घ्रिद्वयम् ।
मेषाश्विप्रथमा नवर्क्षचरणाश्चक्रस्थिता राशयो
राशिक्षेत्रगृहर्क्षभानि भवनं चैकार्थसम्प्रत्ययाः ॥ ४ ॥

सवैया ।

शीर्षहि मेष मुखे वृष दै अरु वक्ष बिषे धरिकै जु मिथुन्नहिं ।
जानि कुलीर हिये तु दिये उदरे करि सिंह कटी करु कन्यहि ॥
नाभितले धरिकै जु तुला अलि लिंग बिषे उरु में धरु धन्नहिं ।
जानुहि जानि धरै मकरै अरु जंघम कुम्भ पदे करु मिन्नहिं ॥

दो० जन्मकाल यहि भाँति से, जानि काल के अंग ।
होइ शुभाशुभ जहँ तहाँ, कॅहहु पुष्ट अरु भंग ।।

बालकादि के जन्मकाल में नराकार कालचक्र बनाकर, उसके शिर में मेष, मुख में वृष, छाती में मिथुन, हृदय में कर्क, पेट में सिंह, करिहाँव में कन्या, नाभि के नीचे तुला, लिंग में वृश्चिक, पैरों की सन्धि में धन, पैरों की गाँठियों में मकर, फीलियों में कुम्भ और पैरों में मीन; इस रीति से सब अंगों में सब राशियों का न्यास करके उन्हें कालांग माने। प्रयोजन यह है कि जिस राशि में शुभ अथवा अशुभ ग्रह स्थित हो, वह राशि कालचक्र में जिस अंग पर स्थित हो, उस अंग को पुष्ट अथवा क्षीण जाने।

अथ मेषादि राशियों में नक्षत्र-चरण व पर्याय-ज्ञान ।

दो० मेषादिक वे राशि सब, अश्विन्यादि नक्षत्र ।
नव नव चरण प्रमाण के, चक्र स्थिति है तत्र ।।
क्षेत्र, राशि, गृह, ऋक्ष, भा, भवन यही एकार्थ ।
राशिन के पर्याय हैं, इनकर आगे अर्थ ।।

वही कालांगभूत मेषादि राशियाँ अश्विन्यादि नक्षत्रों के नव-नव चरण प्रमाणवाले हैं तथा राशि, क्षेत्र, गृह, ऋक्ष, भ और भवन ये छह राशियों के नाम हैं ।। ४ ।।

राशिस्वरूप ।

मत्स्यौ घटी नृमिथुनं सगदं सवीणं
चापी नरोऽश्वजघनो मकरो मृगास्यः ।
तौली सशस्यदहना प्लवगा च कन्या
शेषाः स्वनामसदृशाः खचराश्च सर्वे ।। ५ ।।

परस्पर मुख में पुच्छ, पुच्छ में मुख मिलाये हुए, दो मछलियों के सदृश मीनराशि है; काँधे पर घड़ा धरे हुए पुरुष के सदृश कुम्भराशि है; वीणा धारण किये स्त्री और गदा धारण किये हुए पुरुष के

सदृश मिथुनराशि है; धनुष धारण किये और घोड़े के सदृश जघन-वाले पुरुष के सदृश धन है; हरिण के मुख के सदृश मुखवाला मकर है; तराजू लिये हुए पुरुष के समान तुला है; एक हाथ में अग्नि और दूसरे हाथ में अन्नवृक्ष लिये, नाव में बैठी हुई कन्या के सदृश कन्याराशि है और शेष राशियाँ अपने नाम के समान रूपवाली हैं अर्थात् मेषराशि भेड़ के, वृष बैल के, कर्क गेंगट के, सिंह शेर के और वृश्चिक बिच्छू के समान रूपवाली होती हैं ॥५॥

राशिस्वामी ।

क्षितिजसितज्ञचन्द्ररविसौम्यसितावनिजाः
सुरगुरुमन्दसौरिगुरवश्च गृहांशकपाः ।
अजमृगतौलिचन्द्रभवनादिनवांशविधि-
र्भवनसमांशकाधिपतयः स्वगृहात्क्रमशः ॥ ६ ॥

दो० मेषादिक के ईश ये, भौम, शुक्र, बुध, चन्द्र ।
रवि, बुध, भार्गव, भौम, गुरु, शनि, शनि, गुरू गृहेन्द्र ॥

मंगल, शुक्र, बुध, चन्द्रमा, सूर्य, बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति, शनैश्चर, शनैश्चर और बृहस्पति ये ग्रह क्रम से मेषादि राशियों के और नवांशों के स्वामी हैं अर्थात् मेष के मंगल, वृष के शुक्र, मिथुन के बुध, कर्क के चन्द्रमा, सिंह के सूर्य, कन्या के बुध, तुला के शुक्र, वृश्चिक के मंगल, धन के बृहस्पति, मकर के शनैश्चर, कुंभ के शनैश्चर और मीन के बृहस्पति स्वामी हैं; इन राशियों के नवांशों तथा द्वादशांशों के भी यही सब ग्रह क्रम से स्वामी हैं ।

राशिस्वामिचक्र ।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ,	स्वामिनः

नवांशविधि ।

दो० मेष, मकर, तुल, कर्क के, क्रम से होयँ नवांश ।

मेष, मकर, तुला और कर्क इन राशियों से आरम्भ करके नवांश होते हैं अर्थात् मेष राशि में पहिला मेष का, दूसरा वृष का, तीसरा

मिथुन का इत्यादि । वृष राशि में पहिला मकर का नवांश, दूसरा कुम्भ का, तीसरा मीन का, चौथा मेष का इत्यादि । मिथुन राशि में पहिला तुला का नवांश, दूसरा वृश्चिक का, तीसरा धन का इत्यादि । कर्क राशि में पहिला कर्क का, दूसरा सिंह का, तीसरा कन्या का इत्यादि । सिंह राशि में पहिला मेष का, दूसरा वृष का इत्यादि इसी प्रकार सब राशियों में नवांशों की विधि जानना चाहिये, राशि के नवें भाग को नवांश कहते हैं ।

यथा—एक राशि में तीस अंश होते हैं, उन अंशों में नव का भाग देने से तीन अंश लब्ध मिले और तीन शेष रहे, उनको साठ से गुण कर उसमें नव का भाग देने से बीस लब्ध मिले, वे कला हुई इसलिये तीन अंश और बीस कला का एक नवांश हुआ ॥

नवांशचक्र ।

अंश	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
३।२०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	मं०	तु०	क०
६।४०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	बृ०	कुं०	वृ०	सिं०
१०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०
१३।२०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०
१६।४०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०
२०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०
२३।२०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०
२६।४०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	बृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०
३०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०

द्वादशांशविधि ।

मेषादिक में प्रथम ही अपनो द्वादश अंश ॥

अपने ही क्रम से सब राशियों के द्वादशांश होते हैं । यथा—मेष राशि में पहिला मेष का द्वादशांश, दूसरा वृष का, तीसरा मिथुन का इत्यादि और वृष राशि में पहिला वृष का, दूसरा मिथुन का इत्यादि और मिथुन राशि में पहिला मिथुन का दूसरा कर्क का इत्यादि । इसी प्रकार सब राशियों में सब राशियों के द्वादशांश होते हैं । राशि के बारहवें भाग को द्वादशांश कहते हैं । उक्त रीति से वह दो अंश और तीस कला का एक होता है ॥ ६ ॥

द्वादशांशचक्र ।

अंश	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
२।३०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
५	बृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	मे०
७।३०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०
१०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०
१२।३०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०
१५	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०
१७।३०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०
२०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०
२२।३०	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०
२५	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०
२७।३०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०
३०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०

कुजरविजगुरुज्ञशुक्रभागाः
पवनसमीरणकौर्प्यजूकलेयाः ।
अयुजि युजि तु भे विपर्ययस्थाः
शशिभवनालिझषान्तमृक्षसन्धिः ॥ ७ ॥

त्रिंशांशविधि ।

विषम राशियों में मंगल, शनैश्चर, बृहस्पति, बुध और शुक्र ये ग्रह क्रम से पाँच, पाँच, आठ, सात और पाँच इन अंशों के स्वामी होते हैं और सम राशियों में इनसे विपर्यय अर्थात् शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर तथा मंगल ये ग्रह क्रम से पाँच, सात, आठ, पाँच, पाँच इन अंशों के स्वामी होते हैं । यथा—मेष के पाँच अंश तक मंगल, छठे अंश से लेकर दश अंश तक शनैश्चर, ग्यारहवें अंश से लेकर अठारह अंश तक बृहस्पति, उन्नीसवें अंश से लेकर पच्चीस अंश तक बुध और छब्बीसवें अंश से लेकर तीस अंश तक शुक्र स्वामी होता है । तथा वृषराशि के पहिले पाँच अंश तक शुक्र, छठे अंश से लेकर बारह अंश तक बुध, तेरहवें अंश से लेकर बीस अंश तक बृहस्पति, इक्कीसवें अंश से लेकर पच्चीस अंश तक शनैश्चर और छब्बीसवें अंश से लेकर तीस अंश तक मंगल स्वामी होता है ॥

त्रिंशांशचक्र ।

ग्रह	मं.	श.	बृ०	बु.	शु.	स्वामी
विषम राशि में	५	५	८	७	५	अंश ३०
ग्रह	शु.	बु.	बृ.	श.	मं.	स्वामी
समराशि में	५	७	८	५	५	अंश

राशि-संधि ।

कर्क, वृश्चिक और मीन इन राशियों के नवें नवांश ऋक्ष

(नक्षत्र) सन्धि हैं। इनको गंडान्त भी कहते हैं। मेष, सिंह, धन इन तीनों राशियों के पहिले नवांश ऋक्ष-संधि हैं, इनको भी गंडान्त कहते हैं। इसी से अश्विनी, मघा, मूल इन नक्षत्रों का प्रथम भाग तथा श्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती इन नक्षत्रों का अन्तिम भाग जन्मकाल में निषिद्ध कहा जाता है ॥ ७ ॥

क्रिय-तावुरि-जितुम-कुलीर-लेय-पाथोन-जूक-कौर्प्याख्याः ।
तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चान्त्यभञ्चेत्थम् ॥ ८ ॥

मेषादि राशियों के नामान्तर ।

क्रिय, तावुरि, जितुम, कुलीर, लेय, पाथोन, जूक, कौर्प्य, तौक्षिक, आकोकेर, हृद्रोग, अन्त्यभ ये क्रम से मेषादि राशियों के दूसरे नाम हैं। अर्थात् मेष का क्रिय, वृष का तावुरि, मिथुन का जितुम, कर्क का कुलीर, सिंह का लेय, कन्या का पाथोन, तुला का जूक, वृश्चिक का कौर्प्य, धन का तौक्षिक, मकर का आकोकेर, कुम्भ का हृद्रोग और मीन का अन्त्यभ नाम है ॥ ८ ॥

द्रेष्काणहोरानवभागसंज्ञा-
स्त्रिशांशकद्वादशसंज्ञिताश्च ।
क्षेत्रं च यद्यस्य स तस्य वर्गो
होरेति लग्नं भवनस्य चार्द्धम् ॥ ९ ॥

षड्वर्ग ।

जिस ग्रह की जो राशि कही है वह राशि, उसका द्रेष्काण, होरा, नवांश, त्रिशांश और द्वादशांश ये सब उस ग्रह के वर्ग हैं। इन्हीं को षड्वर्ग भी कहते हैं परन्तु यहाँ इतना भेद है कि होरा और त्रिशांश ये राशियों के नहीं होते हैं सो आगे कहेंगे। राशि के आधे भाग तथा लग्न को होरा कहते हैं ॥ ९ ॥

गोजाश्विकर्किमिथुनास्समृगा निशाख्याः
पृष्ठोदया विमिथुनाः कथितास्त एव ।

शीर्षोदया दिनबलाश्च भवन्ति शेषा
लग्नं समेत्युभयतः पृथुरोमयुग्मम् ॥ १० ॥

मेषादि राशियों की अहोरात्रबल, पृष्ठोदय और शीर्षोदय संज्ञा ।

मेष, वृष, धन, कर्क और मकर इन राशियों की रात्रिबल संज्ञा तथा पृष्ठोदय संज्ञा है । सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुम्भ इन राशियों की दिनबल संज्ञा तथा शीर्षोदय संज्ञा है । मिथुन राशि की शीर्षोदय और रात्रिबलसंज्ञा है। मीन राशि की उभयोदय संज्ञा तथा दिनरात्रिबल संज्ञा है। पृष्ठोदय और शीर्षोदय अर्थात् पीठ तथा शिर से उदय होनेवाले एवं दिन और रात्रिबल अर्थात् दिन में तथा रात्रि में बली होते हैं ॥ १० ॥

पृष्ठोदयादिचक्र ।

मे.	वृ.	ध.	क.	म.	रात्रिबली पृष्ठोदय
सिं.	कं.	तु.	वृ.	कुं.	दिनबली शीर्षोदय
		मि.			रात्रिबली शीर्षोदय
		मी.			दिनरात्रिबली उभयोदय

क्रूरस्सौम्यः पुरुषवनिते ते चरागद्विदेहाः
प्रागादीशाः क्रियवृषनृयुक्कर्कटास्सत्रिकोणाः ।
मार्तण्डेन्द्वोरयुजि समभे चन्द्रभान्वोश्च होरे
द्रेष्काणाः स्युः स्वभवनसुतत्रित्रिकोणाधिपानाम् ॥११॥

राशियों की क्रूर-सौम्य, पुरुष-स्त्री, चर-स्थिर-द्विस्वभाव संज्ञा ।

मेषादि राशियाँ क्रम से क्रूर–सौम्य; पुरुष-स्त्री; चर, स्थिर और द्विस्वभाव संज्ञक होते हैं अर्थात् मेषराशि की क्रूर, पुरुष और चर

संज्ञा है। वृष की सौम्य, स्त्री तथा स्थिर संज्ञा है। मिथुन की क्रूर, पुरुष और द्विस्वभाव संज्ञा है। इसी तरह राशियों की संज्ञाओं को जानना चाहिए। चक्र में भी स्पष्ट लिखी हैं।

क्रूर-सौम्य, पुरुष-स्त्री, चर-स्थित-द्विस्वभाव चक्र।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशि
क्रू.	सौ.	क्रू.	सौ.	क्रू.	सौ.	क्रू.	सौ.	क्रू.	सौ.	क्रू.	सौ.	संज्ञा
पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	पु.	स्त्री.	संज्ञा
च.	स्थि.	द्वि.	च.	स्थि.	द्वि.	च.	स्थि.	द्वि.	च.	स्थि.	द्वि.	संज्ञा

दिगीशराशियाँ।

मेष, वृष, मिथुन और कर्क ये अपने पंचम तथा नवम के सहित पूर्वादि दिशाओं के स्वामी हैं, अर्थात् मेष, सिंह और धन ये पूर्व दिशा के तथा वृष, कन्या और मकर ये दक्षिण दिशा के एवं मिथुन, तुला और कुम्भ ये पश्चिम दिशा के तथा कर्क, वृश्चिक और मीन उत्तर दिशा के स्वामी हैं।

दिगीशचक्र।

मे.	सिं.	ध.	पूर्वदिशा के ईश
वृ.	कं.	म.	दक्षिण दिशा के ईश
मि.	तु.	कुं.	पश्चिम दिशा के ईश
क.	वृ.	मी.	उत्तर दिशा के ईश

होरा।

एक राशि में पन्द्रह-पन्द्रह अंशों के दो भाग होते हैं। उनमें से

प्रत्येक को होरा कहते हैं। विषम राशियों में पहिले होरा का सूर्य और दूसरे होरा का चन्द्रमा स्वामी है तथा सम राशियों में पहिले होरा का चन्द्रमा और दूसरे होरा का सूर्य स्वामी है।

होराचक्र।

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्रह	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.
अंश	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
ग्रह	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.
अंश	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०

द्रेष्काण।

एक राशि में दश-दश अंशों के तीन भाग होते हैं। उनमें से प्रत्येक को द्रेष्काण कहते हैं। पहिला द्रेष्काण उसी राशि का और दूसरा द्रेष्काण उस राशि से पंचम राशि का तथा तीसरा द्रेष्काण नवम राशि का होता है। यथा—मेष राशि में पहिला द्रेष्काण मेष का, दूसरा सिंह का और तीसरा धन का तथा वृष राशि में पहिला वृष का, दूसरा कन्या का और तीसरा मकर का होता है।। इसी प्रकार अन्य राशियों में जानना ॥ ११ ॥

द्रेष्काणचक्र।

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
अंश	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
राशि	सि.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	मे.	वृ.	मि.	क.
अंश	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०
राशि	ध.	म.	कुं.	मी.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.
अंश	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०

केचित्तु होरां प्रथमां भपस्य
वाञ्छन्ति लाभाधिपतेर्द्वितीयाम् ।
द्रेष्काणसंज्ञामपि वर्णयन्ति
स्वद्वादशैकादशराशिपानाम् ॥ १२ ॥

अन्यमत से होरा ।

कोई आचार्य कहते हैं कि पहिले होरा का स्वामी राशीश और दूसरे होरा का स्वामी ग्यारहवीं राशि का ईश होता है । यथा- मेष राशि में पहिला होरा मंगल का और दूसरा शनैश्चर का होता है । इसी प्रकार वृष में पहिला होरा शुक्र का और दूसरा बृहस्पति का होता है ॥

अन्यमत से होराचक्र ।

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्रह	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.
अंश	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
ग्रह	श.	बृ.	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.
अंश	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०

अन्यमत से द्रेष्काण ।

पहिले द्रेष्काण का स्वामी राशीश और दूसरे द्रेष्काण का स्वामी बारहवीं राशि का ईश तथा तीसरे द्रेष्काण का स्वामी ग्यारहवीं राशि का ईश होता है । यथा—मेषराशि में प्रथम दश अंश तक का मंगल, फिर ग्यारह से लेकर बीस अंश तक का बृहस्पति और इक्कीस से लेकर तीस अंश तक का शनैश्चर स्वामी होता है इत्यादि ॥१२॥

द्रेष्काणचक्र ।

ग्रह	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्रह	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.
अंश	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
ग्रह	बृ.	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.
अंश	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२०
ग्रह	श.	बृ.	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.
अंश	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०

अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा
झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः ।
दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशै-
स्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः ॥ १३ ॥

ग्रहोच्च-नीचराशि-अंश ।

मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन और तुला ये राशियाँ क्रम से दश, तीन, अट्ठाइस, पन्द्रह, पाँच, सत्ताइस और बीस अंशों करके सूर्यादि ग्रहों के उच्चस्थान हैं और इन्हीं राशियों से सातवीं-सातवीं राशि क्रम से उक्तांशों करके सूर्यादि ग्रहों का नीच स्थान है। सूर्य मेष के दश अंश तक उच्च और तुला के दश अंश तक नीच है। चन्द्रमा वृष के तीन अंश तक उच्च और वृश्चिक के तीन अंश तक नीच है । । मङ्गल मकर के अट्ठाइस अंश तक उच्च और कर्क के अट्ठाइस अंश तक नीच है। बुध कन्या के पन्द्रह अंश तक उच्च और मीन के पन्द्रह अंश तक नीच है। बृहस्पति कर्क के पाँच अंश तक उच्च और मकर के पाँच अंश तक नीच है। शुक्र मीन के सत्ताइस अंश तक उच्च और कन्या के सत्ताइस अंश तक नीच है। शनैश्चर तुला के बीस अंश तक उच्च और मेष के बीस अंश तक नीच है॥ १३ ॥

ग्रहोच्च-नीचचक ।

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
राशि	मे.	वृ.	मं.	कं.	क.	मी.	तु.	उच्च
अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	
राशि	तु.	वृ.	कं.	मी.	म.	कं.	मे.	नीच
अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	

वर्गोत्तमाश्चरगृहादिषु पूर्वमध्य-
पर्यन्तगाः शुभफला नवभागसंज्ञाः ।

सिंहो वृषः प्रथमषष्ठहयाङ्गतौलि-
कुम्भास्त्रिकोणभवनानि भवन्ति सूर्यात् ॥ १४ ॥

वर्गोत्तमसंज्ञक नवांश ।

चर, स्थिर और द्विस्वभाव राशियों में पहिला, पाँचवाँ और नवाँ नवांश क्रम से वर्गोत्तम संज्ञक है अर्थात् मेष, कर्क, तुला तथा मकर इन राशियों में पहिला नवांश; वृष, सिंह, वृश्चिक और कुंभ इन राशियों में पाँचवाँ नवांश; तथा मिथुन, कन्या, धन और मीन इन राशियों में नवाँ नवांश, वर्गोत्तम संज्ञक है। वह जन्मादि काल में शुभ फल देनेवाला है।

वर्गोत्तमचक्र ।

मे.	क.	तु.	म.	वृ.	सि.	वृ.	कुं.	मि.	कं.	ध.	मी.	राशि
१	१	१	१	५	५	५	५	९	९	९	९	वर्गोत्तमनवांश

सूर्यादित्रिकोण ।

सिंह, वृष, मेष, कन्या, धन, तुला और कुम्भ ये राशियाँ क्रम से सूर्यादि ग्रहों के मूलत्रिकोण हैं अर्थात् सूर्य का सिंह, चन्द्रमा का वृष, मङ्गल का मेष, बुध का कन्या, बृहस्पति का धन, शुक्र का तुला और शनैश्चर का कुम्भ त्रिकोणस्थान है।

त्रिकोणचक्र ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
सिंह	वृष	मेष	कन्या	धन	तुला	कुंभ	त्रिकोण राशि

होरादयस्तनुकुटुम्बसहोत्थबन्धु-
पुत्रारिपत्निमरणानि शुभास्पदायाः ।
रिष्फाख्यमित्युपचयान्यरिकर्मलाभ-
दुश्चिक्यसञ्ज्ञितगृहाणि न नित्यमेके ॥ १५ ॥

लग्नादि के नाम ।

तनु, कुटुम्ब, सहोत्थ, बन्धु, पुत्र, अरि, पत्नी, मरण, शुभ,

आस्पद, आय और रिष्फ ये सब क्रम से लग्नादि बारह भावों के नाम होते हैं अर्थात् लग्न का तनु, दूसरे का कुटुम्ब, तीसरे का सहोत्थ, चौथे का बन्धु, पाँचवें का पुत्र, छठे का अरि, सातवें का पत्नी, आठवें का मरण, नवें का शुभ, दशवें का आस्पद, ग्यारहवें का आय और बारहवें का रिष्फ नाम है ।

भावनामचक्र ।

१	२	३	४	५	६	भाव
तनु	कुटुम्ब	सहोत्थ	बन्धु	पुत्र	अरि	नाम
७	८	९	१०	११	१२	भाव
पत्नी	मरण	शुभ	आस्पद	आय	रिष्फ	नाम

उपचय-अपचयसंज्ञा ।

छठवाँ, दशवाँ, ग्यारहवाँ और तीसरा इन भावों का उपचय नाम है परन्तु कोई आचार्य उपचयसंज्ञा को अनित्य कहते हैं । उनका अभिप्राय यह है कि जो ये उक्त भाव पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हों अथवा पापग्रह इनके स्वामी हों और अपने स्वामी के शत्रु से युक्त तथा दृष्ट हों, तो उपचयसंज्ञक नहीं होते हैं । इससे विपरीत हों तो उपचयसंज्ञक* होते हैं और शेष अपचयसंज्ञक होते हैं ।।१६।।

उपचय-अपचयसंज्ञाचक्र ।

६	१०	११	३					उपचय
१	२	४	५	७	८	९	१२	अपचय

कल्पस्वविक्रमगृहप्रतिभाक्षतानि
चित्तोत्थरन्ध्रगुरुमानभवव्ययानि ।।
लग्नाच्चतुर्थनिधने चतुरस्रसंज्ञे
द्यूनं च सप्तमगृहं दशमं खमाज्ञा ।। १६ ।।

*यथा—"अथोपचयसंज्ञा स्यात्त्रिलाभरिपुकर्मणाम् ।
न चेद्भवन्ति दृष्टास्ते पापस्वस्वामिशत्रुभिः ।।" (गर्गवाक्यम्)

लग्नादि के नामान्तर ।

कल्प, स्व, विक्रम, गृह, प्रतिभा, क्षत, चित्तोत्थ, रन्ध्र, गुरु, मान, भव और व्यय ये भी क्रम से लग्नादि बारह भावों के नाम हैं अर्थात् लग्न का कल्प, दूसरे का स्व, तीसरे का विक्रम, चौथे का गृह, पाँचवें का प्रतिभा, छठे का क्षत, सातवें का चित्तोत्थ, आठवें का रन्ध्र, नवें का गुरु, दशवें का मान, ग्यारहवें का भव और बारहवें का व्यय नाम है। लग्न से चौथे और आठवें का चतुरस्र तथा सातवें भाव का द्यून और दशवें भाव का ख और आज्ञा नाम है ।। १६ ।।

नामान्तर चक्र ।

१	२	३	४	५	६	भाव
कल्प	स्व	विक्रम	गृह	प्रतिभा	क्षत	नाम
७	८	९	१०	११	१२	भाव
चित्तोत्थ	रन्ध्र	गुरु	मान	भव	व्यय	नाम

नामान्तर चक्र ।

४	७	८	१०	भाव
चतुरस्र	द्यून	चतुरस्र	ख, आज्ञा	नाम

कण्टककेन्द्रचतुष्टयसंज्ञाः
सप्तमलग्नचतुर्थखभानाम् ।
तेषु यथाभिहितेषु बलाढ्याः
कीटनराम्बुचराः पशवश्च ।। १७ ।।

केन्द्रादि संज्ञा ।

सातवाँ, लग्न, चौथा और दशवाँ इन भावों के कण्टक, केन्द्र और चतुष्टय नाम हैं। इन चारों स्थानों में क्रम से कीटराशि नर

राशि, अम्बुचरराशि और पशुराशि ये बली होते हैं अर्थात् वृश्चिक राशि सातवें स्थान में और मिथुन, तुला, कन्या, कुम्भ और धन का पूर्वार्ध ये लग्न स्थान में तथा कर्क, मीन और मकर का परार्ध ये चतुर्थ स्थान में एवं मेष, वृष, सिंह और धन का परार्ध और मकर का पूर्वार्ध ये दशमस्थान में बली होते हैं ।। १७ ।।

केन्द्रात्परं पणफरं परतश्च सर्व-
मापोक्लिमं हिबुकमम्बु सुखञ्च वेश्म ।
यामित्रमस्तभवनं सुतभं त्रिकोणं
मेषूरणं दशममत्र च कर्म विन्द्यात् ।। १८ ।।

केन्द्रस्थान से पर अर्थात् दूसरा, पाँचवाँ, आठवाँ और ग्यारहवाँ इन चारों भावों का पणफर नाम है और पणफर से पर अर्थात् तीसरा, छठा, नवाँ और बारहवाँ इन चारों भावों का आपोक्लिम नाम है तथा लग्न से चौथे स्थान के हिबुक, अम्बु और सुख ये तीन नाम हैं और सातवें स्थान का यामित्र, पंचम स्थान का त्रिकोण तथा दशम स्थान के मेषूरण और कर्म ये दो नाम हैं ।। १८ ।।

भावनामचक्र

भाव	७	१	४	१०	कण्टक	केन्द्र	चतुष्टय	नाम
भाव	२	५	८	११	पणफर			नाम
भाव	३	६	९	१२	आपोक्लिम			नाम
भाव	४				हिबुक	अम्बु	सुख	नाम
भाव	७				यामित्र			नाम
भाव	५				त्रिकोण			नाम
भाव	१०				मेषूरण	कर्म		नाम

होरा स्वामिगुरुज्ञवीक्षितयुता नान्यैश्च वीर्य्योत्कटा
केन्द्रस्था द्विपदादयोऽह्नि निशि च प्राप्ते च सन्ध्याद्वये ।
पूर्वार्द्धे विषयादयः कृतगुणा मानं प्रतीपं च तद्
दुश्चिक्यं सहजं तपश्च नवमं त्र्याद्यं त्रिकोणं च तत् ॥ १९ ॥

होरादिबल ।

अपने स्वामी, बृहस्पति और बुध इन ग्रहों से देखा हुआ तथा इनसे युक्त लग्न बली होता है। परन्तु जो अन्य ग्रहों से न देखा जाता हो और न युक्त हो और जो मिले हुए ग्रहों करके दृष्ट या संयुक्त हो तो मध्यबल होता है तथा उक्त ग्रहों करके युक्त और दृष्ट न हो तो निर्बल होता है ।

केन्द्रादिबल ।

केन्द्र में स्थित राशियाँ पूर्ण, पणफर में स्थित मध्य और आपोक्लिम में स्थित राशियाँ हीनबल होती हैं। अर्थात् लग्न चतुर्थ सप्तम और दशम इन स्थानों में जो राशियाँ स्थित रहती हैं वे पूर्ण बली होती हैं। द्वितीय, पंचम, अष्टम तथा ग्यारहवें इन स्थानों में स्थित राशियाँ मध्यबली होती हैं एवं तृतीय, षष्ठ, नवम और बारहवें इन स्थानों में स्थित राशियाँ बलहीन होती हैं ॥

केन्द्रादिबल चक्र ।

१	४	७	१०	पूर्णबल
२	५	८	११	मध्यबल
३	६	९	१२	हीनबल

लग्नबल ।

द्विपद, चतुष्पद और कीट ये लग्न क्रम से दिन, रात्रि और दोनों सन्ध्याओं में बली होते हैं अर्थात् मिथुन, तुला, कुम्भ, कन्या और धन का पूर्वार्ध ये दिन में बली होते हैं। मेष, वृष, सिंह, मकर

का पूर्वार्ध और धन का परार्ध ये रात्रि में बली होते हैं। वृश्चिक, मीन, कर्क और मकर का परार्ध ये सन्ध्या और प्रातःकाल में बली होते हैं।

लग्नबल चक्र ।

मिथुन	तुला	कुंभ	कन्या	पूर्वार्ध धन	दिनबली
मेष	वृष	सिंह	पूर्वार्ध मकर	परार्ध धन	रात्रिबली
वृश्चिक	मीन	कर्क	परार्ध मकर		प्रातःसन्ध्या बली

राशिभाग ।

मेषादि पूर्वार्ध अर्थात् छह राशियों का क्रम से पाँच, छः, सात, आठ, नव और दश इन संख्याओं का चतुर्गुण मान है और इन्हीं का उलटा तुलादि परार्ध छह राशियों का मान है अर्थात् मेष का २०, वृष का २४, मिथुन का २८, कर्क का ३२, सिंह का ३६, कन्या का ४० तथा तुला का ४०, वृश्चिक का ३६, धन का ३२, मकर का २८, कुम्भ का २४ और मीन का २० भाग मान है। यद्यपि यह मान सब देशों में बराबर नहीं है तथापि राशियों के ह्रस्व, मध्य और दीर्घ इन भेदों के जानने के लिये कह दिया है। यही उक्त संख्या राशियों में घटित होने से भाग कही जाती है और काल में दश गुण करने से षट्क कही जाती है। वह षट्क पल के बराबर है।

राशिभाग चक्र ।

मेष	वृष	मिथु.	कर्क	सिंह	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशि
२०	२४	२८	३२	३६	४०	४०	३६	३२	२८	२४	२०	भाग

तीसरे स्थान का दुश्चिक्य तथा नवें स्थान के तप, त्रित्रिकोण और त्रिकोण नाम है ॥ १९ ॥

रक्तः श्वेतः शुकतनुनिभः पाटलो धूम्रपाण्डु-
श्चित्रः कृष्णः कनकसदृशः पिङ्गलः कर्बुरश्च ।

बभ्रुः स्वच्छः प्रथमभवनाद्येषु वर्णाः प्लवत्वं

स्वाम्याशाख्यं दिनकरयुताद्भाद् द्वितीयं च वेशिः ॥ २० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके राशिभेदाध्यायः प्रथमः ॥१॥

राशिस्वरूप ।

मेषराशि लाल, वृष श्वेत, मिथुन हरा, कर्क गुलाबी, सिंह पीलाधूसर रङ्ग, कन्या अनेक रङ्ग, तुला काला, वृश्चिक सोने के रङ्ग, धन पीला, मकर लाल-श्वेत, कुम्भ नकुल (नेउला) के रङ्ग का और मीन मछली के रङ्ग का होता है तथा जिस राशि के स्वामी की जो दिशा है उस राशि की भी वही दिशा प्लव (नीची) होती है और सूर्य जिस स्थान में स्थित हों उससे दूसरे स्थान का वेशि नाम है ॥ २० ॥

राशिस्वरूप चक्र ।

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	राशि
लाल	श्वेत	हरा	गुलाबी	पीत-श्वेत	अ. व.	वर्ण
तुला	वृश्चिक	धन	मकर	कुम्भ	मीन	राशि
काला	कन. स.	पीला	श्वेत रंग	नेवला स.	मछली	वर्ण

राशिप्लव चक्र ।

राशि	१ ८	२ ७	३ ६	४	९ १२	१० ११	५
राशिस्वा.	मं.	शु.	बु.	चं.	वृ.	श	सू.
प्लवदिशा	दक्षिण	अग्नि	उत्तर	वायव्य	ऐशान्य	पश्चिम	पूर्व

दो० श्रीवराहकृतजातके, भाव राशि संज्ञाय ॥

रामरत्नकृत भाषा प्रथम समाप्ताध्याय ॥ १ ॥

अथ ग्रहभेदाध्यायो द्वितीयः ।

कालात्मादि संज्ञा ।

कालात्मा दिनकृन्मनश्च हिमगुः सत्त्वं कुजो ज्ञो वचो
जीवो ज्ञानसुखे सितश्च मदनो दुःखं दिनेशात्मजः ।
राजानौ रविशीतगू क्षितिसुतो नेता कुमारो बुधः
सूरिर्दानवपूजितश्च सचिवः प्रेष्यः सहस्रांशुजः ॥ १ ॥

दो० सूर्य आत्मा, चन्द्र मन, सत्त्व भौम, बुध बानि ।
गुरू ज्ञान सुख, काम भृगु, शनि दुखकारक जानि ॥
जन्मकाल बालादि के, जो ग्रह जैसा पाइ ।
ताहि थलहि तैसो कहै, शुभ अरु अशुभ मिलाइ ॥

काल का आत्मा सूर्य, मन चन्द्रमा, सत्त्व अर्थात् धैर्य मंगल, वाणी बुध, ज्ञान और सुख बृहस्पति, काम शुक्र तथा दुःख शनैश्चर है । प्रयोजन यह है कि जो ग्रह निर्बल और पीड़ित होकर जिस स्थान में स्थित हो, बालकादि के उस स्थल को खिन्न जाने और जो ग्रह बली तथा सुखी हो उस स्थल को पुष्टादि जाने ।

दो० सूर्य चन्द्र राजा भौम, नायक, बुध युवराज ।
सचिव बृहस्पति शुक्र द्वौ, शनिहि दास को काज ॥

सूर्य और चन्द्रमा राजा हैं, मङ्गल नायक है, बुध युवराज है, बृहस्पति और शुक्र मंत्री हैं तथा शनैश्चर दास है ॥ १ ॥

हेलिस्सूर्य्यश्चन्द्रमाश्शीतरश्मि-
र्हेम्नो विज्ज्ञो बोधनश्चेन्दुपुत्रः ।
आरो वक्रः क्रूरदृक् चावनेयः
कोणो मन्दः सूर्यपुत्रोऽसितश्च ॥ २ ॥
जीवोङ्गिरास्सुरगुरुर्वचसाम्पतीज्यौ
शुक्रो भृगुर्भृगुसुतस्सित आस्फुजिच्च ।

राहुस्तमोऽगुरसुरश्च शिखी च केतुः

पर्य्यायमन्यमुपलभ्य वदेच्च लोकात् ।। ३ ।।

ग्राहनामसंज्ञा-पर्याय ।

सूर्य का हेलि नाम है, चन्द्रमा का शीतरश्मि नाम है। बुध के हेम्न, वित्, ज्ञ और बोधन ये चार नाम हैं। मङ्गल के आर, वक्र, क्रूरदृक्, आवनेय और कोण ये पाँच नाम हैं। शनैश्चर के मन्द और असित ये दो नाम हैं ।। २ ।।

बृहस्पति के जीव, अंगिरा, सुरगुरु, वचसांपति और इज्य ये पाँच नाम हैं। शुक्र के भृगु, भृगुसुत, सित और आस्फुजित् ये चार नाम हैं। राहु के तम, अगु तथा असुर ये तीन नाम हैं। केतु का शिखी नाम है और बहुत से नाम लोक में प्रसिद्ध हैं उनको लोक से जानना चाहिए ।। ३ ।।

रक्तश्यामो भास्करो गौर इन्दु-

र्नात्युच्चाङ्गो रक्तगौरश्च वक्रः ।

दूर्वाश्यामो ज्ञो गुरुर्गौरगात्रः

श्यामश्शुक्रो भास्करिः कृष्णदेहः ।। ४ ।।

ग्रहों का वर्ण ।

थाड़ी लाली लिये श्यामवर्ण सूर्य, गौरवर्ण चन्द्रमा, थोड़ी लाली लिये गौरवर्ण और ठमकीले अंगवाला मङ्गल, दूब के सदृश श्यामवर्ण बुध, गौरवर्ण बृहस्पति, श्यामवर्ण शुक्र और काले वर्ण का शनैश्चर है ।। ४ ।।

वर्णास्ताम्रसितातिरक्तहरितव्यापीतचित्रासिता

वह्न्यम्बग्निजकेशवेंद्रशचिकाः सूर्यादिनाथाः क्रमात् ।

प्रागाद्या रविशुक्रलोहिततमः सौरीन्दुवित्सूरयः

क्षीणेन्द्वर्कमहीसुतार्कतनयाः पापा बुधस्तैर्युतः ।। ५ ।।

वर्णेश ग्रह ।

लालवर्ण का सूर्य, श्वेतवर्ण का चन्द्रमा, अतिशय लालवर्ण का मंगल, हरे वर्ण का बुध, पीतवर्ण का बृहस्पति, चित्रवर्ण का शुक्र और कृष्णवर्ण का शनैश्चर स्वामी है।

वर्णेशचक्र ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ईश
लाल	श्वेत	अतिलाल	हरा	पीत	चित्र	कृष्ण	वर्ण

ग्रहेश ।

सूर्य का अग्नि, चन्द्रमा का जल, मंगल का कार्त्तिकेय, बुध का विष्णु, बृहस्पति का इन्द्र, शुक्र का इन्द्राणी और शनैश्चर का ब्रह्मा स्वामी है ।

ग्रहेशचक्र ।

अग्नि	जल	कार्त्तिकेय	विष्णु	इन्द्र	इन्द्राणी	ब्रह्मा	ईश
सू.	च.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह

दिगीश ।

पूर्वादि दिशाओं के क्रम से सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनैश्चर, चन्द्रमा, बुध और बृहस्पति ये ग्रह स्वामी हैं अर्थात् पूर्व दिशा का सूर्य, अग्निकोण का शुक्र, दक्षिण का मंगल, नैर्ऋत्यकोण का राहु, पश्चिम का शनैश्चर, वायव्यकोण का चन्द्रमा, उत्तर का बुध और ईशानकोण का बृहस्पति स्वामी है ।

दिगीशचक्र ।

सूर्य	शुक्र	मंगल	राहु	शनि	चन्द्रमा	बुध	बृह.	ईश
पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	दिशा

पापग्रह ।

क्षीण चन्द्रमा, सूर्य, मंगल तथा शनैश्चर और इन ग्रहों से संयुक्त बुध ये पापग्रह हैं ।। ५ ।।

बुधसूर्यसुतौ नपुंसकाख्यौ
शशिशुक्रौ युवती नराश्च शेषाः ।
शिखिभूखपयोमरुद्गणानां
वशिनो भूमिसुतादयः क्रमेण ।। ६ ।।

ग्रहों की पुरुषादि संज्ञा ।

बुध तथा शनैश्चर ये नपुंसक हैं और शुक्र तथा चन्द्रमा स्त्री संज्ञक हैं और शेष अर्थात् सूर्य, बृहस्पति, मंगल ये पुरुष संज्ञक हैं।

पुरुषादिचक्र ।

सूर्य	मंगल	बृहस्पति	पुरुष
शुक्र	चन्द्रमा		स्त्री
बुध	शनैश्चर		नपुंसक

पञ्चभूतेश ।

अग्नि का स्वामी मंगल, पृथ्वी का स्वामी बुध, आकाश का स्वामी बृहस्पति, जल का स्वामी शुक्र और वायु का स्वामी शनैश्चर है ।। ६ ।।

पञ्चभूतेशचक्र ।

मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर	ईश
अग्नि	पृथ्वी	आकाश	जल	वायु	तत्त्व

विप्रादितश्शुक्रगुरू कुजार्कौ
शशी बुधश्चेत्यसितोऽन्त्यजानाम् ।

चन्द्रार्कजीवा ज्ञसितौ कुजार्कौ
यथाक्रमं सत्त्वरजस्तमांसि ।। ७ ।।

ब्राह्मणादिवर्णेश ।

शुक्र और बृहस्पति, मङ्गल और सूर्य, चन्द्रमा और बुध तथा शनैश्चर ये क्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन वर्णों के स्वामी हैं ।।

ब्राह्मणादिवर्णेशचक्र ।

ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	वर्ण
शुक्र बृहस्पति	मङ्गल सूर्य	चन्द्रमा बुध	शनैश्चर	ईश

गुणेश ।

चन्द्रमा, सूर्य और बृहस्पति ये सत्त्वगुण, बुध और शुक्र ये रजोगुण तथा मङ्गल और सूर्यपुत्र ये तमोगुण के स्वामी हैं ।।७।।

गुणेश चक्र ।

सत्त्व	रज	तम	गुण
चं.सू.बृ.	बुध शुक्र	मङ्गल श.	ईश

मधुपिङ्गलदृक्चतुरस्रतनुः
पित्तप्रकृतिस्सविताऽल्पकचः ।
तनुवृत्ततनुर्बहुवातकफः
प्राज्ञश्च शशी मृदुवाक्शुभदृक् ।। ७ ।।

ग्रहस्वरूप ।

शहद के से पीले नेत्र, लम्बी चौड़ी बराबर देह, पित्त प्रकृति और थोड़े बालोंवाला सूर्य है । पतली गोल देह, अधिक वात-कफ प्रकृति, सुन्दर आँख, कोमल वचन और बुद्धिमान् चन्द्रमा है ।।८।।

क्रूरदृक्तरुणमूर्तिरुदारः
पैत्तिकस्सुचपलः कृशमध्यः ।

श्लिष्टवाक् सततहास्यरुचिर्ज्ञः

पित्तमारुतकफप्रकृतिश्च ॥ ९ ॥

टेढ़ी नजरवाला, जवान, उदारचित्त, अधिक पित्तवाला, चंचल-स्वभाव और करिहाँव का पतला मङ्गल है और गद्गदवाणी बोलने-वाला, हमेशा हँसनेवाला तथा वात, पित्त और कफयुक्त बुध है ॥९॥

बृहत्तनुः पिङ्गलमूर्द्धजेक्षणो

बृहस्पतिः श्रेष्ठमतिः कफात्मकः ।

भृगुस्सुखी कान्तवपुस्सुलोचनः

कफानिलात्मासितवक्रमूर्द्धजः ॥ १० ॥

मोटी देह, पीले बाल, पीले नेत्र, धर्म्ममति और अधिक कफ-वाला बृहस्पति है। हमेशा सुखी, सुन्दर देह, सुन्दर नेत्र, और अधिक कफ-वातयुक्त और काले कुटिल बालवाला शुक्र है ॥१०॥

मन्दोऽलसः कपिलदृक् कृशदीर्घगात्रः

स्थूलद्विजः परुषरोमकचोऽनिलात्मा ।

स्नाय्वस्थ्यसृक्त्वगथ शुक्रवसे च मज्जा

मन्दार्कचन्द्रबुधशुक्रसुरेज्यभौमाः ॥ ११ ॥

आलसी पीले नेत्र, पतली और लम्बी देह, मोटे दाँत, रूखे रोम और रूखे बाल तथा अधिक वातवाला शनैश्चर है ॥

ग्रहधातुसार ।

शनैश्चर का स्नायु (नस), सूर्य का हाड़, चन्द्रमा का रक्त, बुध की त्वचा (खाल), शुक्र का वीर्य (बीज), बृहस्पति का मेदा (चर्बी) और मङ्गल का मज्जा (हाड़ के भीतर का गूदा) धातुसार (बल) होता है ॥ ११ ॥

ग्रहधातुसारचक्र

शनि	सूर्य	चन्द्र	बुध	शुक्र	बृहस्पति	मङ्गल	ग्रह
स्नायु	अस्थि	रक्त	चर्म	बीज	चर्बी	मज्जा	धातुसार

देवाम्ब्वग्निविहारकोशशयनक्षित्युत्करेशाः क्रमा-
द्वस्त्रं स्थूलमभुक्तमग्निकहतं मध्यं दृढं स्फाटितम् ।
ताम्रं स्यान्मणिहेमयुक्तिरजतान्यर्कात्तु मुक्तायसी
द्रेष्काणैः शिशिरादयः शशुरुचज्ज्ञग्वादिषूद्यत्सु च ।। १२ ।।

ग्रहों के स्थान ।

सूर्य का देवस्थान, चन्द्रमा का जलस्थान, मङ्गल का अग्निस्थान, बुध का क्रीड़ास्थान, बृहस्पति का भंडारस्थान, शुक्र का शयनस्थान, शनैश्चर का ऊसरस्थान है ।।

ग्रहस्थानचक्र ।

सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	ग्रह
देव	जल	अग्नि	क्रीड़ा	भण्डार	शयन	ऊषर	स्थान

ग्रहवस्त्र ।

सूर्य का मोटा वस्त्र, चन्द्रमा का नवीन वस्त्र, मङ्गल का एक कोना अग्नि से जला, बुध का जल से भीजा, बृहस्पति का मध्यम (न पुराना और न नया), शुक्र का बहुत मजबूत और शनैश्चर का पुराना फटा हुआ वस्त्र है ।।

वस्त्रचक्र ।

सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	ग्रह
मोटा	नया	अग्निदग्ध	जलभीजा	मध्यम	मजबूत	पुराना	वस्त्र

ग्रहों का द्रव्य ।

सूर्य का ताम्र, चन्द्रमा का मणि, मङ्गल का सोना, बुध का काँसा (कसकुट), बृहस्पति का चाँदी, शुक्र का मोती और शनैश्चर का लोहा द्रव्य है अर्थात् इन द्रव्यों के ये ग्रह ईश हैं ।।

ग्रहद्रव्यचक्र ।

सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	ईश
ताम्र	मणि	सुवर्ण	कसकुट	चाँदी	मोती	लोहा	द्रव्य

लग्नगत ग्रह और द्रेष्काण से ऋतुज्ञान ।

लग्न में शनैश्चर स्थित हो तो शिशिर, शुक्र हो तो वसन्त, मङ्गल हो तो ग्रीष्म, चन्द्रमा हो तो वर्षा, बुध हो तो शरद् तथा बृहस्पति हो तो हेमन्त ऋतु जानना और जो इन ग्रहों में से कोई भी ग्रह लग्न में न हो तो द्रेष्काण से ऋतु जानना ।

यथा—लग्न में शनैश्चर का द्रेष्काण हो तो शिशिर, शुक्र का द्रेष्काण हो तो वसन्त, मङ्गल का द्रेष्काण हो तो ग्रीष्म, चन्द्रमा का द्रेष्काण हो तो वर्षा, बुध का हो तो शरद् तथा बृहस्पति का हो तो हेमन्त ऋतु जानना और जो बहुत से ग्रह लग्न में स्थित हों तो भी द्रेष्काण से ऋतु जानना अथवा बहुत से ग्रहों में जो ग्रह सबसे बली हो उससे ऋतु जानना। प्रयोजन यह है कि नष्टकुण्डली इत्यादि में इसी से ऋतु जानी जाती है ।।१२।।

ऋतुचक्र ।

शनैश्चर	शुक्र	मङ्गल	चन्द्रमा	बुध	बृहस्पति	ग्रह द्रेष्काण
शिशिर	वसन्त	ग्रीष्म	वर्षा	शरद्	हेमन्त	ऋतु

त्रिदशत्रिकोणचतुरस्रसप्तमा-
न्यवलोकयन्ति चरणाभिवृद्धितः ।

रविजामरेज्यरुधिराः परे च ये
क्रमशो भवन्ति किल वीक्षणेऽधिकाः ॥ १३ ॥

ग्रहदृष्टिस्थान ।

तीसरा और दशवाँ, पाँचवाँ और नवाँ, चौथा और आठवाँ तथा सातवाँ इन स्थानों को अपने स्थान में स्थित ग्रह क्रम से एक पाद, दो पाद, तीन पाद और पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। परन्तु शनैश्चर, बृहस्पति, मङ्गल और सूर्य, चन्द्रमा, बुध शुक्र ये क्रम से उक्त स्थानों को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं अर्थात् तीसरे और दशवें स्थान को शनैश्चर पूर्ण दृष्टि से और सर्व ग्रह एक पाद दृष्टि से देखते हैं। पाँचवें तथा नवें स्थान को बृहस्पति पूर्ण दृष्टि से और सब आधी दृष्टि से देखते हैं। चौथे और आठवें स्थान को मङ्गल पूर्ण दृष्टि से और सब पौन दृष्टि से देखते हैं और सातवें स्थान को सब ग्रह पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ॥ १३ ॥

दृष्टिचक्र ।

३. १०. श० $\frac{१}{१}$ अन्य $\frac{१}{४}$ दृष्टि	९. ५. बृ. $\frac{१}{१}$ अन्य $\frac{१}{२}$ दृष्टि
४. ८. मं० $\frac{१}{१}$ अन्य $\frac{३}{४}$ दृष्टि	७ सर्व $\frac{१}{१}$ दृष्टि

अयनक्षणवासरर्त्तवो मासोर्द्धञ्च समाश्च भास्करात् ।
कटुकलवणतिक्तमिश्रिता मधुराम्लौ च कषाय इत्यपि ॥ १४ ॥

ग्रहों से कालज्ञान ।

सूर्य से अयन, चन्द्रमा से क्षण (मुहूर्त), मंगल से दिन, बुध से ऋतु, बृहस्पति से महीना, शुक्र से पक्ष और शनैश्चर से वर्ष कहना चाहिये। इसका भावार्थ यह है कि कार्यवश कोई प्रश्नादि करे तो तात्कालिक लग्न में जिस ग्रह के नवांश का उदय हो वह ग्रह उस नवांश से जितने नवांशों पर स्थित हो उतने अयनादि काल पर उस कार्य की सिद्धि अथवा असिद्धि कहे और कोई तो ऐसा कहते हैं कि तात्कालिक लग्न में जितनी संख्यावाले नवांश का

उदय हो उक्तग्रह क्रम से उतने अयनादि काल पर कार्य की सिद्धि अथवा असिद्धि कहना चाहिये। मकर की संक्रांति से लेकर मिथुन की संक्रांति के अन्त तक जो काल है उसे अयन कहते हैं ।।

कालज्ञानचक्र ।

सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृह.	शुक्र	शनि	ग्रह
अयन	क्षण	दिन	ऋतु	महीना	पक्ष	वर्ष	काल

ग्रहों से रसज्ञान ।

सूर्य से कड़ुआ, चन्द्रमा से नमकीन रस, मंगल से तीत रस, बुध से छहरस, बृहस्पति से मीठा, शुक्र से खट्टा और शनैश्चर से कषाय अर्थात् हड़ इत्यादि का रस जानना। इसका प्रयोजन यह है कि [1]गर्भाधानकाल में जो ग्रह बलवान् होता है उसी ग्रह के अनुसार गर्भवती को रस की इच्छा होती है ।। १४ ।।

ग्रहरसचक्र ।

सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृह.	शुक्र.	शनि	ग्रह
कडुआ	नमकीन	तीतरस	छहरस	मीठा	खट्टा	कषाय	रस

जीवो जीवबुधौ सितेन्दुतनयौ व्यर्का विभौमाः क्रमा-
द्वीन्द्वर्का विकुजेन्द्विनाश्च सुहृदः केषाञ्चिदेवं मतम् ।
सत्योक्ते सुहृदस्त्रिकोणभवनात्स्वात्स्वान्त्यधीधर्मपाः
स्वोच्चायुःसुखपाः स्वलक्षणविधेर्नान्यैर्विरोधादिति ।। १५ ।।

ग्रहमित्रशत्रुनिर्णय ।

सूर्य का बृहस्पति मित्र है, चन्द्रमा के बृहस्पति और बुध मित्र हैं, मंगल के शुक्र और बुध मित्र हैं, बुध के सूर्य को छोड़कर सब

१—सारावल्याम्—"मासि तृतीये स्त्रीणां दोहदको जायतेऽवश्यम् ।
स रसाधिपस्य भावैर्विलग्नयोगादिभिश्चिन्त्यः ।।

ग्रह मित्र हैं, बृहस्पति के भौम को छोड़कर सब ग्रह मित्र हैं, शुक्र के चन्द्रमा और सूर्य को छोड़कर सब ग्रह मित्र हैं, शनैश्चर के मंगल, चन्द्रमा और सूर्य को छोड़कर सब ग्रह मित्र हैं तथा अन्य छूटे हुए सब ग्रह शत्रु हैं। यह किन्हीं आचार्यों का मत है ।।

अन्योक्तमित्रामित्रचक्र ।

सूर्य	चन्द्रमा	मङ्गल	बुध	बृह.	शुक्र	शनि	ग्रह
बृ०	बृ० बु०	शु० बु०	मं०चं० बृ० शु० श०	सू० चं० बृ० शु० श०	मं०बु० बृ०श०	बु० बृ० शु०	मित्र
चं०मं० बु०शु० श०	मं० शु० श०सू०	सू० चं० बृ० श०	सू०	मं०	चं० सू०	मं० चं० सू०	शत्रु

सत्याचार्य ने कहा है कि अपने त्रिकोणभवन से दूसरे, बारहवें, पाँचवें, नवें और अपने उच्च, आठवें तथा चौथे स्थान के स्वामी मित्र हैं और जो स्थानों से अन्य स्थानों के स्वामी हैं वे शत्रु हैं। परन्तु यहाँ एक और भेद है कि जो ग्रह दो राशियों का स्वामी हैं उसकी दोनों राशियाँ उक्त हैं वह ग्रह मित्र है और जो एक ही राशि का स्वामी है उसकी वह राशि उक्त है वह भी मित्र है और जो दो राशियों का स्वामी है उसकी एक राशि उक्त है तथा एक अनुक्त है वह ग्रह मध्यम है और जिसकी एक भी राशि उक्त नहीं है वह ग्रह शत्रु है। यथा—सूर्य का त्रिकोणभवन सिंह राशि है, उससे दूसरे कन्या और ग्यारहवें मिथुन का स्वामी बुध है । इनमें दूसरी कन्या उक्त है और ग्यारहवाँ मिथुन अनुक्त है । यह बुध सूर्य का मध्यम अर्थात् न शत्रु है और न मित्र है । सिंह से बारहवें कर्क का स्वामी चन्द्रमा है वह एक ही राशि का स्वामी है, वह राशि भी उक्त है इससे सूर्य का चन्द्रमा मित्र है और सिंह से पाँचवाँ धन तथा आठवाँ मीन इन दोनों का स्वामी बृहस्पति है और ये दोनों उक्त हैं इससे सूर्य का बृहस्पति मित्र है और सिंह से नवाँ मेष तथा चौथा वृश्चिक इन दोनों का स्वामी मङ्गल है और ये दोनों उक्त हैं

और मेष उच्च भी है इससे सूर्य का मङ्गल मित्र है। सिंह से छठे मकर और सातवें कुम्भ इन दोनों का शनैश्चर स्वामी है और ये दोनों अनुक्त हैं इससे सूर्य का शनैश्चर शत्रु है और सिंह से दशवें वृष तथा तीसरे तुला इन दोनों का स्वामी शुक्र है और ये दोनों अनुक्त हैं इससे सूर्य का शुक्र शत्रु है। इसी तरह सब ग्रहों के मित्र, सम और शत्रु जानना चाहिए ॥ १५ ॥

सत्याचार्योक्त मित्रचक्र।

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्रह
सिं०	वृ०	मे०	कं०	ध०	तु०	कुं०	त्रिकोणराशि
२	२	२	२	२	२	२	ईश मित्र
१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	ईश मित्र
५	५	५	५	५	५	५	ईश मित्र
९	९	९	९	९	९	९	ईश मित्र
मे०	बृ०	म०	कं०	कं०	मी०	तु०	ईश मित्र
८	८	८	८	८	८	८	ईश मित्र
४	४	४	४	४	४	४	ईश मित्र

उक्तचक्रविशेषभेदचक्र।

उक्त	उक्तानुक्त	अनुक्त	राशीश
मित्र	सम	शत्रु	मित्रादि

शत्रू मन्दसितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषा रवे-

स्तीक्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्च सुहृदौ शेषाः समाः शीतगोः।

जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदो ज्ञोऽरिः सितार्की समौ
मित्रे सूर्यसितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चापरे ।। १६ ।।
सूरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्योऽपरे त्वन्यथा
सौम्यार्की सुहृदौ समौ कुजगुरू शुक्रस्य शेषावरी ।
शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरस्य चान्येऽरयो
ये प्रोक्ताः[1] सुहृदस्त्रिकोणभवनात्तेऽमी मया कीर्त्तिताः।।१७।।

अथ वराहमिहिरोक्त मित्रामित्रादि ।

सूर्य के शुक्र और शनैश्चर ये दोनों शत्रु, बुध सम । चन्द्रमा, मंगल और बृहस्पति ये मित्र हैं । और चन्द्रमा के सूर्य तथा बुध ये मित्र । मंगल, बृहस्पति, शुक्र तथा शनैश्चर ये सम हैं और शत्रु कोई नहीं है । मंगल के सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति ये मित्र । बुध शत्रु । शुक्र और शनैश्चर ये सम हैं । बुध के सूर्य और शुक्र ये मित्र । चन्द्रमा शत्रु । मंगल, बृहस्पति और शनैश्चर ये सम हैं । बृहस्पति के बुध और शुक्र ये शत्रु। शनैश्चर सम । सूर्य, चन्द्रमा और मंगल ये मित्र हैं । शुक्र के बुध और शनैश्चर ये मित्र । मंगल और बृहस्पति ये सम । सूर्य तथा चन्द्रमा ये शत्रु हैं। शनैश्चर के बुध और शुक्र ये मित्र। बृहस्पति सम ।सूर्य, चन्द्रमा तथा मंगल ये शत्रु हैं । श्रीवराहमिहिराचार्य्य कहते हैं कि मैंने जो "त्रिकोणभवनात्स्वात्स्वान्त्यधीधर्मपाः" इत्यादि कहे हैं, उसी के उदाहरणस्वरूप ये श्लोक कहे हैं ।। १६ ।। १७ ।।

वराहमिहिरोक्त मित्रादिचक्र ।

सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृह०	शुक्र	शनि	ग्रह
चं० मं० बृ०	सू० बु०	सू० बृ० चं०	सू० शु०	सू० चं० मं०	बु० श०	शु० बु०	मित्र
बु०	मं० वृ० शु० श०	शु० श०	मं० बृ० श०	श०	मं०बृ०	बृ०	सम
श०शु०	००	बु०	चं०	बु० शु०	सू० चं०	सू० चं० मं०	शत्रु

१—"स्वत्रिकोणभादिषु पुनस्ते" इत्यपि पाठः।

अन्योऽन्यस्य धनव्ययायसहजव्यापारबन्धुस्थिता-
स्तत्काले सुहृदस्स्वतुङ्गभवनेऽप्येकेऽरयस्त्वन्यथा ।
द्व्येकानुक्तभपान्सुहृत्समरिपून्संचिन्त्य नैसर्गिकां-
स्तत्काले च पुनस्तु तानधिसुहृन्मित्रादिभिः कल्पयेत् ॥१८॥

तात्कालिक मित्रादि ।

सब ग्रह अपने स्थान से दूसरे, बारहवें, ग्यारहवें, तीसरे, दशवें और चौथे स्थान में स्थित ग्रह के परस्पर मित्र हैं और कोई आचार्य कहते हैं कि अपने उच्चस्थान में स्थित ग्रह भी मित्र हैं। और दूसरी रीति से शत्रु हैं अर्थात् पहिले, पाँचवें, सातवें, आठवें और नवें स्थान में स्थित ग्रह शत्रु हैं। यहाँ भी उक्त, उक्तानुक्त और अनुक्त राशियों के स्वामियों की पूर्वोक्त रीति से मित्र, सम, शत्रुओं का विचार करके अधिशत्रु, अधिमित्र आदि की कल्पना करना चाहिये। उसकी यह रीति है कि जो ग्रह नैसर्गिक मित्र तथा तात्कालिक मित्र है वह अधिमित्र कहा जाता है और जो नैसर्गिक सम तथा तात्कालिक शत्रु अथवा मित्र है तो वह तात्कालिक शत्रु अथवा मित्र कहा जाता है और जो नैसर्गिक शत्रु तथा तात्कालिक शत्रु है वह अधिशत्रु कहा जाता है इत्यादि ॥ १८ ॥

तात्कालिक मित्रादिचक्र ।

२	१२	११	३	१०	४	उच्च	स्थितमित्र
१	५	७	८	९	००	००	स्थितशत्रु

स्वोच्चसुहृत्स्वत्रिकोणनवांशैः
स्थानबलं स्वगृहोपगतैश्च ।

दिक्षु[1] बुधाङ्गिरसौ रविभौमौ
सूर्यसुतः सितशीतकरौ च ॥ १९ ॥

स्थान-बल ।

जो ग्रह अपने उच्चस्थान में, अपने मित्र के स्थान में, अपने त्रिकोण स्थान में तथा अपने नवांश में स्थित हो वह स्थानबली ग्रह होता है ॥

दिग्बल ।

पूर्वादि चारों दिशाओं में तथा चारों केन्द्रों में क्रम से बुध, बृहस्पति तथा सूर्य, मङ्गल तथा शनैश्चर और शुक्र, चन्द्रमा ये ग्रह बली होते हैं अर्थात् लग्न में स्थित बुध, बृहस्पति पूर्व में तथा दशमस्थान में स्थित सूर्य, मङ्गल दक्षिण में और सप्तमस्थान में स्थित शनैश्चर पश्चिम में एवं चतुर्थस्थान में स्थित शुक्र, चन्द्रमा उत्तर में बली होते हैं और सब ग्रह अपने सबल स्थान से सप्तम स्थान में निर्बल होते हैं। मध्यमादि में त्रैराशिक की रीति से बल लेना चाहिए। यथा— लग्न में बृहस्पति का पूर्ण बल है तो चतुर्थ में कितना ? इसी रीति से बल का स्पष्ट होता है सौर उच्चबल भी इसी रीति से बनता है ॥१९॥

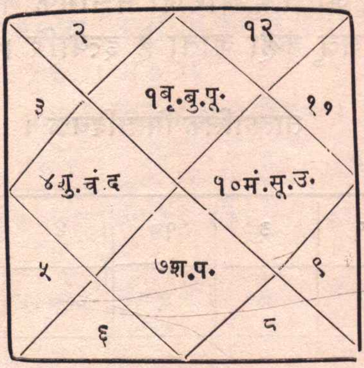

१ यवनेश्वरः—"गुर्विन्दुजौ पूर्वविलग्नसंस्थौ नभस्थलस्थौ च दिवाकरारौ ।
सौरोऽस्तगः शुक्रनिशाकरौ तु जले स्थितावग्र्यबलौ भवेताम् ॥"

उदगयने रविशीतमयूखौ

वक्रसमागमगाः परिशेषाः ।

विपुलकरा युधि चोत्तरसंस्था-

श्चेष्टितवीर्य्ययुताः परिकल्प्याः ॥ २० ॥

ग्रहचेष्टाबल ।

उत्तरायण अर्थात् मकरादि छह राशियों में सूर्य, चन्द्रमा बली होते हैं और वक्रग अर्थात् उलटे चलनेवाले तथा समागम अर्थात् चन्द्रमा से संयुक्त मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर ये ग्रह बली होते हैं। मकरादि छह राशियों को उत्तरायण तथा कर्कादि छह राशियों को दक्षिणायन कहते हैं। सूर्य के संयोग को अस्त और चन्द्रमा के संयोग को समागम तथा मङ्गल के संयोग को युद्ध कहते हैं। विपुल किरणोंवाला ग्रह, और युद्ध में जो ग्रह उत्तर ओर स्थित हो वह ग्रह बली होता है। जिस ग्रह का शीघ्रकेन्द्र दूसरे और तीसरे पद में स्थित हो वह ग्रह विपुल किरणोंवाला कहा जाता है। इसी रीति से ग्रहों के चेष्टाबल की कल्पना करना चाहिए ॥ २० ॥

निशि शशिकुजसौराः सर्वदा ज्ञोऽह्नि चान्ये

बहुलसितगताः स्युः क्रूरसौम्याः क्रमेण ।

स्वदिवससमहोरामासपैः कालवीर्य्यं

शकुबुगुशुचसाद्या वृद्धितो वीर्यवन्तः ॥ २१ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके ग्रहयोनि-

भेदाऽध्यायो द्वितीयः ॥ २ ॥

ग्रहकालबल ।

चन्द्रमा, मङ्गल और शनैश्चर ये रात्रि में तथा बुध रात्रि-दिन में और सूर्य, बृहस्पति तथा शुक्र ये दिन में बली होते हैं। कृष्णपक्ष में क्रूरग्रह और शुक्लपक्ष में सौम्यग्रह बली होते हैं। जो ग्रह जिस वर्ष का अधिपति होता है वह उस वर्ष में, और जिस महीने का जो अधिपति होता है वह उस महीने में, और जिस वासर का जो अधिपति होता है वह उस वासर में तथा जिसकी जो होरा हो वह उस होरा में बली होता है ॥

नैसर्गिक बल ।

शनैश्चर, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रमा और सूर्य ये ग्रह क्रम से उत्तरोत्तर बली हैं अर्थात् शनैश्चर से मंगल, मंगल से बुध इत्यादि ॥ २१ ॥

दो० श्रीवराहकृत जातके ग्रहभेदज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, द्वितय समाप्ताध्याय ॥ २ ॥

अथ वियोनिजन्माध्यायस्तृतीयः ।

क्रूरग्रहैस्तु बलिभिर्विबलैश्च सौम्यैः
क्लीबे चतुष्टयगते तदवेक्षणाद्वा ।
चन्द्रोपगद्विरसभागसमानरूपं
सत्त्वं वदेद्यदि भवेत्स वियोनिसंज्ञः ॥ १ ॥

कोई किसी की कुण्डली लाकर दिखावे और पूछे कि यह कुण्डली किसकी है ? तब जो उस कुण्डली में सब क्रूरग्रह अर्थात् सूर्य, मंगल, शनैश्चर, पापग्रहयुक्त बुध और क्षीण चन्द्रमा ये बली हों और सौम्य अर्थात् पूर्णचन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शुक्र ये ग्रह निर्बल हों तथा शनैश्चर या बुध अथवा दोनों केन्द्रस्थान में हों ऐसे योग के रहते चन्द्रमा जिस राशि के द्वादशांश में स्थित हो उस राशि के समान रूपवाले की कुण्डली कहना चाहिए । परन्तु वह

द्वादशांश जो वियोनिसंज्ञक हो अर्थात् मेष, वृष, कर्क, सिंह, वृश्चिक, परार्द्ध धन, पूर्वार्द्ध मकर और मीन इनमें किसी का हो तो वियोनिसंज्ञक जीव की बतावे ।

यथा—मेष का द्वादशांश हो तो भेड़, बकरा इत्यादि की । वृष का हो तो गौ, भैंस इत्यादि की । कर्क का हो तो गेंगटा इत्यादि की । सिंह का हो तो शेर इत्यादि वनजन्तु की । वृश्चिक का हो तो बिच्छू, कीड़ा इत्यादि की । परार्द्ध धन का हो तो घोड़ा, गधा इत्यादि की । मकर का पूर्वार्द्ध हो तो हरिन इत्यादि की । मीन का हो तो मनुष्यादि की कुण्डली कहना चाहिए । और पूर्वोक्त सम्पूर्ण योग के रहते शनैश्चर, बुध इनमें से एक अथवा दोनों कहीं भी स्थित होकर लग्न को देखते हों तो भी पूर्ववत् कहना चाहिए ।। १ ।।

पापा बलिनः स्वभागगाः पारक्ये विबलाश्च शोभनाः ।
लग्नं च वियोनिसम्भवं दृष्ट्वात्रापि वियोनिमादिशेत् ।।२।।

जो पापग्रह बली होकर अपने नवांशों में स्थित हों और शुभग्रह निर्बल होकर दूसरे ग्रहों के नवांशों में स्थित हों तथा लग्न वियोनिसंज्ञक हो तो भी चन्द्रमा जिस राशि के द्वादशांश में स्थित हो उसी के समान रूपवाले की कुण्डली कहना चाहिए ।। २ ।।

क्रियः शिरो वक्त्रगलो वृषोऽन्ये
पादांशके पृष्ठमुरोऽथ पार्श्वे ।
कुक्षिस्त्वपानांघ्र्यथ मेढ्रमुष्कौ
स्फिक्पुच्छमित्याह चतुष्पदाङ्गे ।। ३ ।।

वियोनिपश्वाकार कालचक्र ।

जैसे नराकार कालचक्र पहिले कहा है वैसे ही यहाँ भी पशु या पक्षी के सदृश कालचक्र बनाकर उसके शिर में मेष, मुख में वृष,

अगले पाँवों में मिथुन, काँधे पर कर्क, छाती में सिंह, दोनों पांजर (पार्श्व) में कन्या, दोनों कोखियों में तुला, गुदा में वृश्चिक, पिछले पैरों में धन, लिंग और अण्डकोशों में मकर, चूतरों पर कुम्भ तथा पूँछ पर मीन लिखे। पक्षीचक्र में अगले पैरों के स्थान में पक्ष माने। फिर राशि और ग्रहों का बलाबल तथा शुभाशुभ विचारकर उसके अनुसार अंगों का रंग, क्षीणता तथा पुष्टता जाने ॥३॥

लग्नांशकाद्ग्रहयोगेक्षणाद्वा
वर्णान्वदेद्बलयुक्ताद्वियोनौ ।
दृष्टया समानाम्प्रवदेच्च संख्यां
रेखांवदेत्स्मरसंस्थैश्च पृष्ठे ॥ ४ ॥

वियोनिवर्णज्ञान ।

लग्न में जो ग्रह स्थित हो उसके अनुसार उस प्राणी का रंग कहे और जो कोई ग्रह लग्न में न स्थित हो तो जो ग्रह लग्न को देखता हो उसके अनुसार और जो कोई ग्रह युक्त या देखता न ह तो लग्न में जिस राशि का नवांश जन्मकाल में हो उस नवांश राशि के अनुसार वर्ण कहना तथा जो लग्न में बहुत से ग्रह स्थित हों तो उनमें जो बली हो उस ग्रह के अनुसार रंग कहे। इसी रीति से उक्त चक्र में जो ग्रह जिस अंग में स्थित हो या उसको देखता हो उसके अथवा नवांश के अनुसार उस अंग का रंग कहे और सप्तमस्थान को जितने ग्रह देखते हों अथवा उसमें जितने ग्रह स्थित हों उतनी ही रेखा उस जानवर की पीठ पर कहे ॥४॥

खगे दृकाणे बलसंयुतेन वा
ग्रहेण युक्ते चरभांशकोदये ।
बुधांशके वा विहगाः स्थलाम्बुजाः
शनैश्चरेन्द्वीक्षणयोगसम्भवाः ॥ ५ ॥

पक्षिजन्मज्ञान ।

मिथुन का दूसरा, सिंह का पहला, तुला का दूसरा और कुम्भ का पहला द्रेष्काण पक्षिसंज्ञक है । पक्षिद्रेष्काण का उदय हो, उसमें कोई बली ग्रह स्थित हो और शनैश्चर अथवा चन्द्रमा करके वह दृष्ट अथवा संयुक्त हो तो पक्षी का जन्म जानना अथवा चरनवांश का उदय हो और पूर्वोक्त सब योग हों तो भी पक्षी का जन्म जानना । अथवा बुध के नवांश का उदय हो और उसमें पूर्वोक्त सब योग हों तो भी पक्षी का जन्म जानना । परन्तु विशेष यह है कि इन तीनों में जो शनैश्चर का योग अथवा दृष्टि हो तो स्थलज पक्षी का और जो चन्द्रमा का योग अथवा दृष्टि हो तो जलज पक्षी का जन्म जानना ॥५॥

होरेन्दुसूरिरविभिर्विबलैस्तरूणां
तोये स्थले तरुभवोंशकृतप्रभेदः ।
लग्नाद्ग्रहः स्थलजलर्क्षपतिस्तु यावां-
स्तावन्त एव तरवः स्थलतोयजाताः ॥ ६ ॥

वृक्षजन्मज्ञान ।

लग्न, चन्द्रमा, बृहस्पति और सूर्य ये सब निर्बल हों तो वृक्ष का जन्म जानना चाहिए । परन्तु जल-निर्जल का भेद तो नवांश के अधीन है अर्थात् जलराशि के नवांश का उदय हो तो जल में हुए वृक्ष का और निर्जलराशि के नवांश का उदय हो तो निर्जल में हुए वृक्ष का जन्म जानना चाहिए । कर्क, परार्द्ध मकर और मीन ये जल राशियाँ हैं अन्य सब निर्जल राशियाँ हैं ।

वृक्षसंख्याज्ञान ।

लग्न से उक्त नवांशराशि का स्वामी जितनी संख्यावाले स्थान में स्थित हो उतनी संख्या उन वृक्षों की जानना चाहिए । और जो वह नवांशस्वामी अपने उच्चादि स्थानों में स्थित हो तो उस संख्या के द्विगुने तिगुने इत्यादि वृक्ष जानना ॥६॥

अन्तः साराञ्जनयति रविर्दुर्भगां सूर्यसूनुः
क्षीरोपेतांस्तुहिनकिरणः कण्टकाढ्यांश्च भौमः ।
वागीशज्ञौ सफलविफलान्पुष्पवृक्षांश्च शुक्रः
स्निग्धानिन्दुः कटुकविटपान्भूमिपुत्रश्च भूयः ॥ ७ ॥

जल-निर्जलवृक्ष-विशेषज्ञान ।

उक्त नवांश का स्वामी सूर्य हो तो शीशम, साँखू इत्यादि प्रौढ़ वृक्षों को तथा शनैश्चर हो तो कुश, काश, शरपत इत्यादि कुरूपों को; चन्द्रमा हो तो वट, पीपर, ऊख इत्यादि दुग्धरसवालों को; मङ्गल हो तो कटीले बबूर इत्यादि वृक्षों को; बृहस्पति हो तो आम, कटहर इत्यादि सफल वृक्षों को; बुध हो तो करीर इत्यादि निष्फल वृक्षों को तथा शुक्र हो तो फूलदार चमेली इत्यादि वृक्षों को पैदा करता है ॥७॥

शुभोऽशुभर्क्षे रुचिरं कुभूमिजं
करोति वृक्षं विपरीतमन्यथा ।
परांशके यावति विच्युतः स्वका-
द्भवन्ति तुल्यास्तरवस्तथाभिधाः ॥ ८ ॥

इति बृहज्जातके वियोनिजन्माध्यायस्तृतीयः ॥३॥

वृक्षशुभाशुभभूमिज्ञान ।

उक्त नवांश का स्वामी शुभग्रह हो और पापग्रहों की राशि में स्थित हो तो खराब भूमि में उत्तम वृक्ष को और जो अशुभ ग्रह हो और शुभग्रह के स्थान में स्थित हो तो उत्तम भूमि में अशुभ वृक्ष को पैदा करता है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि शुभग्रह शुभ की राशि में हो तो शुभभूमि में शुभ वृक्ष का और अशुभग्रह अशुभराशि में हो तो अशुभ भूमि में अशुभ वृक्ष को पैदा करता है॥

पुनर्वृक्षसंख्याज्ञान ।

उक्त नवांशपति अपने नवांश को छोड़ जिस नवांश में जाकर वर्तमान हो उस नवांश के अनुसार जातिवाले और उतनी ही संख्यावाले पूर्वोक्त वृक्ष जानना चाहिए ।। ८ ।।

दो० श्रीवराहकृत जातके, पश्वादिकज्ञानाय ।।
रामरत्नकृत भाषा, त्रितय समाप्ताध्याय ।। ३ ।।

अथ निषेकाध्यायश्चतुर्थः ।

कुजेन्दुहेतुः प्रतिमासमार्तवं
गते तु पीडर्क्षमनुष्णदीधितौ ।
अतोऽन्यथास्ते शुभपुंग्रहेक्षिते
नरेण संयोगमुपैति कामिनी ।। १ ।।

गर्भाधानयोग्य ऋतुयोग ।

महीने-महीने में स्त्रियों के रजस्वला होने का कारण चन्द्रमा और मङ्गल हैं । जब चन्द्रमा स्त्रियों के जन्मराशि से तीसरी छठी, दशवीं और ग्यारहवीं राशि को छोड़ अन्य राशियों में जाता है तब उनके गर्भाधान के लायक ऋतु होता है । इसका भावार्थ यह है कि जब चन्द्रमा उक्त स्थानों को छोड़ अन्य स्थानों में कहीं स्थित हो और उसे मङ्गल देखता हो तब स्त्रियाँ रजस्वला* होती हैं और तभी उनके गर्भ की योग्यता होती है । परन्तु बाल, वृद्ध, रोगिणी और बन्ध्या स्त्री को छोड़कर यह योग जानना ।

स्त्री पुरुषसंयोग-सम्भव ।

पूर्वोक्त योग से अन्यथा अर्थात् जब पुरुष की जन्मराशि से

---

* बादरायणः—"स्त्रीणां गतोऽनुपचयर्क्षमनुष्णरश्मिः
संदृश्यते यदि धरातनयेन तासाम् ।
गर्भग्रहार्तवमुशन्ति तदा न बन्ध्या
वृद्धातुराल्पवयसामपि चैतदिष्टम् ।"

तीसरे, छठे, ग्यारहवें और दसवें स्थान में चन्द्रमा स्थित हो और उसे कोई शुभग्रह (विशेष करके बृहस्पति) देखता हो तब स्त्री पुरुष के साथ मैथुन को प्राप्त होती है ॥ १ ॥

यथास्तराशिर्मिथुनं समेति
तथैव वाच्यो मिथुनप्रयोगः ।
असद्ग्रहालोकितसंयुतेऽस्ते
सरोषदृष्टैस्सविलासहासः ॥ २ ॥

मैथुन प्रकार-ज्ञान ।

गर्भाधानकाल के लग्न अथवा प्रश्नकाल के लग्न से सातवें स्थान में जो राशि हो उसी की संज्ञावाले जन्तु की तरह का मैथुन कहना चाहिए । और जो उस सातवें स्थान में पापग्रहों का योग या दृष्टि हो तो क्रोध, झगड़ा या जबरदस्ती के साथ और जो शुभग्रहों का योग या दृष्टि हो तो सुखपूर्वक हास-विलास के साथ मैथुन कहना चाहिए ॥ २ ॥

रवीन्दुशुक्रावनिजैः स्वभागगै-
र्गुरौ त्रिकोणोदयसंस्थितेऽपि वा ।
भवत्यपत्यं हि विबीजिनामिमे
कला हिमांशोर्विदृशामिवाफलाः ॥ ३ ॥

गर्भसम्भव ।

जब सूर्य, चन्द्रमा, शुक्र और मङ्गल ये ग्रह किसी भी राशि के अपने नवांशों में स्थित हों तो गर्भाधानकाल में सन्तति की योग्यता होती है । कदाचित् सब ग्रह अपने नवांशों में न स्थित हों तो पुरुष की जन्मराशि से तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थान में स्थित सूर्य, शुक्र ये अपने-ही नवांश में स्थित हों और स्त्री की जन्मराशि से तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें स्थान में स्थित चन्द्रमा, मङ्गल

ये अपने ही नवांश में स्थित हों तो अवश्य ही सन्तान की योग्यता होती है। अथवा बृहस्पति नवें, पाँचवें और लग्न में स्थित हो तो भी गर्भ का योग होता है परन्तु इन योगों के रहते भी हिजरों के निष्फल हो जाते हैं। जैसे चन्द्रमा की किरणें अन्धों को फलदायक नहीं होती हैं ।। ३ ।।

दिवाकरेन्द्वोः स्मरगौ कुजार्कजौ
गदप्रदौ पुंगलयोषितोस्तदा ।
व्ययस्वगौ मृत्युकरौ युतौ तथा
तदेकदृष्टया मरणाय कल्पितौ ॥ ४ ॥

गर्भवती स्त्री और पुरुष का शुभाशुभ-ज्ञान ।

सूर्य और चन्द्रमा से सातवें स्थान में मङ्गल और शनैश्चर स्थित हों तो क्रम से पुरुष तथा स्त्री को रोग देनेवाले होते हैं। अर्थात् गर्भाधान काल में जिस स्थान में सूर्य स्थित हो उस स्थान से सातवें स्थान में मङ्गल अथवा शनैश्चर स्थित हो तो अपने महीने में पुरुष को रोगी करता है और चन्द्रमा से सातवें स्थान में मंगल अथवा शनैश्चर स्थित हो तो अपने महीने में गर्भवती स्त्री को रोगिणी करता है और सूर्य से मंगल तथा शनैश्चर इन दोनों में से कोई दूसरे और कोई बारहवें स्थान में स्थित हो तो इन दोनों में जो बली हो वह अपने महीने में पुरुष का मारनेवाला और ऐसे ही चन्द्रमा से स्त्री का मारने वाला होता है। अथवा मंगल और शनैश्चर इनमें से किसी से सूर्य संयुक्त या दृष्ट हो तो पुरुष का मरणकारक और ऐसे ही चन्द्रमा, मंगल या शनैश्चर से युक्त-दृष्ट हो तो स्त्री का मरणकारक होता है ॥ ४ ॥

दिवार्कशुक्रौ पितृमातृसंज्ञकौ
शनैश्चरेन्दू निशि तद्विपर्ययात् ।
पितृव्यमातृष्वसृसंज्ञितौ तु ता-
वथौजयुग्मर्क्षगतौ तयोः शुभौ ॥ ५ ॥

गर्भस्थ मातापित्रादि शुभाशुभज्ञान ।

दिन में गर्भ रहे तो सूर्य पितृसंज्ञक और शुक्र मातृसंज्ञक होता है और रात्रि में गर्भ रहे तो शनैश्चर पितृसंज्ञक और चन्द्रमा मातृसंज्ञक होता है और दिन में शनैश्चर पितृव्यसंज्ञक और चन्द्रमा मातृष्वसृसंज्ञक होता है और रात्रि में सूर्य पितृव्यसंज्ञक और शुक्र मातृष्वसृसंज्ञक होता है । इन सज्ञाओं अर्थात् नामों का प्रयोजन यह है कि गर्भाधानकाल में उक्त ग्रह विषम-समराशियों की स्थिति के द्वारा पिता, पितृव्य, माता और मातृष्वसृ इनके शुभदायक होते हैं । यथा—गर्भाधान दिन में हो और सूर्य मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धन और कुम्भ इन विषमराशियों में कहीं स्थित हो तो पिता का शुभकारी तथा रात्रि में पितृव्य का शुभकारी होता है । और गर्भाधान दिन में हो तो शुक्र वृष, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन इन समराशियों में कहीं भी स्थित हो तो माता का शुभकारी तथा रात्रि में मातृष्वसृ का शुभकारी होता है। ऐसे ही रात्रि में विषमराशियों में से किसी एक में स्थित शनैश्चर पिता का शुभकारी और दिन में पितृव्य का शुभकारी होता है । रात्रि में समराशियों में से किसी एक में स्थित चन्द्रमा माता का शुभकारी तथा दिन में मातृष्वसृ का शुभकारी होता है । उक्त से विपरीत अशुभकारी होता है । यथा—दिन में समराशि में स्थित सूर्य पिता का अशुभकारी और रात्रि में पितृव्य का अशुभकारी होता है । तथा दिन में विषमराशि में स्थित शुक्र माता का अशुभकारी तथा रात्रि में मातृष्वसृ का अशुभकारी होता है । रात्रि में समराशियों में स्थित शनैश्चर पिता का अशुभकारी और दिन में पिता के भाई का अशुभकारी तथा रात्रि में विषमराशियों में स्थित चन्द्रमा माता का अशुभकारी और दिन में माता की बहिन का अशुभकारी होता है ॥ ५ ॥

अभिलषद्भिरुदयर्क्षमसद्भि-
र्मरणमेति शुभदृष्टिमयाते ।

उदयराशिसहिते च यमे स्त्री
विगलितोडुपतिभूसुतदृष्टे ॥ ६ ॥

गर्भिणीमरण-योग ।

पापग्रह गर्भाधानकालिक लग्न की इच्छा करते हों अर्थात् बारहवें स्थान में पापग्रह स्थित हों और लग्न में शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो गर्भिणी स्त्री का मरण होता है और गर्भाधानकालिक लग्न में स्थित शनैश्चर को क्षीण चन्द्रमा और मंगल देखता हो तो भी गर्भिणी स्त्री मरण को प्राप्त होती है ॥ ६ ॥

पापद्वयमध्यसंस्थितौ लग्नेन्दू न च सौम्यवीक्षितौ ।
युगपत्पृथगेव वा वदेन्नारी गर्भयुता विपद्यते ॥ ७ ॥

लग्न और चन्द्रमा ये दोनों, दो पापों के बीच में स्थित हों और उन्हें कोई शुभग्रह न देखता हो तो गर्भवती स्त्री मरण को प्राप्त होती है। जब लग्न में चन्द्रमा स्थित हो और बारहवें तथा दूसरे स्थान में पापग्रह स्थित हों तो यह योग युगपत् अर्थात् एकही काल में होता और तीसरे स्थान में चन्द्रमा स्थित हो और बारहवें, दूसरे और चौथे स्थान में पापग्रह स्थित हों तो भी स्त्री का मरण होता है। ऐसे ही अनेक प्रकार से पृथक अर्थात् अलग-अलग भी यह योग होता है ॥ ७ ॥

क्रूरे शशिनश्चतुर्थगे लग्नाद्वा निधनाश्रिते कुजे ।
बन्धवन्त्यगयोः कुजार्कयोः क्षीणेन्दौ निधनाय पूर्ववत् ॥ ८ ॥

चन्द्रमा से चतुर्थस्थान में पापग्रह और अष्टमस्थान में मंगल स्थित हो १ अथवा लग्न से चौथे स्थान में पापग्रह और अष्टम स्थान में मंगल स्थित हो २ अथवा लग्न से चौथे मंगल और बारहवें स्थान में सूर्य तथा चन्द्रमा क्षीण हो ३ तो इन तीनों योगों में से किसी एक योग के रहते गर्भवती मरण को प्राप्त होती है। योगकारक ग्रहों में जो बली ग्रह होता है उसी के महीने में

गर्भवती का मरण होता है । सर्वत्र इस प्रकरण में यह रीति जानना चाहिए ।। ८ ।।

उदयास्तगयोः कुजार्कयोर्निधनं शस्त्रकृतं वदेत्तदा ।

मासाधिपतौ निपीडिते तत्कालं स्रवणं समादिशेत ।। ९ ।।

गर्भस्राव-योग ।

गर्भाधान के समय में लग्न में मंगल और सातवें सूर्य हो तो शस्त्र से गर्भिणी स्त्री का मरण होता है । गर्भाधानकाल में जो ग्रह किसी ग्रह से पीड़ित हो तो उसके महीने में अवश्य गर्भ गिरेगा यह कहना चाहिए। मंगलादि से संयुक्त ग्रह युद्ध में निपीड़ित और केतु से संयुक्त अभिधूमित और राहु के ग्रहण करने से सूर्य और चन्द्रमा निपीड़ित कहा जाता है ।। ९ ।।

शशाङ्कलग्नोपगतैः शुभग्रहै-
स्त्रिकोणजायार्थसुखास्पदस्थितैः ।
तृतीयलाभर्क्षगतैश्च पापकैः
सुखी सगर्भो रविणा च वीक्षितः ।। १० ।।

गर्भपुष्टियोग ।

चन्द्रमा जिस स्थान में स्थित हो उस स्थान में अथवा लग्न में अथवा दोनों में अथवा चन्द्रमा और लग्न से अथवा दोनों से पाँचवें, नवें, सातवें, दूसरे, चौथे और दशवें स्थान में शुभग्रह हों और लग्न से या चन्द्रमा से अथवा दोनों से तीसरे या ग्यारहवें स्थान में पापग्रह हों और लग्न को तथा चन्द्रमा को अथवा दोनों को सूर्य देखता हो तो गर्भ पुष्ट कहना चाहिए ।। १० ।।

ओजर्क्षे पुरुषांशकेषु बलिभिर्लग्नार्कगुर्विन्दुभिः
पुंजन्म प्रवदेत्समांशकगतैर्युग्मेषु तैर्योषितः ।
गुर्वर्कौ विषमे नरं शशिसितौ वक्रश्च युग्मे स्त्रियं
द्व्यङ्गस्था बुधवीक्षणाच्च यमलौ कुर्वन्ति पक्षे स्वके ।।११।।

पुत्र कन्याज्ञान ।

आधान काल में या प्रश्न लग्न में बलवान् लग्न, सूर्य, बृहस्पति और चन्द्रमा ये सब विषमराशि में या विषमराशि के नवांश में स्थित हों तो गर्भगत पुरुष और जो यही सब समराशि में अथवा समराशि के नवांश में स्थित हों तो गर्भगत स्त्री कहना चाहिए। अथवा सबल बृहस्पति और सूर्य विषमराशि में स्थित हों तो पुरुष और चन्द्रमा, शुक्र तथा मंगल ये सब सबल होकर समराशि में स्थित हों तो गर्भगत स्त्री और यही चन्द्रमा, मंगल, बृहस्पति और सूर्य द्विस्वभाव राशियों के नवांश में स्थित हों और इन्हें बुध देखता हो तो ये अपने पक्ष में यमज (जोरिया) पुरुष या स्त्रीकारक होते हैं अर्थात् मिथुन, कन्या, धन और मीन ये चार द्विस्वभाव हैं; इनमें मिथुन, धन ये दो पुरुष और कन्या, मीन ये दो स्त्रीसंज्ञक हैं। अब मिथुन, धन में कहीं सूर्य, बृहस्पति स्थित हों और उन्हें बुध देखता हो तो जोरिया दो पुरुष और कन्या, मीन में कहीं चन्द्रमा, शुक्र और मंगल स्थित हों और उन्हें बुध देखता हो तो जोरिया दो स्त्री और दोनों योग मिले हुए हों तो पुरुष स्त्री जोरिया के होते हैं और पूरे दोनों योग हों तो दो पुरुष और दो स्त्री गर्भ में कहना चाहिए ॥ ११ ॥

विहाय लग्नं विषमर्क्षसंस्थः
सौरोऽपि पुञ्जन्मकरो विलग्नात् ।
प्रोक्तग्रहाणामवलोक्य वीर्यं
वाच्यः प्रसूतौ पुरुषोऽङ्गना वा ॥ १२ ॥

गर्भाधानकाल में अथवा प्रश्नकाल में लग्न को छोड़कर लग्न से विषम अर्थात् तीसरे, पाँचवें, सातवें, नवें और ग्यारहवें स्थान में स्थित शनैश्चर पुरुष जन्मकारक होता है। इसी तरह उक्त ग्रहों के बल से पुरुष अथवा स्त्री गर्भ में कहना अर्थात् जहाँ पुरुषसम्भव योग और स्त्रीसम्भव योग दोनों हों तथा जो योग बली हो उसी के अनुसार पुरुष अथवा स्त्री कहना चाहिए ॥ १२ ॥

अन्योऽन्यं यदि पश्यतश्शशिरवी यद्यार्किसौम्यावपि
वक्रो वा समगं दिनेशमसमे चन्द्रोदयौ चेत्स्थितौ ।
युग्मौजर्क्षगतावपीन्दुशशिजौ भूम्यात्मजेनेक्षितौ
पुम्भागे सितलग्नशीतकिरणाःषट् क्लीबयोगा अमी ।।१३।।

नपुंसकयोग ।

सूर्य चन्द्रमा परस्पर देखते हों अर्थात् समराशि में स्थित चन्द्रमा विषमराशि में स्थित सूर्य को देखता हो और चन्द्रमा को सूर्य देखता हो यह एक योग हुआ । अथवा समराशि में स्थित शनैश्चर विषमराशि में स्थित बुध को देखता हो और बुध शनैश्चर को देखता हो यह दूसरा योग हुआ । अथवा मंगल विषमराशि में स्थित होकर समराशि में स्थित सूर्य को देखता हो और सूर्य मंगल को देखता हो यह तीसरा योग हुआ । अथवा लग्न और चन्द्रमा ये दोनों विषमराशि में स्थित हों और समराशि में स्थित मंगल उन्हें देखता हो यह चौथा योग हुआ । अथवा समराशि में स्थित चन्द्रमा तथा विषमराशि में स्थित बुध इन दोनों को मंगल कहीं भी स्थित होकर देखता हो यह पाँचवाँ योग हुआ । अथवा शुक्र लग्न या चन्द्रमा ये तीनों किसी राशि में पुरुषराशि के नवांश में स्थित हों यह छठवाँ योग हुआ । ये छह योग नपुंसककारक हैं। इन योगों में कोई योग गर्भाधान अथवा प्रश्नकाल में हो तो गर्भगत नपुंसक होता है ।। १३ ।।

युग्मे चन्द्रसितावथौजभवने स्युर्ज्ञारजीवोदया
लग्नेन्दू नृनिरीक्षितौ च समगौ युग्मेषु वा प्राणिनः ।
कुर्युस्ते मिथुनं ग्रहोदयगतान् द्व्यङ्गांशकान् पश्यति
स्वांशे ज्ञस्त्रितयं ज्ञगांशकवशाद्युग्मं त्वमिश्रैःसमम् ।। १४ ।।

सन्ततिद्वययोग ।

गर्भाधानकाल में अथवा प्रश्नकाल में चन्द्रमा और शुक्र ये दोनों समराशियों में स्थित हों और बुध, मङ्गल, बृहस्पति तथा लग्न ये चारों विषमराशियों में स्थित हों तो गर्भ में एक पुरुष और

एक स्त्री कहना चाहिए। अथवा लग्न तथा चन्द्रमा समराशि में स्थित हों और उन्हें कोई पुरुषसंज्ञक ग्रह देखता हो तो भी गर्भ में एक पुरुष और एक कन्या कहना चाहिए। अथवा पूर्वोक्त बुध, मङ्गल, बृहस्पति और लग्न ये सब बली होकर समराशि में स्थित हों तो भी गर्भ में एक पुरुष और एक कन्या कहना चाहिए।

सन्ततित्रययोग।

सम्पूर्ण ग्रह और लग्न ये द्विस्वभाव राशियों के नवांश में स्थित हों और उन नवांशों के सहित इन्हें अपने नवांश में स्थित बुध देखता हो तो गर्भ में तीन सन्तान कहना चाहिए, परन्तु वहाँ यह विशेष है कि बुध जिस नवांश में स्थित हो वह नवांश पुरुषसंज्ञक अथवा स्त्रीसंज्ञक हो तो उसी के अनुसार दो और एक उससे विपरीत अर्थात् मिथुन के नवांश में बुध स्थित हो तो दो पुरुष और एक स्त्री और कन्या के नवांश में स्थित हो तो दो स्त्री और एक पुरुष गर्भ में कहना चाहिए। और भी यह विशेष है कि जो बुधसहित सब ग्रह तथा लग्न ये स्त्रीसंज्ञक या पुरुषसंज्ञक नवांशों में से जिस एकही सदृश नवांशों में स्थित हों उसी के अनुसार तीनों स्त्री अथवा तीनों पुरुष गर्भ में कहना चाहिए। यथा—मिथुन के नवांश में बुध स्थित होकर मिथुन और धन के नवांशों में स्थित सबको देखता हो तो तीन पुरुष और कन्या के नवांश में स्थित बुध कन्या और मीन के नवांशों में स्थित सबको देखता हो तो तीन स्त्री गर्भ में कहना चाहिए।। १४ ।।

धनुर्धरस्यान्तगते विलग्ने
ग्रहैस्तदंशोपगतैर्बलिष्ठैः।
ज्ञेनार्किणा वीर्य्ययुतेन दृष्टे
सन्ति प्रभूता अपि कोशसंस्थाः ।। १५ ।।

अधिक सन्ततियोग।

धनराशि या धनराशि का नवांश लग्न में स्थित हो और धन

ही के नवांश में सब जगह सब ग्रह स्थित हों तथा बली बुध और शनैश्चर करके लग्न देखा जाता हो तो गर्भ में बहुत से सन्तान कहना चाहिए ।। १५ ।।

कललघनाङ्कुरास्थिचर्माङ्गजचेतनताः
सितकुजजीवसूर्य्यचन्द्रार्किबुधाः परतः ।
उदयपचन्द्रसूर्यनाथाः क्रमशो गदिता
भवति शुभाशुभं च मासाधिपतेः सदृशम् ।। १६ ।।

गर्भमासेश ।

गर्भ पहिले महीने में कलल अर्थात् मिला हुआ गाढ़ाबीज रक्त-रूप रहता है, उसका स्वामी शुक्र है। दूसरे महीने में वही घन अर्थात् कठिन होता है, उसका स्वामी मङ्गल है। तीसरे महीने में वही अंकुर अर्थात् हाथ पैरों के चिह्नवाला होता है, उसका स्वामी बृहस्पति है । चौथे महीने में वही अस्थि अर्थात् हाड़ोंवाला होता है, उसका स्वामी सूर्य है । और पाँचवें महीने में वही चर्म अर्थात् खालयुक्त होता है, उसका स्वामी चन्द्रमा है । छठे महीने में वही अंगज अर्थात् रोमयुक्त होता है और उसका स्वामी शनैश्चर है । सातवें महीने में वही चेतनतायुक्त होता है, उसका स्वामी बुध है। इससे आगे आठवें महीने में वही माता के खाये पिये अन्न जलादि का खाने पीनेवाला होता है, उसका स्वामी लग्नेश है। नवें महीने में वही फरकने लगता है, उसका स्वामी चन्द्रमा है । और दशवें महीने में उसका प्रसव अर्थात् जन्म होता है, उसका स्वामी सूर्य है । मासेश के सदृश शुभाशुभ फल होता है अर्थात् मासेश ग्रह के साथ युद्ध में हारा हो तो उसके महीने में गर्भपात हो और जो मासेश तेजस्वी न हो तो गर्भपीड़ा हो और जो मासेश तेजस्वी या बली हो तो गर्भ पुष्ट रहता है ।। १६ ।।

त्रिकोणगे ज्ञे विबलैस्ततोऽपरै-
र्मुखाङ्घ्रिहस्तैर्द्विगुणैर्युतो भवेत् ।

अवाग्गवीन्द्वावशुभैर्भसन्धिगैः
शुभेक्षितश्चेत्कुरुते गिरञ्चिरात् ॥ १७ ॥

अधिकांगयोग ।

गर्भाधानकाल में अथवा प्रश्नकाल में पाँचवें और नवें स्थान में बुध स्थित हो और सब ग्रह जहाँ स्थित हों वहाँ बलहीन हों तो गर्भ में दो शिर, चार हाथ और चार पाँववाला सन्तान कहना चाहिए ॥

मूकयोग ।

चन्द्रमा वृषराशि में स्थित हो तथा पापग्रह कर्क, वृश्चिक और मीन इन राशियों के नवें नवांश में स्थित हों तो गर्भ में मूक अर्थात् वाणीहीन सन्तान कहना चाहिए ॥

बहुत* दिन पर बोलने का योग ।

पूर्वोक्त योग रहते चन्द्रमा को शुभग्रह देखते हों तो गर्भ में बहुत दिन पर बोलनेवाला सन्तान कहना चाहिए । तथा पापग्रह मिले शुभग्रह देखते हों तो भी उक्त फल होता है और सब पाप ग्रह ही देखते हों तो पूर्वोक्त फल जानना ॥ १७ ॥

सौम्यर्क्षांशे रविजरुधिरौ चेत्सदन्तोऽत्र जातः
कुब्जस्स्वर्क्षे शशिनि तनुगे मन्दमाहेयदृष्टे ।
पंगुर्मीने यमशशिकुजैर्वीक्षिते लग्नसंस्थे
सन्धौ पापे शशिनि च जडः स्यान्न चेत्सौम्यदृष्टः ॥ १८ ॥

सदन्तयोग ।

गर्भाधानकाल में अथवा प्रश्नकाल में कन्या, मिथुन इन राशियों

---

* भगवान गार्गिः—"कुलीरालिझषान्तस्थैः पापैश्चन्द्रे वृषोपगे ।
मूकः पापेक्षितैः सौम्यैश्चिरेण लभते गिराम् ॥
मिश्रदृष्टैर्ग्रहैर्हीनैर्मूको वा लब्धवाक् चिरात् ।"

में अथवा इन राशियों के नवांशों में शनैश्चर और मंगल दोनों स्थित हों तो गर्भ में दाँतवाला सन्तान कहना चाहिए ।।

कूबरयोग ।

अपनी राशि अर्थात् कर्क में स्थित चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और उसे शनैश्चर तथा मंगल ये दोनों ग्रह देखते हों तो गर्भ में कुबरा सन्तान कहना चाहिए ।।

पंगुलायोग ।

मीन राशि लग्न में स्थित हो और उसे शनैश्चर, चन्द्रमा और मंगल ये ग्रह देखते हों तो गर्भ में पैर रहित सन्तान कहना चाहिए ।।

जड़योग ।

कर्क, वृश्चिक और मीन इन राशियों के नवें नवांश में पापग्रह युक्त चन्द्रमा स्थित हो और उन्हें कोई शुभग्रह न देखता हो तो गर्भ में बहिरा सन्तान कहना चाहिए ।। १८ ।।

सौरिशशाङ्कदिवाकरदृष्टे
वामनको मकरान्त्यविलग्ने ।
***धीनवमोदयगैश्च दृकाणैः**
पापयुतैरभुजाङ्घ्रिशिराः स्यात् ।। १९ ।।

वामनयोग ।

लग्न में नवें नवांश का उदय हो और यह नवांश मकर राशि का हो उसमें शनैश्चर, चन्द्रमा और सूर्य इन ग्रहों की दृष्टि हो तो गर्भ में वामनरूप सन्तान कहना चाहिए ।।

---

* प्रमाणं गार्गिः—"लग्नद्रेष्कोणगो भौमाः सौरसूर्येन्दुवीक्षितः ।
कुर्यादशिरसं तद्वत्पञ्चमे बाहुर्जितम् ।।
विपदं नवमस्थाने यदि सौम्यैर्न वीक्षितः ।।" इति ।।

तथा च द्वितीयप्रमाणं सारावल्याम्—
"भौमयुतो द्रेष्काणस्त्रिकोणलग्नेषु भेषु संदृष्टः ।
विभुजाङ्घ्रिमस्तकः स्याच्छनिरविचन्द्रैर्वदेद् गर्भे ।।"

हीनांगयोग ।

गर्भाधानकाल में पंचमराशि में जो पापग्रहयुक्त द्रेष्काण स्थित हो और सूर्य, चन्द्रमा तथा शनैश्चर ये ग्रह उसे देखते हों तो गर्भ में हाथरहित सन्तान और नवमराशि का वर्तमान द्रेष्काण जो ऐसा ही हो तो पाँवरहित सन्तान और जो लग्न का वर्तमान द्रेष्काण ऐसा ही हो तो शिररहित सन्तान कहना चाहिए।

और कोई इसका अर्थ दूसरी रीति से करते हैं। यथा—

'द्रेष्काणाः स्युः स्वभवनसुते त्रित्रिकोणाधिपानाम्'।। इस रीति से लग्न का दूसरा द्रेष्काण पंचमेश का हुआ और तीसरा द्रेष्काण नवमेश का हुआ तथा पहिला द्रेष्काण लग्नेश का हुआ। अतः लग्न के दूसरे द्रेष्काण में स्थित मंगल को सूर्य, चन्द्रमा और शनैश्चर ये ग्रह देखते हों तो गर्भ में हाथरहित, नवम अर्थात् लग्न का तीसरा द्रेष्काण ऐसा हो तो पाँवरहित और उदय अर्थात् लग्न का पहिला द्रेष्काण ऐसा ही हो तो शिररहित सन्तान कहना चाहिए। परन्तु इस अर्थ में कोई प्रमाण मुझे नहीं मिला। और बहुत से अर्थ लोगों ने किये हैं वे सब प्रमाणहीन हैं इसलिए मैंने नहीं लिखे ।। १९ ।।

रविशशियुते सिंहे लग्ने कुजार्किनिरीक्षिते
नयनरहितस्सौम्यासौम्यैस्सबुद्बुदलोचनः ।
व्ययगृहगतश्चन्द्रो वामं हिनस्त्यपरं रवि-
स्त्वशुभगदिता योगा याप्या भवन्ति शुभेक्षिताः ।। २० ।।

अन्धादियोग ।

गर्भाधानकाल में सूर्य और चन्द्रमा से संयुक्त सिंह लग्न हो और उसे मंगल देखता हो तो गर्भ में नेत्रहीन सन्तान कहना चाहिए। यह बात तो अर्थ ही से सिद्ध है कि सिंह राशि लग्न में हो और केवल सूर्य से संयुक्त हो और मंगल तथा शनैश्चर से दृष्ट हो तो दाहिनी आँख का काना और चन्द्रमा से संयुक्त हो और मंगल तथा शनैश्चर से दृष्ट हो तो बाँई आँख का काना सन्तान कहना

चाहिए । वही सिंह लग्न सूर्य, चन्द्रमा से संयुक्त होकर शुभाशुभ दोनों से दृष्ट हो तो गर्भ में फूलीसंयुक्त आँखवाला सन्तान कहना चाहिए । यहाँ भी दाहिने बाँयें का भेद पूर्वोक्तरीति से जानना ।

काणयोग ।

बारहवें स्थान में स्थित चन्द्रमा बाँई आँख और सूर्य दाहिनी आँख नष्ट करता है, परन्तु ये योगकारक ग्रह किसी शुभग्रह से दृष्ट न हों तो यह फल पूरा होता है और जो कोई शुभग्रह इन्हें देखता हो तो सम्पूर्ण फल नहीं होता है ॥ २० ॥

तत्कालमिन्दुसहितो द्विरसांशको य-
स्तत्तुल्यराशिसहिते पुरतः शशाङ्के ।
यावानुदेति दिनरात्रिसमानभाग-
स्तावद्गते दिननिशोः प्रवदन्ति जन्म ॥ २१ ॥

प्रसवकाल ज्ञान ।

प्रश्नकाल में अथवा गर्भाधानकाल में जहाँ कहीं जितनी संख्यावाले द्वादशांश में चन्द्रमा स्थित हो उस द्वादशांश राशि से उतनी ही संख्यावाली राशि में जब चन्द्रमा स्थित हो तब दशवें महीने में जन्म कहना चाहिए*। और कोई तो ऐसा अर्थ करते हैं कि गर्भाधानकालिक चन्द्रमा जितनी संख्यावाले द्वादशांश में स्थित हो मेषादि से उतनी संख्यावाली राशि में दशवें महीने में जब चन्द्रमा स्थित होते हैं तब गर्भस्थ का जन्म कहना चाहिए† । यद्यपि इन दोनों अर्थों में प्रमाण मिलता है तथापि विद्वज्जनों की अभिरुचि पूर्वोक्त ही अर्थ में है । नक्षत्र जानने की यह रीति है कि चन्द्रस्थ द्वादशांश प्रमाण से पूरी एक राशि आती है तो चन्द्रभुक्त द्वादशांश प्रमाण से कितनी आवेगी ? ऐसा त्रैराशिक

---

* प्रमाणं गार्गिः—"यावत्सङ्ख्ये द्वादशांशे शीतरश्मिर्व्यवस्थितः ।
तत्सङ्ख्यो यस्ततो राशिर्जन्मेन्दुस्तद्गतो वदेत् ॥"

† सारावल्याम्—"यस्मिन् द्वादशभागे गर्भाधाने व्यवस्थितश्चन्द्रः ।
तत्तुल्यर्क्षे प्रसवो गर्भस्य समादिशेत्प्राज्ञः ॥"

कल्पना करके फिर एक राशि को चन्द्रभुक्त द्वादशांश प्रमाण से गुण कर उसमें चन्द्रस्थ द्वादशांश प्रमाण से भाग दे, जो अंशादि लब्ध मिले उसी से जन्मकाल में नक्षत्र की कल्पना करे और प्रश्न अथवा गर्भाधान काल में "गोजाश्विकर्किमिथुना" इस श्लोक में कही हुई रीति से दिनसंज्ञक अथवा रात्रिसंज्ञक जो लग्न हो उसी के अनुसार दिन अथवा रात्रि में गर्भस्थ का जन्म कहना चाहिए और उस लग्न के जितने अंश व्यतीत हुए हों उतने ही अंशों के हिसाब से दिन चढ़े व रात्रि बीते जन्म कहना चाहिए। परन्तु हिसाब की यह रीति है कि जब लग्न के तीस अंश व्यतीत होते हैं तो अमुक दिनमान अथवा रात्रिमान व्यतीत होता है और जब लग्न के अमुक अंश व्यतीत हुए हैं, तो कितना दिन अथवा रात्रि व्यतीत हुई होगी ? ऐसा त्रैराशिक कल्पना करके फिर दिनमान अथवा रात्रिमान को व्यतीत लग्नांशों से गुणकर उसमें तीस का भाग दे, जो लब्ध आवे वहीं दण्डादि इष्टकाल होगा। फिर उसीपर से जन्म से पहिले ही लग्न, होरा, द्रेष्काणादिकों की कल्पना करे और उक्त नक्षत्र जिस तिथि-वासर में हो उस तिथि-वासर को तिथि-पत्र में देकर अथवा सिद्धान्तरीति से जाने ॥२१॥

उदयति मृदुभांशे सप्तमस्थे च मन्दे
यदि भवति निषेकस्सूतिरब्दत्रयेण ।
शशिनि तु विधिरेष द्वादशेऽब्दे प्रकुर्या-
त्रिगदितमिह चिन्त्यं सूतिकालेऽपि युक्त्या ॥ २२ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके
निषेकाध्यायश्चतुर्थः ॥ ४ ॥

वर्षत्रयगर्भधारणयोग ।

गर्भाधानकाल में जो राशि लग्न में स्थित हो उसमें मृदुभांश (मकर और कुम्भ के नवांश) का उदय हो और लग्न से सातवें शनैश्चर स्थित हो तो तीन वर्ष पर गर्भस्थ का जन्म कहना चाहिए॥

द्वादशवर्षगर्भधारणयोग ।

और जो गर्भाधानकालिक लग्न में कर्क के नवांश का उदय हो और लग्न से सातवें स्थान में चन्द्रमा स्थित हो तो बारह वर्ष पर गर्भस्थ का जन्म कहना चाहिए। इस गर्भाधान के अध्याय में जो जिस तरह से कहा है जन्मकाल से भी वैसे ही कहना चाहिए। प्रश्नकाल से भी ऐसे ही कहना चाहिए परन्तु बुद्धिमानों को उचित है कि सम्भव-असम्भव विचारकर फल कहें ॥ २२ ॥

दो० । श्रीवराहकृतजातके, गर्भस्थितिज्ञानाय ॥
रामरत्नकृत भाषा, विगतचतुर्थाध्याय ॥ ४ ॥

अथ सूतिकाध्यायः पञ्चमः ।

पितुर्जातः परोक्षस्य लग्नमिन्दावपश्यति ।
बिदेशस्थस्य चरभे मध्याद्भ्रष्टे दिवाकरे ॥ १ ॥

पितृपरोक्षजन्मज्ञान ।

जन्मकाल में लग्न को चन्द्रमा न देखता हो तो पिता के परोक्ष में (उस जगह में नहीं रहते) बालकादि का जन्म कहना चाहिए ॥

विदेशस्थपितृज्ञान ।

पूर्वयोग के रहते सूर्य दशमस्थान से भ्रष्ट अर्थात् नवम, अष्टम, एकादश और द्वादश स्थान में, चरराशि में स्थित हो तो जानना कि पिता के विदेश में रहते बालकादि का जन्म हुआ है। इससे यह सिद्ध हुआ कि लग्न को चन्द्रमा न देखता हो और सूर्य स्थित राशि में लग्न से अष्टम, नवम, एकादश और द्वादश स्थान में स्थित हो तो पिता के पास रहते और द्विस्वभाव राशि में स्थित हो तो पिता के रास्ते में रहते बालकादि का जन्म कहना चाहिए ॥ १ ॥

उदयस्थेऽपि वा मन्दे कुजे वास्तमुपागते ।
स्थिते चान्तः क्षपानाथे शशाङ्कसुतशुक्रयोः ॥ २ ॥

लग्न में शनैश्चर स्थित हो और लग्न को चन्द्रमा न देखता

हो तो पिता के विदेश में रहते अथवा लग्न से सातवें स्थान में मंगल स्थित हो तो भी पिता के विदेश में रहते अथवा बुध और शुक्र के बीच में चन्द्रमा स्थित हो तो भी पिता के विदेश में रहते बालकादि का जन्म कहना चाहिए ॥ २ ॥

शशाङ्के पापलग्ने वा वृश्चिकेशत्रिभागगे ।
शुभैः स्वायस्थितैर्जातः सर्पस्तद्वेष्टितोऽपि वा ॥ ३ ॥

सर्प और सर्पवेष्टित-जन्मज्ञान ।

मङ्गल के द्रेष्काण में चन्द्रमा स्थित हो और चन्द्रमा से दूसरे और ग्यारहवें स्थान में शुभग्रह स्थित हों तो सर्प का जन्म कहना चाहिए । मेष में पहिला, कर्क में दूसरा, सिंह में तीसरा, वृश्चिक में पहिला, धन में दूसरा और मीन में तीसरा द्रेष्काण मङ्गल का होता है । अथवा पापग्रह की राशि लग्न में हो और उसमें भी मङ्गल के द्रेष्काण का उदय हो तो सर्प से लिपटे प्राणी का जन्म कहना चाहिए । चन्द्रमा के क्षीण रहते, मेष में पहिला, कर्क का दूसरा, वृश्चिक का पहिला और सिंह का तीसरा ये पापलग्नगत मङ्गल के द्रेष्काण हैं अर्थात् इन्हीं में कोई राशि लग्न में हो और किसी द्रेष्काण का उदय भी हो ॥ ३ ॥

चतुष्पदगते भानौ शेषैर्वीर्य्यसमन्वितैः ।
द्वितनुस्थैश्च यमलौ भवतः कोशवेष्टितौ ॥ ४ ॥

कोशवेष्टित यमलयोग ।

मेष, सिंह, वृष, परार्द्ध धन और पूर्वार्ध मकर ये सब चतुष्पद राशियाँ हैं । इनमें से किसी भी राशि में सूर्य स्थित हो और अन्य सब ग्रह द्विस्वभाव राशियों में स्थित हों और बली भी हों तो एक जरायु से लपेटे हुए यमल अर्थात् जुड़े हुए दो सन्तान पैदा होते हैं ॥ ४ ॥

छागे सिंहे वृषे लग्ने तत्स्थे सौरेऽथवा कुजे ।
राश्यंशसदृशे गात्रे जायते नालवेष्टितः ॥ ५ ॥

नालवेष्टित जन्मज्ञान ।

मेष, वृष और सिंह इन राशियों में से कोई राशि लग्न में स्थित हो और उसमें शनैश्चर अथवा मङ्गल स्थित हो तो नाल से लपेटा हुआ सन्तान पैदा होता है और लग्न में जिस नवांश का उदय हो उसकी राशि कालांगचक्र में जिस अंग में स्थित हो उस अंग में नाल लपेटा कहना चाहिए ।। ५ ।।

न लग्नमिन्दुञ्च गुरुर्निरीक्षते
न वा शशाङ्कं रविणा समागतम् ।
सपापकोऽर्केण युतोऽथवा शशी
परेण जातं प्रवदन्ति निश्चयात् ।। ६ ।।

जारजातज्ञान ।

लग्न या चन्द्रमा को बृहस्पति न देखता हो तो पर पुरुष से पैदा हुआ सन्तान जानना । अथवा सूर्यसंयुक्त चन्द्रमा को बृहस्पति न देखता हो तो भी परपुरुष से पैदा हुआ सन्तान जानना । अथवा पापग्रहसंयुक्त चन्द्रमा सूर्यसंयुक्त हो तो भी पर पुरुष से पैदा हुआ सन्तान जानना चाहिए । यदि चन्द्रमा और लग्न बृहस्पति के नवांश में* हो तो पहला योग नहीं होता है ।। ६ ।।

क्रूरर्क्षगतावशोभनौ सूर्य्याद्द्यूननवात्मजस्थितौ ।
बद्धस्तु पिता विदेशगः स्वे वा राशिवशादथो पथि ।। ७ ।।

जातपितृबन्धनयोग ।

क्रूरग्रहों की राशियों में से किसी राशि में मङ्गल और शनैश्चर ये दोनों स्थित हों और सूर्य से पाँचवें, सातवें या नवें इनमें से किसी स्थान में हो तो पैदा हुए के बाप को बँधुआ जानना । परन्तु

*यवनेश्वरः—"अजीवभागेऽप्यनवीक्षितो वा जीवेन चन्द्रेऽथ विलग्नभे वा ।
जातं परोद्भूतमिति ब्रुवन्ति वाच्यो जनेनाथ बलावलोकात् ।" इति ।।

सूर्य चरराशि में हो तो परदेश में बँधुआ, स्थिर राशि में सूर्य स्थित हो तो अपने देश में बँधुआ तथा द्विस्वभाव राशि में स्थित हो तो रास्ते में बँधुआ जानना चाहिए ॥ ७ ॥

पूर्णे शशिनि स्वराशिगे सौम्ये लग्नगते शुभे सुखे ।
लग्ने जलजेऽस्तगेऽपि वा चन्द्रे पोतगता प्रसूयते ॥ ८ ॥

नौकास्थजन्मज्ञान ।

पूर्ण चन्द्रमा कर्क राशि में स्थित हो और लग्न में बुध स्थित हो तथा चौथे स्थान में बृहस्पति स्थित हो तो नौका में जन्म जानना। अथवा कर्क, परार्द्ध मकर और मीन इन राशियों में से कोई राशि लग्न में स्थित हो और सातवें स्थान में चन्द्रमा स्थित हो तो भी नाव में पैदा हुआ सन्तान जानना ॥ ८ ॥

आप्योदयमाप्यगः शशी सम्पूर्णः समवेक्षितेऽपि वा ।
मेषूरणबन्धुलग्नगः स्यात्सूतिः सलिले न संशयः ॥ ९ ॥

जलस्थजन्मज्ञान ।

कर्क, परार्द्ध मकर और मीन इन जलराशियों में से कोई एक राशि लग्न में स्थित हो और चन्द्रमा भी जलराशि ही में स्थित हो तो जल के समीप जन्म कहना चाहिए। अथवा लग्न में स्थित जलराशि को पूर्ण चन्द्रमा देखता हो अथवा जलराशि में स्थित चन्द्रमा दशवें, चौथे और लग्न में स्थित हो तो निश्चय जल के समीप में पैदा हुआ सन्तान जानना चाहिए ॥ ९ ॥

उदयोडुपयोर्व्ययस्थिते गुप्त्याम्पापनिरीक्षिते यमे ।
अलिकर्कयुते विलग्नगे सौरे शीतकरेक्षितेऽवटे ॥ १० ॥

कारागृहस्थजन्मज्ञान ।

लग्न और चन्द्रमा ये दोनों एक राशि में स्थित हों और इनसे बारहवें स्थान में पापग्रह से देखा जाता हुआ शनैश्चर स्थित हो तो जेलखाने में जन्म जानना चाहिए ॥

गर्तस्थजन्मज्ञान ।

वृश्चिक अथवा कर्क लग्न में स्थित शनैश्चर को चंद्रमा देखता हो तो गड़हे (खाईं) में जन्म जानना ।। १० ।।

मन्देऽब्जगते विलग्नगे बुधसूर्य्येन्दुनिरीक्षिते क्रमात् ।
क्रीडाभवने सुरालये सोषरभूमिषु च प्रसूयते ।। ११ ।।

क्रीड़ागृह-देवगृह-ऊषर-भूमिजन्मज्ञान ।

शनैश्चर जलराशि का होकर लग्न में स्थित हो और उसे बुध सूर्य तथा चन्द्रमा ये ग्रह देखते हों तो क्रम से विहारस्थान, देवस्थान और ऊषर भूमि में जन्म जानना अर्थात् जलराशिस्थ लग्नगत शनैश्चर को बुध देखता हो तो विहारस्थान में और सूर्य देखता हो तो देवस्थान में तथा चन्द्रमा देखता हो तो ऊषर भूमि में जन्म जानना चाहिए ।। ११ ।।

नृलग्नगं प्रेक्ष्य कुजः श्मशाने
रम्ये सितेन्दू गुरुरग्निहोत्रे ।
रविर्नरेन्द्रामरगोकुलेषु
शिल्पालये ज्ञः प्रसवं करोति ।। १२ ।।

श्मशानादिजन्मज्ञान ।

मनुष्य (मिथुन, कन्या, पूर्वार्द्ध धन, तुला और कुम्भ) राशियों में से किसी राशि में स्थित शनैश्चर लग्न में स्थित हो और उसे मङ्गल देखता हो तो श्मशान (मुर्दा फूँकने की जगह) में, चन्द्रमा या शुक्र देखते हों तो रमणीय स्थान में, बृहस्पति देखता हो तो अग्निशाला में और सूर्य देखता हो तो राजा के घर, देवस्थान अथवा गोशाला में और बुध देखता हो तो थवई के घर में जन्म जानना चाहिए ।। १२ ।।

राश्यंशसमानगोचरे मार्गे जन्म चरे स्थिरे गृहे ।
स्वर्क्षांशगते स्वमन्दिरे बलयोगात्फलमंशकर्क्षयोः ।। १३ ।।

जन्मदेशज्ञान ।

तात्कालिक जन्मलग्न में जिस राशि और नवांश का उदय हो उस राशि और नवांश राशि के सदृश जिस स्थान में प्राणी वास करता हो उसी स्थान में जन्म कहना चाहिए और जो वह राशि और नवांशराशि चरसंज्ञक हो तो उसके सदृश प्राणी जिस मार्ग होकर चलता हो उस मार्ग में जन्म कहना चाहिए। ऐसे ही स्थिरसंज्ञक हो तो उसके घर में और द्विस्वभावसंज्ञक हो तो उसके घर से बाहर जन्म कहना चाहिए और जो जन्मलग्नराशि ही के नवांश का उदय हो तो उसके सदृश प्राणी के घर में जन्म कहना चाहिए और जहाँ पर लग्नराशि और नवांशराशि भिन्न भिन्न है वहाँ जो बली हो उसी से विचार करना चाहिए ।। १३ ।।

आरार्कजयोस्त्रिकोणगे चन्द्रेऽस्ते च विसृज्यतेऽम्बया ।
दृष्टे सुरराजमन्त्रिणा दीर्घायुस्सुखवांश्च स्मृतः ।। १४ ।।

मातृत्यक्त सन्तानज्ञान ।

मंगल और शनैश्चर एक राशि में स्थित हों और उनसे पाँचवें, नवें और सातवें स्थान में चन्द्रमा स्थित हो तो उस पैदा हुए संतान को माता छोड़ देती है और जो ऐसे ही योग में चन्द्रमा को बृहस्पति देखता हो तो माता करके छोड़ा हुआ भी बहुत दिनों तक जीता तथा सुखी होता है ।। १४ ।।

पापेक्षिते तुहिनगावुदये कुजेऽस्ते
त्यक्तो विनश्यति कुजार्कजयोस्तथाये ।
सौम्येऽपि पश्यति तथाविधहस्तमेति
सौम्येतरेषु परहस्तगतोऽप्यनायुः ।। १५ ।।

मातृत्यक्त मृत्युयोग ।

पापग्रहों से देखा हुआ चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और सातवें स्थान में मंगल स्थित हो तो माता करके छोड़ा हुआ सन्तान मर जाता है। अथवा पापग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और

ग्यारहवें स्थान में मंगल और शनैश्चर ये दोनों स्थित हों तो भी माता करके छोड़ा हुआ मर जाता हैं अथवा पापग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और उसे शुभग्रह भी देखते हों तो माता करके छोड़ा हुआ भी सन्तान देखनेवाले शुभग्रहों के सदृश वर्णवाले किसी मनुष्य के हाथ लगता है अर्थात् चन्द्रमा को देखनेवाला शुभग्रह या पापग्रह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णों में से जिस वर्ण का ईश हो उसी वर्णवाले मनुष्य के अधीन होता है और जहाँ बहुत से देखनेवाले ग्रह हों वहाँ जो बलवान् हों उसी के वर्णवाले मनुष्य के अधीन होता है और जो केवल पापग्रह ही चन्द्रमा को देखते हो और बृहस्पति न देखता हो तो पराये हाथ जाकर भी मर जाता है ।। १५ ।।

पितृमातृगृहेषु तद्बलात्तरुशालादिषु नीचगैः शुभैः ।
यदि नैकगतैस्तु वीक्षितौ लग्नेन्दू विजने प्रसूयते ।। १६ ।।

जन्मगृहज्ञान ।

पूर्वोक्त पितृसंज्ञक, पितृव्यसंज्ञक, मातृसंज्ञक और मातृष्वसृसंज्ञक इन सब ग्रहों में जो सबसे बलवान् हो उसी के घर में अर्थात् जो पितृ संज्ञकग्रह बलवान् हो तो पिता के घर में, मातृसंज्ञक ग्रह बलवान् हो तो माता के घर में, पितृव्यसंज्ञक ग्रह बलवान् हो तो पिता के भाई के घर में और मातृष्वसृसंज्ञक ग्रह बली हो तो माता की बहिन के घर में जन्म कहना चाहिए अथवा सम्पूर्ण शुभग्रह अपने नीचस्थान में स्थित हों तो वृक्षादि के नीचे, मकान के समीप में या पर्वत-बगीचा इत्यादि के समीप में जन्म कहना चाहिए । अथवा अपने नीचस्थानों में स्थित शुभग्रह एक राशि में स्थित लग्न या चन्द्रमा इन दोनों को न देखते हों तो वन में जन्म कहना चाहिए परन्तु उक्त शुभग्रह तीन से कम न हों ।। १६ ।।

मन्दर्क्षांशे शशिनि हिबुके मन्ददृष्टेऽब्जगे वा
तद्युक्ते वा तमसि शयनं नीचसंस्थैश्च भूमौ ।

यद्वद्राशिर्व्रजति हरिजं गर्भमोक्षस्तु तद्वत्
पापैश्चन्द्रात्स्मरसुखगतैः क्लेशमाहुर्जनन्याः ॥ १७ ॥

दीपासंभव-संभवज्ञान ।

जन्मकाल में चन्द्रमा शनैश्चर के नवांश में स्थित हो तो अंधकार में जन्म जानना । अथवा लग्न से चौथे स्थान में चन्द्रमा स्थित हो तो भी अन्धकार में जन्म जानना । अथवा चन्द्रमा को शनैश्चर देखता हो तो अन्धकार में जन्म जानना । अथवा कर्क और मीन इन जलराशियों के नवांश में कहीं चन्द्रमा स्थित हो तो भी अन्धकार में जन्म जानना । अथवा शनैश्चर संयुक्त चन्द्रमा हो तो भी अन्धकार में जन्म जानना और इन योगों में चन्द्रमा को सूर्य देखता हो तो प्रकाश* में जन्म जानना चाहिए । ऐसे ही गर्भाधानकाल में भी अन्धकारादि ज्ञान होता है ॥

भूशयनज्ञान ।

तीन या अधिक ग्रह अपने नीच स्थान में स्थित हों तो भूमि में शयन जानना चाहिए ॥

प्रसवप्रकारज्ञान ।

जो लग्न में स्थित राशि जिस तरह उदय को प्राप्त होती हो उसी तरह बालक का जन्म जानना । यथा—शीर्षोदय राशि लग्न में स्थित हो तो उत्तान मुख और पृष्ठोदय राशि लग्न में स्थित हो तो पीठ ऊपर किये पैदा होता है । कोई-कोई कहते हैं कि शीर्षोदय राशि लग्न में स्थित हो तो शिर के बल और पृष्ठोदय राशि लग्न में स्थित हो तो पैर के बल और उभयोदयराशि† लग्न में स्थित हो तो हाथों के बल पैदा हुआ जानना चाहिए ॥

---

*यवनेश्वरः—"सौरांशकस्थे शशिनि प्रलग्ने जले जलाख्यांशकमाश्रिते वा ।
स्वांशस्थिते केन्द्रगतेऽर्कजे वा जातस्तमिश्रे यदि नार्कदृष्टः ॥"

तथा च सारावल्याम्—"बलवति सूर्ये दृष्टे बहुप्रदीपा धरा कुपुत्रेण ।
अन्यैर्व्यपगतवीर्यैः सूतौ ज्योतिस्तृणैर्भवति ॥"

† सारावल्याम्—"शीर्षोदये विलग्ने मूर्ध्ना प्रसवोऽन्यथा चरणैः ।
उभयोदये च हस्तैः शुभदृष्टे शोभनोऽन्यथा कष्टः ॥"

प्रसवकालिकमातृकष्टज्ञान ।

यदि पापग्रह चन्द्रमा से संयुक्त हों अथवा लग्न से सातवें स्थान में स्थित हों अथवा चौथे स्थान में स्थित हों तो प्रसव होने के समय माता को बहुत क्लेशित जानना ॥ १७ ॥

स्नेहः शशाङ्कादुदयाच्च वर्त्ति-
र्दीपोऽर्कयुक्तर्क्षवशाच्चराद्यः ।
द्वारं च तद्वास्तुनि केन्द्रसंस्थै-
र्ज्ञेयं ग्रहैर्वीर्य्यसमन्वितैर्वा ॥ १८ ॥

दीपज्ञान ।

जन्मकाल में जिस राशि में चन्द्रमा स्थित हो उसके आदि ही में स्थित हो तो तेल से भरा हुआ दीपक जानना। जो मध्य में चन्द्रमा स्थित हो तो आधा भरा हुआ और जो राशि के अन्त में चन्द्रमा स्थित हो तो तेल से खाली दीपक जानना। इसी तरह जितने अंश चन्द्रमा भोग कर चुका हो उतने अंश तेल कम कहना चाहिए और लग्न के जितने अंश बीत चुके हों उतनी ही बत्ती जली जानो और सूर्य जिस राशि में स्थित हो उसी के अनुसार दीप को जानना अर्थात् चरराशि में सूर्य स्थित हो तो दीप लिये किसी को घूमते जानो और जो सूर्य स्थिरराशि में स्थित हो तो दीप को भी स्थित जानो तथा जो द्विस्वभाव राशि में सूर्य स्थित हो तो चालित या स्थापित जानो। कोई कहते हैं कि जिस राशि में सूर्य स्थित हो वह राशि जिस दिशा का ईश हो उसी दिशा में, जन्मघर में दीप कहना और कोई कहते हैं कि आठ पहर दिन राति के हिसाब से जिस दिशा में सूर्य स्थित हो उस दिशा में दीप का स्थान कहना और कोई कहते हैं कि घर के बाहर* खण्ड कल्पना करके पूर्वादि क्रम से मेषादि राशियों का वहाँ न्यास करे जिस राशि में सूर्य स्थित हो उसी खण्ड में दीप या दीप का स्थान

*सारावल्याम्—"द्वादशभागविभक्ते वासगृहेऽवस्थिते सहस्रांशौ ।
दीपश्चरस्थिरादिषु तथैव वाच्यः प्रसवकाले ॥"

जानो । लग्न राशि का जो वर्ण अर्थात् रंग पहिले कहा है ,बत्ती का भी रंग वैसा ही कहना चाहिए ।।

सूतिकागृहद्वारज्ञान ।

लग्नादि केन्द्रों में स्थित ग्रहों के क्रम से सूतिकाघर का दरवाजा कहना चाहिए अर्थात् केन्द्र में जो ग्रह स्थित हो उस ग्रह की जो दिशा कही है उसी दिशा के सामने सूतिका घर का दरवाजा कहना चाहिए । जो कदाचित् बहुत से ग्रह केन्द्र में स्थित हों तो उनमें जो बलवान् हो उसकी दिशा के सामने और जो कोई ग्रह केन्द्र में न हों तो लग्नराशि की दिशा के सामने सूतिका घर का दरवाजा कहना चाहिए ।। १८ ।।

जीर्णं संस्कृतमर्कजे क्षितिसुते दग्धं नवं शीतगौ
काष्ठाढ्यं न दृढं रवौ शशिसुते तन्नैकशिल्पोद्भवम् ।
रम्यं चित्रयुतं नवं च भृगुजे जीवे दृढं मन्दिरं
चक्रस्थैश्च यथोपदेशरचना सामन्तपूर्वां वदेत् ।। १९ ।।

सूतिकागृहस्वरूपज्ञान ।

सब ग्रहों से बली शनैश्चर हो तो सूतिका घर मरम्मत किया हुआ पुराना जानना और जो सबसे बली मंगल हो तो जला हुआ सूतिका घर और जो चन्द्रमा बली हो तो नया सूतिका घर शुक्लपक्ष में लीपा हुआ और सूर्य बली हो तो पुष्टतारहित बहुत काठ का तथा जो बुध बली हो तो अनेक थवइयों करके बनाया हुआ और जो शुक्र बली हो तो बहुत सुन्दर मनका प्रसन्न करनेवाला, नया और अनेक तसबीरों से संयुक्त सूतिका घर और जो बृहस्पति बली हो तो बहुत पोढ़ा सूतिका घर कहना चाहिए । इन ग्रहों के समीप में जो ग्रह स्थित हो पूर्वोक्त रीति से उसके अनुसार सूतिका गृह के समीपवर्ती मकान आदि जानना चाहिए और फिर जैसा देश काल अवस्था हो उसके अनुसार कहना चाहिए ।।१९।।

मेषकुलीरतुलालिघटैः प्रागुत्तरतो गुरुसौम्यगृहेषु ।
पश्चिमतश्च वृषेण निवासो दक्षिणभागकरौ मृर्गसिंहौ ॥२०॥

घर में भी सूतिकाघर का ज्ञान ।

मेष, कर्क, तुला, वृश्चिक और कुम्भ इन राशियों में से कोई भी लग्न में स्थित हो अथवा इन राशियों के नवांश लग्न में स्थित हों तो घर में पूर्व तरफ सूतिका घर और धन, मीन, मिथुन और कन्या इन राशियों में से कोई लग्न स्थित हो अथवा इन राशियों का नवांश लग्न में स्थित हो तो उत्तर तरफ सूतिका घर और वृष राशि लग्न में स्थित हो अथवा वृष का नवांश लग्न में स्थित हो तो पश्चिम तरफ सूतिका घर तथा मकर और सिंह इनमें कोई राशि लग्न में स्थित हो अथवा इन राशियों का नवांश लग्न में स्थित हो तो दक्षिण तरफ सूतिका घर कहना चाहिए ॥ २० ॥

प्राच्यादिगृहे क्रियादयो द्वौ द्वौ कोणगता द्विमूर्त्तयः ।
शय्यास्वपि वास्तुवद्वदेत्पादैः षट्त्रिनवान्त्यसंस्थितैः ॥ २१ ॥

सूतिकाशयनस्थानज्ञान ।

सूतिका घर में मेषादि दो दो राशियों के क्रम से पूर्वादि दिशाओं में सूतिकाशयन और एक एक द्विस्वभाव राशि के क्रम से आग्नेयादि कोणों में सूतिकाशयन कहना चाहिए अर्थात् मेष या वृष राशि लग्न में स्थित हो तो पूर्व दिशा में, मिथुनराशि लग्न में स्थित हो तो आग्नेय कोण में, कर्क और सिंह राशि लग्न में स्थित हो तो दक्षिण दिशा में, कन्या राशि लग्न में स्थित हो तो नैर्ऋत्य कोण में, तुला और वृश्चिक राशि लग्न में स्थित हो तो पश्चिम दिशा में, धन राशि लग्न में स्थित हो तो वायव्य कोण में, और मकर या कुम्भ राशि लग्न में स्थित हो तो उत्तर दिशा में तथा मीन राशि लग्न में स्थित हो तो ईशान कोण में सूतिका की शय्या कहना चाहिए ॥

खट्वांगज्ञान ।

लग्नादि भावों के क्रम से पूर्वोक्त रीति से खाट के अंग जानना

परन्तु छः, तीन, नव और बारह ये भाव पायों की जगह पर समझे अर्थात् जिस लग्न में जन्म हो उस लग्न राशि की जो दिशा कही है उसी दिशा में शिरहाना जानना । लग्न और द्वितीय ये दो भाव खाट के शिरहाने में, तीसरा भाव अगले दक्षिण पाया में, चौथा और पाँचवाँ भाव दाहिनी पाटी में, छठा भाव पिछले दक्षिण पाया में सातवाँ और आठवाँ ये दोनों भाव पैताने में, और नवाँ भाव पिछले बायें पाया में, दशवाँ और ग्यारहवाँ भाव बाँईं पाटी में और बारहवाँ भाव शिरहाने के बाँयें पाया में न्यास करे। प्रयोजन यह है कि जिस स्थान में शुभग्रह की स्थिति दृष्टि आदि हो उस स्थान की पुष्टता और जिस स्थान में क्रूरग्रहादि की स्थित दृष्टि आदि हो उस स्थान की क्षीणता जानना ।। २१ ।।

चन्द्रलग्नान्तरगतैर्ग्रहैः स्युरुपसूतिकाः ।
बहिरन्तश्च चक्रार्द्धे दृश्यादृश्येऽन्यथापरे ।। २२ ।।

उपसूतिका-संख्याज्ञान ।

लग्न और चन्द्रमा के बीच में जितने ग्रह स्थित हों उतनी स्त्रियाँ उस प्रसव करनेवाली स्त्री के पास कहना चाहिए परन्तु वहाँ यह विशेष है कि जो ग्रह अपने स्थान में स्थित हो उसकी द्विगुणी, जो ग्रह अपने उच्च स्थान में स्थित हो अथवा वक्री हो उसकी तिगुणी कहना चाहिए। और ग्रह के तुल्य रूप, गुण, वर्ण, रंग, वस्त्र और भूषणवाली स्त्रियाँ कहना चाहिए। जितने ग्रह दृश्यचक्रार्द्ध अर्थात् सप्तमभाव से लग्नपर्य्यन्त में स्थित हों उतनी स्त्रियाँ सूतिका-घर से बाहर और जितने ग्रह अदृश्य चक्रार्द्ध अर्थात् लग्न से सप्तमभाव पर्य्यन्त में स्थित हों उतनी स्त्रियाँ सूतिका घर के भीतर कहना चाहिए। यद्यपि अन्य आचार्य उक्त रीति से विपरीत अर्थात् जितने ग्रह दृश्यचक्रार्द्ध में स्थित हों उतनी स्त्रियाँ सूतिका घर के भीतर और जितने ग्रह अदृश्यचक्रार्द्ध में स्थित हों उतनी स्त्रियाँ सूतिका घर के बाहर कहते हैं परन्तु इस ग्रन्थकार का यह अभिप्राय नहीं है।। २२ ।।

लग्ननवांशपतुल्यतनुः स्याद्वीर्य्ययुतग्रहतुल्यतनुर्वा ।
चन्द्रसमेतनवांशपवर्णः कादिविलग्नविभक्तभगात्रः ॥ २३ ॥

बालस्वरूपज्ञान ।

जन्मकालिक लग्न में जो नवांश उदित हो उसके स्वामी के समान रूप, गुण और वर्णवाला अथवा सब ग्रहों में जो ग्रह बलवान् हो उसी के समान रूप-देहादिवाला अथवा चन्द्रमा जिस राशि के नवांश में स्थित हो उस या नवांश राशि के स्वामी के समान रूपादिवाला सन्तान होता है ।।

ह्रस्वदीर्घाङ्गज्ञान ।

जैसे कालांगचक्र में राशियों के स्थान में शिर आदि अंगों की कल्पना किया है वैसे ही लग्नादि बारह भावों में भी कल्पना करे । यथा—लग्नस्थान में शिर, दूसरे स्थान में मुख, तीसरे स्थान में जठर, चौथे स्थान में हृदय, पाँचवें स्थान में कोखी, छठे स्थान में करिहाँव, सातवें स्थान में बस्ति अर्थात् लिग और नाभि का बीच, आठवें स्थान में लिंग, नवम स्थान में अण्डकोश, दशमस्थान में ऊरू अर्थात् पैर की सन्धि, ग्यारहवें स्थान में जानु अर्थात् पैर के बीच की गाँठियाँ, बारहवें स्थान में जंघा अर्थात् फीली या पैर की कल्पना करे । प्रयोजन यह है कि (पूर्वार्द्धे विषयादयः) इस श्लोक में ह्रस्व या दीर्घ जो राशियों का प्रमाण कहा हैं उसी के अनुसार ह्रस्व राशीश या दीर्घराशीश जिस राशि में जो ग्रह स्थित हों और वहाँ ही जिस अंग का न्यास हो उस राशि या उस राशीश के समान उस अंग का प्रमाण होता है । जो बहुत से ग्रह स्थित हों तो जो बली हो उसके अनुसार तथा वहाँ कोई भी ग्रह न हो तो राशि-के अनुसार प्रमाण होता है और जो राशि तथा वहाँ स्थित अन्य राशीश ये दोनों भिन्न २ प्रमाण वाले हों तो मध्य प्रमाण अंग और जो दोनों तुल्य प्रमाणवाले हों तो अति ह्रस्व या अति दीर्घादि अंग जानना चाहिए ।। २३ ।।

कं दृक्छ्रोत्रनसाकपोलहनवो वक्त्रञ्च होरादय-
स्ते कण्ठांसकबाहुपार्श्वहृदयक्रोडानि नाभिस्ततः।
बस्तिर्लिङ्गगुदे ततश्च वृषणावूरूततो जानुनी
जङ्घाङ्घ्रीत्युभयत्र वाममुदितैर्द्रेष्काणभागैस्त्रिधा ॥ २४ ॥

व्रणमशकादि निरूपण ।

शरीर के तीन भाग करे उसकी यह रीति है कि लग्न के पहिले द्रेष्काण का उदय हो तो शिर से लेकर मुखपर्यन्त बारह अंगों का एक भाग और जो दूसरे द्रेष्काण का उदय हो तो कण्ठ से लेकर नाभिपर्य्यन्त बारह अंगों का दूसरा भाग और जो तीसरे द्रेष्काण का उदय हो तो बस्ति से लेकर अंघ्रिपर्यंत बारह अंगों का तीसरा भाग हुआ। इन तीनों भागों में जिसका संभव हो उस भाग के बारह-बारह अंगों को लग्नादिभावों में न्यास करे और दृश्यादृश्य चक्रार्द्ध भाग से वाम दक्षिण भाग की कल्पना करे।

यथा पहिले भाग का सम्भव हो तो लग्न में शिर, दूसरे में दक्षिण नेत्र, बारहवें भाव में वाम नेत्र, तीसरे भाव में दक्षिण कान ग्यारहवें भाव में वाम कान, चौथे में नाक का दक्षिण स्वर, दशवें, भाव में वाम स्वर, पांचवें भाव में दक्षिण गाल, नवें भाव में वाम गाल, छठे भाव में दक्षिण दाढ़ी, आठवें भाव में वाम दाढ़ी, सातवें भाव में मुख का न्यास करे। ऐसे ही दूसरे भाग का संभव हो तो लग्न में कण्ठ, दूसरे में दक्षिण स्कन्ध, बारहवें में वाम स्कन्ध, तीसरे में दक्षिण बाहु, ग्यारहवें में वाम बाहु, चौथे में दक्षिण पार्श्व अर्थात् पांजर, दशवें में वाम पार्श्व, पाँचवें में हृदय का दक्षिण भाग नवें भाव में वाम भाग, छठे भाब में पेट का दक्षिण भाग, आठवें में वाम भाग, सातवें भाव में नाभि का न्यास करे। ऐसे ही तीसरे भाव का सम्भव हो तो लग्न में बस्ति अर्थात् लिंग नाभि का मध्य भाग, दूसरे भाव में लिंग व गुदा का दक्षिण भाग, बारहवें में वाम भाग, तीसरे भाव में अण्डकोश का दक्षिण भाग, ग्यारहवें भाग में वाम भाग, चौथे भाव में दक्षिण ऊरू

अर्थात् पैर की सन्धि, दशवें में वाम ऊरू, पाँचवें भाव में दक्षिण पैर की गाँठि, नवें भाव में वाम पैर की गाँठि, छठे भाव में दक्षिण फीली, आठवें भाव में वाम फीली और सातवें भाव में दोनों पैरों का न्यास करे ।। २४ ।।

अङ्ग चिह्न चक्र ।

१	२	३	४	५	६	७	राशि
शिर	नेत्र	कान	नाक	गाल	दाढ़ी	मुख	१द्रे०दक्षि०
कंठ	स्कंध	बाहु	पार्श्व	हृदय	पेट	नाभि	२द्रे०दक्षि०
बस्ति	लिंग	कोष	ऊरू	पैरगांठि	फीली	पैर	३द्रे०दक्षि०
१	१२	११	१०	९	८	७	राशि
शिर	नेत्र	कान	नाक	गाल	दाढ़ी	मुख	१द्रे० वाम
कंठ	स्कंध	बाहु	पार्श्व	हृदय	पेट	नाभि	२द्रे० वाम
बस्ति	लिंग	कोष	ऊरू	पैरगांठि	फीली	पैर	३द्रे० वाम

तस्मिन्पापयुते व्रणः शुभयुते दृष्टे च लक्ष्मादिशे-
त्स्वर्क्षांशस्थिरसंयुते तु सहजः स्यादन्यथागन्तुकः ।

मन्देश्मानिलजोऽग्निशस्त्रविषजो भौमे बुधे भूभवः
सूर्ये काष्ठचतुष्पदेन हिमगौ शृङ्ग्यब्जजोऽन्यैः शुभम् ।।२५।।

जिस अंगराशि में पापग्रह बैठा हो अथवा उसे देखता हो तो उस अंग में घाव इत्यादि कहे। और जिस अंगराशि को शुभग्रह देखता हो अथवा उससे संयुक्त हो उस अंग में तिल मशा इत्यादि चिह्न कहे और जो उक्त ग्रह अपनी राशि या नवांश व स्थिर राशि या राशि के नवांश में स्थित हो तो घाव मशा तिल इत्यादि संग पैदा हुआ कहे। और उक्त स्थान से विपरीत स्थित हो तो आगन्तुक अर्थात् उस ग्रह की दशा में पैदा हुआ कहे। जो अंग-राशि, शनैश्चर से संयुक्त या दृष्ट हो तो पत्थर के लगने से अथवा जल से या वात से पैदा हुआ घाव इत्यादि कहना चाहिए और जो अंगराशि मङ्गल से संयुक्त या दृष्ट हो तो अग्नि, विष या हथि-यार से पैदा हुआ घाव इत्यादि कहना चाहिए और जो अंगराशि बुध से संयुक्त या दृष्ट हो तो भूमि में गिरना इत्यादि या ढीला आदि लगने से घाव कहना चाहिए और जो अंगराशि सूर्य से युक्त या दृष्ट हो तो काष्ठ के लगने इत्यादि से अथवा चार पाँववाले जीवों के मारने या काटने इत्यादि से घाव इत्यादि कहना चाहिए और जो अंगराशि चन्द्रमा से संयुक्त या दृष्ट हो तो सींग वाले जन्तु अथवा जल में रहनेवाले जन्तुओं से घाव इत्यादि कहना चाहिए और अन्य शुभग्रहों से संयुक्त या दृष्ट होने से घाव इत्यादि नहीं होता है ।। २५ ।।

व्रणनिश्चयज्ञान ।

समनुपतिता यस्मिन्भागे त्रयः सबुधा ग्रहा
भवन्ति नियमात्तस्यावाप्तिः शुभेष्वशुभेषु वा ।
व्रणकृदशुभः षष्ठो देहे तनोर्भसमाश्रिते
तिलकमशकृद्दृष्टः सौम्यैर्युतश्च स लक्ष्मवान् ।। २६ ।।

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके सूतिकाध्यायः पञ्चमः ।।

जिस वाम * या दक्षिण अंगभागराशि में तीन अन्य ग्रह चौथे बुध के सहित स्थित हों तो उस अंग में निश्चय करके घाव इत्यादि हो, फिर वे तीनों बुध के सहित चारों ग्रह पापग्रह हों अथवा शुभग्रह हों इसका कुछ नियम नहीं है। और जो ग्रह बली हो उसी की दशा में घाव इत्यादि होता है अथवा जो अशुभग्रह लग्न से छठे स्थान में स्थित हो तो छठे स्थान में स्थित राशि पूर्वोक्त कालांग चक्र में, जिस अंग में स्थित हो उसी अंग में घावकारक होता है और जो छठे स्थान में स्थित पापग्रह शुभग्रह करके देखा जाता हो तो पूर्वोक्त अंग में तिल या मशाकारक होता है और जो वही शुभग्रह करके संयुक्त हो तो पूर्वोक्त अंग में लक्ष्म (काले बालों का समूह) होता है और वही छठे स्थान में स्थित पापग्रह अपनी राशि या नवांश स्थिर राशि या स्थिर राशि के नवांश में स्थित हो तो वह घाव इत्यादि संग पैदा हुआ कहना और जो अन्य स्थान में स्थित हो तो घाव इत्यादिकारक ग्रह की दशा में घाव इत्यादि कहना चाहिए ॥ २६ ॥

दो० । श्रीवराहकृतजातके, जन्मविविधज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत पंचमाध्याय ॥ ५ ॥

अथारिष्टाध्यायः षष्ठः ।

सन्ध्यायां* हिमदीधितिहोरा पापैर्भान्तगतैर्मरणाय ।
प्रत्येकं शशिपापसमेतैः केन्द्रैर्वा स विनाशमुपैति ॥ १ ॥

अरिष्टयोग ।

जिसका संध्याकाल में जन्म हो और लग्न में चन्द्रमा का होरा तथा लग्न के अन्त्य नवांश में पापग्रह स्थित हों तो उस बालक का मरण होता है। अथवा चन्द्रमा और तीन पापग्रह ये चारों, चारों केन्द्रों में स्थित हों अर्थात् एक में चन्द्रमा, एक में

---

* संहितायाम्—"अर्धास्तमयात्संध्या व्यक्तीभूता न तारका यावत् ।
तेजः परिहानिमुखाद्भानोरर्धोदयो यावत् ॥"

मंगल, एक में शनि और एक में सूर्य स्थित हों तो पैदा हुआ बालकादि शीघ्र ही मर जाता है ॥ १ ॥

चक्रस्य पूर्वापरभागगेषु
क्रूरेषु सौम्येषु च कीटलग्ने ॥
क्षिप्रं विनाशं समुपैति जातः
पापैर्विलग्नास्तमयान्वितैश्च ॥ २ ॥

अन्य अरिष्टयोग ।

चक्र अर्थात् लग्नादि बारह भावों के पूर्वार्द्ध में क्रूरग्रह स्थित हों और परार्द्ध भाग में शुभग्रह स्थित हों तथा वृश्चिक या कर्क लग्न हो ऐसे योग में पैदा हुआ शीघ्र ही मर जाता है। लग्न के जितने अंश भुक्त हो चुके हैं चौथे स्थान के उतने अंशों को छोड़कर शेष अंशों से लेकर दशवें भाव में चतुर्थ के भुक्तांशों तक चक्रपरार्द्ध कहा जाता है शेष पूर्वार्द्ध होता है। पापग्रह लग्न और सातवें स्थान के दोनों तरफ स्थित हों अर्थात् बारहवें, दूसरे, छठे और आठवें स्थानों में पापग्रह स्थित हों तो भी पैदा हुआ बाल-कादि शीघ्र ही मर जाता है। और कोई तो यहाँ दो योग कहते हैं अर्थात् बारहवें और दूसरे स्थानों में पापग्रह हों तो शीघ्र ही मर जाता है यह एक। छठे और आठवें स्थानों में जो पापग्रह स्थित हों तो भी पैदा हुआ शीघ्र ही मर जाता है यह दो। और कोई अन्य अर्थ करते हैं। यथा—लग्न और सातवें स्थान के सम्मुख अर्थात् दूसरे और आठवें स्थान में पापग्रह हों तो ऐसे योग में पैदा हुआ शीघ्र ही मर जाता है। और कोई आचार्य इतर अर्थ कहते हैं। यथा—लग्न या सातवें स्थान की अभिलाषा करनेवाले पापग्रह हों अर्थात् बारहवें या छठे स्थान में पापग्रह स्थित हों तो ऐसे योग में पैदा हुआ शीघ्र ही मर जाता है ॥ २ ॥

पापावुदयास्तगतौ क्रूरेण युतश्च शशी ।
दृष्टश्च शुभैर्न यदा मृत्युस्तु भवेदचिरात् ॥ ३ ॥

अरिष्टयोगान्तर ।

एक पापग्रह लग्न में स्थित हो और एक पापग्रह सातवें स्थान

में स्थित हो और चन्द्रमा जहाँ कहीं स्थित हो वहाँ पापग्रह से युक्त हो और कोई शुभग्रह चन्द्रमा को न देखता हो तो पैदा हुए का शीघ्र ही मरण होता है ॥ ३ ॥

क्षीणे हिमगौ व्ययगे पापैरुदयाष्टमगैः* ।
केन्द्रेषु शुभाश्च न चेत्क्षिप्रं निधनं प्रवदेत् ॥ ४ ॥

अन्य अरिष्टयोग ।

क्षीण चन्द्रमा बारहवें स्थान में स्थित हो और लग्न तथा आठवें स्थान में पापग्रह स्थित हों और केन्द्र में कोई भी शुभग्रह न स्थित हो तो पैदा हुए का शीघ्र ही मरण होता है ॥ ४ ॥

क्रूरसंयुतः शशी स्मरान्त्यमृत्युलग्नगः ।
†कण्टकाद्बहिः शुभैरवीक्षितस्तु मृत्युदः ॥ ५ ॥

अन्य अरिष्टयोग ।

क्रूरग्रह संयुक्त चन्द्रमा सातवें, बारहवें, आठवें या लग्न इन स्थानों में से किसी में स्थित हो और उसे कोई शुभग्रह न देखते हों तथा सब शुभग्रह केन्द्र से बाहर स्थित हों तो पैदा हुआ शीघ्र ही मर जाता है ॥ ५ ॥

शशिन्यरिविनाशगे निधनमाशु पापेक्षिते
शुभैरथ समाष्टकं दलमतश्च मिश्रैः स्थितिः ।
असद्भिरवलोकिते बलिभिरत्र मासं शुभे
कलत्रसहिते च पापविजिते विलग्नाधिपे ॥ ६ ॥

---

* भगवान् गार्गिः—"क्षीणे चन्द्रे व्ययगते पापैरष्टमलग्नगैः ।
केन्द्रबाह्यगतैः सौम्यैर्जातस्य निधनं वदेत् ।"

† सारावल्याम्—"व्ययाष्टसप्तोदयगे शशाङ्के पापैः समेते शुभदृष्टिहीने ।
केन्द्रेषु सौम्यग्रहवर्जितेषु जातस्य सद्यः कुरुते प्रणाशम् ॥"

अन्य अरिष्टयोग ।

लग्न से छठे या आठवें स्थान में चन्द्रमा स्थित हो और उसे कोई पापग्रह देखता हो और शुभग्रह न देखता हो तो पैदा हुए का शीघ्र ही मरण होता है । अथवा लग्न से छठे या आठवें स्थान में स्थित चन्द्रमा को शुभग्रह देखता हो और पापग्रह न देखता हो तो पैदा हुआ बालकादि आठ वर्ष जीता है । अथवा लग्न से छठे या आठवें स्थान में स्थित चन्द्रमा को शुभ और पापग्रह दोनों मिले हुए देखते हों तो चार वर्ष तक जीता है । जो चन्द्रमा शुभग्रह के स्थान में स्थित हो या कहीं भी स्थित होकर शुभग्रह से संयुक्त हो तो यह योग नहीं होता है । अथवा छठे या आठवें स्थान में शुभग्रह स्थित हो और उसे बली पापग्रह देखते हों तो एक महीना पर्य्यन्त जीता है अथवा लग्नेश सातवें स्थान में स्थित हो और किसी पापग्रह से युद्ध में हार गया हो तो भी पैदा हुआ बालकादि महीना भर जीता है ।। ६ ।।

*अथवा कृष्णपक्ष में, दिन में और शुक्लपक्ष में रात्रि में जन्म हो तो षष्ठाष्टमस्थित चन्द्रमा को शुभाशुभ ग्रह देखते भी हों तो भी बालक नहीं मरता है ।।

लग्ने क्षीणे शशिनि निधनं रन्ध्रकेन्द्रेषु पापैः
पापान्तःस्थे निधनहिबुके द्यूनयुक्ते च चन्द्रे ।
एवं लग्ने भवति मदनक्षिद्रसंस्थैश्च पापै-
र्मात्रा सार्द्धं यदि न च शुभैर्वीक्षितः शक्तिमद्भिः ।।७।।

अरिष्टयोगान्तर ।

चन्द्रमा क्षीण होकर लग्न में स्थित हो और आठवें तथा केन्द्रस्थानों में पापग्रह स्थित हों तो ऐसे योग में पैदा हुए का

---

*मांडव्यः—"पक्षे सिते भवति जन्म यदि क्षपायां कृष्णेऽथवाऽहनि शुभाशुभदृश्यमानैः ।
तच्चन्द्रमा रिपुविनाशगतोऽपि यत्नादापत्सु रक्षति पितेव शिशुं न हन्ति ।।"

शीघ्र ही मरण होता है। अथवा चन्द्रमा पापग्रहों के मध्य में स्थित होकर आठवें, चौथे या सातवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो तो ऐसे योग में भी पैदा हुए का मरण शीघ्र ही होता है। अथवा इसी तरह पापग्रहों के मध्य में स्थित होकर चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और उसे कोई बली शुभग्रह न देखते हों और सातवें या आठवें स्थानों में पापग्रह स्थित हों तो ऐसे योग में पैदा हुआ माता के सहित मर जाता है। और जो इसी योग में बली शुभग्रह चन्द्रमा को देखते हों तो वह सन्तान ही मर जाता है माता नहीं मरती है ॥ ७ ॥

राश्यन्तगे सद्भिरवीक्ष्यमाणे चन्द्रे त्रिकोणोपगतैश्च पापैः ।
प्राणैः प्रयात्याशु शिशुर्वियोगमस्ते च पापैस्तुहिनांशुलग्ने ॥ ८ ॥

अरिष्टयोगान्तर ।

चन्द्रमा राशि के नवें नवांश में स्थित हो और उसे शुभग्रह न देखते हों तथा पाँचवें और नवें स्थान में पापग्रह स्थित हों तो ऐसे योग में पैदा हुआ शीघ्र ही मर जाता है। अथवा लग्न में चन्द्रमा स्थित हो और सातवें स्थान में पापग्रह स्थित हों तो भी ऐसे योग में पैदा हुआ शीघ्र ही मर जाता है ॥ ८ ॥

अशुभसहिते ग्रस्ते चन्द्रे कुजे निधनाश्रिते
जननि सुतयोर्मृत्युर्लग्ने रवौ तु सशस्त्रजः ।
उदयति रवौ शीतांशौ वा त्रिकोणविनाशगै-
र्निधनमशुभैर्वीर्योपेतैः शुभैर्न युतेक्षिते ॥ ९ ॥

अन्य अरिष्टयोग ।

शनैश्चर और राहु से संयुक्त चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और लग्न से आठवें स्थान में मंगल स्थित हो तो ऐसे योग में पैदा हुआ माता सहित मर जाता है। अथवा शनैश्चर, बुध और राहु

इन सबसे संयुक्त होकर सूर्य लग्न में स्थित हो तथा मंगल आठवें स्थान में स्थित हो तो ऐसे योग में पैदा हुआ माता सहित किसी हथियार से मरता है। अथवा सूर्य या चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और पापग्रह पाँचवें, नवें और आठवें स्थान में स्थित हों और बली होकर शुभग्रह उस सूर्य्य या चन्द्रमा को न देखते हों और न उससे संयुक्त हों तो ऐसे योग में भी पैदा हुआ शीघ्र ही मर जाता है ॥ ९ ॥

असितरविशशाङ्कभूमिजै-
र्व्ययनवमोदयनैधनाश्रितैः।
भवति मरणमाशु देहिनां
यदि गुरुणा बलिना न वीक्षिताः ॥ १० ॥

अरिष्टयोगान्तर।

शनैश्चर, सूर्य्य, चन्द्रमा और मंगल ये सब ग्रह क्रम से बारहवें, नवें, लग्न और आठवें स्थान में स्थित हों अर्थात् शनैश्चर बारहवें स्थान में, सूर्य नवें स्थान में, चन्द्रमा लग्न में और मंगल आठवें स्थान में स्थित हो और ये सब ग्रह सबल बृहस्पति करके देखे न जाते हों तो ऐसे योग में पैदा हुए शीघ्र ही मर जाते हैं ॥१०॥

सुतमदननवान्त्यलग्नरन्ध्रे-
ष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः।
भृगुसुतशशिपुत्रदेवपूज्यै-
र्यदि बलिभिर्न युतोऽवलोकितो वा ॥ ११ ॥

अन्य अरिष्टयोग

अशुभ ग्रहसंयुक्त क्षीणचन्द्रमा पाँचवें, सातवें, नवें, बारहवें, आठवें और लग्न में स्थित हो तथा शुक्र, बुध और बृहस्पति इन सब ग्रहों में से किसी बली ग्रह से संयुक्त या दृष्ट न हो तो ऐसे योग में पैदा हुआ सन्तान शीघ्र ही मर जाता है ॥ ११ ॥

योगे स्थानङ्गतवति बलिनश्चन्द्रे स्वं वा तनुगृहमथवा।
पापैर्दृष्टे बलवति मरणं वर्षस्यान्ते किल मुनिगदितम्॥ १२॥
इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातकेऽरिष्टाध्यायः॥ ६॥

अनुक्तमरणकालज्ञान।

जिन अरिष्ट योगों में मरणकाल नहीं कहा है उन अरिष्ट योगकारक ग्रहों में जो ग्रह बली हो, वह जन्मकाल में जिस राशि में स्थित हो, उस राशि में जब चन्द्रमा आते हैं तब मरण कहना चाहिए। अथवा जन्मकाल में जिस राशि में चन्द्रमा स्थित हो जब फिर उसी राशि में चन्द्रमा आता है तब मरण कहना चाहिए। अथवा जब चन्द्रमा लग्न राशि में आता है तब मरण कहना चाहिए। अथवा वर्ष के भीतर जब जिस योगोक्त स्थान में जाकर चन्द्रमा बली होता है और पापग्रहों करके देखा जाता है तब मरण कहना चाहिए। यह मुनियों ने कहा है॥ १२॥

दो०। शान्ति अरिष्टन की कहौं, कहौं न यामें उक्त।
कहा मुनिन जो जहँ तहाँ, सो आशय संयुक्त॥ १॥
उदय बृहस्पति उदयगत, अतिबल दुरितनिकाम।
शमयति जैसे भक्तिकृत, महादेव परनाम॥ २॥
बली लग्नपति को अशुभ, ग्रह नहिं दीखे कोइ।
शुभ खग दीखे केन्द्र ह्वै, दीर्घायू सो होइ॥ ३॥
गुरु बुध शुक्र दृकाण में, होइ आठवें चन्द।
मृत्यु पाय जीवे बहुरि, सदा रहै निर्द्वन्द॥ ४॥
पूर्णचन्द्र शुभ राशिगत, स्थित शुभ खग के बीच।
कबहुँक दीखे शुक्र जो, करै अरिष्टक मीच॥ ५॥
बुध गुरु भार्गव कोइ ग्रह, केन्द्रस्थित बलवान।
चाहै क्रूर सहाय हो, बालक हो कल्यान॥ ६॥
बुध गुरु शुक्र दृकाण में, छठें चन्द्र जो होइ।
सर्प्प डसे को गरुड़ इव, बालक रक्षै सोइ॥ ७॥
शुभ ग्रह द्वय के मध्य में, पूर्ण चन्द्र जो होइ।

सर्वारिष्ट को हनै, सर्प्प गरुड़ इव सोइ ॥ ८ ॥
छठें आठवें पूर्ण शशि, शुक्ल पक्ष निशिजात ।
कृष्णपक्ष दिन जन्म यदि, नहिं अरिष्ट तहँ जात ॥ ९ ॥
उदित सबल गुरु केन्द्रगत, हर्षित देखत लग्न ।
गज मस्तक को सिंह इव, करै अरिष्टन भग्न ॥१०॥
गुरु बुध भृगुसुत चन्द्रमा, सौम्य दृकाणा अंश ।
सौम्य भवनगत होइँ जो, हो अरिष्ट निर्वंश ॥११॥
होइ चन्द्र जेहि राशि में, तेहि पति शुभ संयुक्त ।
केन्द्रस्थित हो जहँ जहाँ, हों अरिष्ट सब मुक्त ॥१२॥
पाप होइँ शुभ वर्ग में, शुभग्रहन सों दृष्ट ।
वे शुभ हों शुभ वर्ग में, सब अरिष्ट तहँ नष्ट ॥१३॥
तिसरे छठयें ग्यारहें, राहु शुभग्रह दृष्ट ।
मारुत रुई समूह जिमि, करै अरिष्टन भ्रष्ट ॥१४॥
शीर्षोदय राशिन बिषे, सब ग्रह करैं निवास ।
अग्नि बिषे घृत ज्यों जरै, त्यों अरिष्ट को नास ॥१५
जन्मकाल में विजययुत, शुभ खग हो शुभदृष्ट ।
वृक्षन को मारुत यथा, करै अरिष्टन नष्ट ॥१६॥
सर्व खगनसों दृष्ट ह्वै, होय चन्द्रमा पुष्ट ।
सर्व अरिष्टन को हनै, मण्डलीक जिमि दुष्ट ॥१७॥

दो०—श्रीवराहकृत जातके, ऽरिष्टशान्तिविज्ञाय ।
रामरत्नकृत भाषा, षष्ठ समाप्ताध्याय ॥ ६ ॥

—::—

अथायुर्दायाध्यायः सप्तमः ।

मययवनमणित्थशक्तिपूर्वै-
र्दिवसकरादिषु वत्सराः प्रदिष्टाः ।
नवतिथिविषयाश्विभूतरुद्रै-
र्दशसहिता दशभिः स्वतुङ्गभेषु ॥ १ ॥

अथ मयादिकथितग्रहोच्चायुर्दाय ।

मय, यवन, मणित्थ और पराशर इन आचार्यों ने कहा है कि परमोच्च में रहते सूर्य उन्नीस वर्ष, चन्द्रमा पच्चीस वर्ष, मङ्गल पन्द्रह वर्ष, बुध बारह वर्ष, बृहस्पति पन्द्रह वर्ष, शुक्र इक्कीस वर्ष और शनैश्चर बीस वर्ष आयुर्दाय देता है ॥ १ ॥

परमोच्चायुर्दायचक्र ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
००	१	९	५	३	११	६	परमोच्च
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	
१९	२५	१५	१२	१५	२१	२०	वर्ष

नीचेऽतोऽर्द्धं ह्रसति हि ततश्चान्तरस्थेऽनुपातो
होरा त्वंशप्रतिममपरे राशितुल्यं वदन्ति ।
हित्वा वक्रं रिपुगृहगतैर्हीयते स्वत्रिभागः
सूर्य्योच्छिन्नद्युतिषु च दलं प्रोज्झ्य शुक्रार्कपुत्रौ ॥ २ ॥

नीचायुर्दायप्रमाण ।

अपनी अपनी परम नीचराशि में रहते वही सूर्यादि का दिया हुआ उक्तायुर्दाय आधा घट जाता है । यथा—सूर्य्य के साढ़े नव वर्ष, चन्द्रमा के साढ़े बारह वर्ष, मङ्गल के साढ़े सात वर्ष, बुध के छह वर्ष, बृहस्पति के साढ़े सात वर्ष, शुक्र के साढ़े दश वर्ष और शनैश्चर के दश वर्ष परमोच्चायुर्दाय में घट जाते हैं ।

परमनीचायुर्दायचक्र ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
६	७	३	११	९	५	०	परम नीच
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	
९॥	१२॥	७॥	६	७॥	१०॥	१०	वर्ष

उच्चस्थान से लेकर नीच तक इस मध्य में जो सूर्य्यादि ग्रह स्थित हों तो वहाँ अनुपात अर्थात् त्रैराशिक की रीति से आयुर्दाय होता है । यथा—परमोच्च से परमनीच तक छह राशि होती हैं और परम

नीच से परमोच्च तक भी छह राशि होती हैं उन राशियों को तीस से गुण करके फिर साठ से गुणे तो दश हजार आठ सौ १०८०० कला हुईं। अब अपने परमोच्च स्थान से नीच की तरफ ग्रह चला हो तो उस ग्रहभुक्त राश्यादि में परमोच्च ध्रुवक को घटा दे, जो शेष राश्यादि रहे उसकी भी राशि को तीस से गुणे और अंशों को उसमें जोड़ दे फिर उन अंशों को साठ से गुणे और कलाओं को उसमें जोड़ दे। अब ये परमोच्च से अधिक भुक्त कला हुईं और परमनीच वर्षों के महीने बनाकर रक्खे, फिर वहाँ दश हजार आठ सौ भोग कला करने से उक्त ग्रह के उक्त परमनीच मास घट जाते हैं तो परमोच्च से अधिक ग्रह की भुक्त कलाओं से कितने मास होंगे? ऐसे त्रैराशिक की कल्पना करके, तदनन्तर परमोच्चाधिक ग्रह की भुक्त कलाओं को उक्त मासों से गुण दे और उसमें दश हजार आठ सौ का भाग दे, जो लब्ध मिले वे महीने हुए और जो शेष रहे उसको तीस से गुणकर उसमें दश हजार आठ सौ का भाग दे जो लब्ध मिले वे दिन हुए। जो शेष रहे उसको साठ से गुणकर पूर्वोक्तांक से भाग दे जो लब्ध मिले वे दण्ड हुए। अब महीनों में बारह का भाग देने से जो वर्षादि हुआ वह सब पूर्वोक्त ग्रहदत्त परमोच्च वर्षों में घटा दे जो शेष रहे वह उस ग्रह का दिया हुआ आयुप्रमाण हुआ। अथवा जो ग्रह परम नीच से उच्च की तरफ चला हो तो उस ग्रह की भुक्त राश्यादि में परम नीच ध्रुवक को घटा दे जो शेष राश्यादि रहे उसमें राशियों को तीस से गुणकर, अंशों को जोड़ दे, फिर उन अंशों को साठ से गुणकर कलाओं को उसमें जोड़ दे। अब ये परम नीच से अधिक ग्रह की भुक्त कला हुईं। फिर वहाँ दश हजार आठ सौ कलाओं के भोग करने से पूर्वोक्त इष्टग्रह के परमनीच मासों से इष्ट परमनीच मास बढ़ जाते हैं तो परमनीच से अधिक भुक्त कलाओं से कितने महीने बढ़ेंगे? ऐसे त्रैराशिक की कल्पना करके पूर्वोक्त रीति से लब्ध वर्षादि को परमनीच वर्षादि में जोड़ दे तो वही इष्टग्रहदत्त आयुप्रमाण हुआ।

अथवा ग्रहों के पिण्डायुर्दाय निकालने का एक बहुत सीधा उपाय यह है। यथा—जिस ग्रह का आयुर्दाय निकालना हो उस

ग्रह की राश्यादि में उसके उच्च ध्रुवक को घटा दे, कदाचित् उच्च ध्रुवक न घटे तो ग्रह राश्यादि में, राशि के स्थान में बारह जोड़ कर उसमें उच्च ध्रुवक को घटावे, घटा हुआ शेषांक छह राशि से कम हो तो उसको बारह राशि में घटावे और जो छह राशि से अधिक हो तो वही शेषांक राश्यादि रहने देवे, फिर उस राश्यादि को उक्त परमोच्चायुर्दाय वर्षों से गुणकर विकला स्थान में साठ का भाग दे जो लब्ध मिले उसको कलास्थान में जोड़कर उसमें भी साठ का भाग दे, फिर जो लब्ध मिले उसको अंशस्थान में जोड़कर उसमें तीस का भाग दे, फिर जो लब्ध मिले उसको राशिस्थान में जोड़कर उसमें बारह का भाग देवे, जो लब्ध मिले वही वर्ष हैं और जो शेष रहे वे क्रम से मास, दिन, घटी और पल हैं। अब यही उच्च नीच के मध्य में वर्तमान ग्रह का दिया हुआ आयुर्दाय हुआ।

लग्नायुर्दाय ।

होरा अर्थात् लग्न तो अंश के अनुसार आयुर्दाय देता है। लग्न के जितने नवांश बीत गये हों उतने वर्ष और वर्तमान नवांश जितना बीत गया हो उसके कला करके उनको बारह से गुणे, फिर उसमें दोसौ से भाग दे जो लब्ध मिले वे महीने हुए। जो शेष रहा उसे तीस से गुणे, उसमें दोसौ से भाग दे, जो लब्ध मिले वे दिन हुए। जो शेष रहा उसको साठ से गुणे, उसमें दोसौ से भाग देवे, जो लब्ध मिले वे घटी हुईं। इसी तरह वर्ष, मास, दिन, घटी और पल लग्न का दिया हुआ आयुर्दाय हुआ। कोई आचार्य्य तो राशि तुल्य अर्थात् जितनी राशि बीत गई हैं उतने वर्ष और लग्न वर्तमान राशि के अंशादि में पूर्वोक्त त्रैराशिक रीति करके महीना इत्यादि जो आवें उनके सहित वही वर्षादि लग्नदत्त आयुर्दाय का प्रमाण कहते हैं, और कोई कहते हैं कि जो लग्नांशपति बली हो तो नवांशतुल्य और जो लग्न में स्थित राशिपति बली हो तो राशितुल्य आयुर्दाय लग्न देता है।

आयुर्दायह्रास ।

वक्रगति को छोड़ अन्यगति से शत्रुगृह में प्राप्त ग्रह अपने दिये

हुए आयुर्दाय का तीसरा भाग हर लेते हैं। परन्तु* शत्रुगृहगत वक्री हों तो अपने दिये हुए आयुर्दाय के तीसरे भाग को नहीं हरते हैं। कोई कहते हैं वक्र अर्थात् मङ्गल† को छोड़कर अन्य ग्रह शत्रुराशि में स्थित हो तो स्वदत्तायुर्दाय के तीसरे भाग को हर लेते हैं और मङ्गल नहीं हरता है। शुक्र और शनैश्चर इन दोनों को छोड़कर जो ग्रह अस्त को प्राप्त हो, वह अपने दिये हुए आयुर्दाय का आधा हर लेता है। इससे सिद्ध हुआ कि शुक्र और शनैश्चर ये दोनों ग्रह अस्त को भी प्राप्त होकर अपने दिये हुए आयुर्दाय के आधे भाग को नहीं हरते हैं और जो दोनों प्रकारों से ह्रास प्राप्त हो तो जिस प्रकार से अधिक दिनों का ह्रास हो वही करना चाहिए और जिस प्रकार से कम दिनों का ह्रास होता हो उसे न करना चाहिए ॥ ३ ॥

सर्वार्द्धत्रिचरणपञ्चषष्ठभागाः
क्षीयन्ते व्ययभवनादसत्सु वामम् ।
सत्स्वर्द्धं ह्रसति तथैकराशिगाना-
मेकोंऽशं हरति बली तथाऽऽह सत्यः ॥ ३ ॥

आयुर्दायचक्रार्द्धहानि ।

बारहवें स्थान से विपरीत छह भावों में स्थित पापग्रह क्रम से अपने दिये हुए आयुर्दाय का सर्व, आधा, तीसरा, चौथा, पाँचवाँ और छठा भाग हर लेता है अर्थात् बारहवें स्थान में स्थित सर्व-भाग, ग्यारहवें स्थान में स्थित अर्द्ध भाग, दशवें स्थान में स्थित तीसरा भाग, नवें स्थान में स्थित चौथाभाग, आठवें स्थान में स्थित पाँचवाँ भाग तथा सातवें स्थान में स्थित पापग्रह स्वदत्तायुर्दाय का छठा भाग हर लेता है। ऐसे ही शुभग्रह उक्त का अर्द्ध भाग हर लेते हैं। यथा—बारहवें स्थान में स्थित शुभग्रह अर्द्धभाग, ग्यारहवें स्थान में स्थित शुभग्रह चौथाभाग, दशवें स्थान में स्थित शुभग्रह

---

* "वक्रचारं विना त्र्यंशं शत्रुराशौ हरेद्ग्रहः ।"

† "हित्वा भौमं रिपुगृहगतैर्हीयते स्वत्रिभागम् ।"

छठाभाग, नवें स्थान में स्थित शुभग्रह आठवाँ भाग, आठवें स्थान में स्थित शुभग्रह दशवाँ भाग और सातवें स्थान में स्थित शुभग्रह स्वदत्तायुर्दाय का बारहवाँ भाग हर लेता है। कदाचित् उक्त भावों में से किसी में एक ग्रह से अधिक ग्रह स्थित हों तो उनमें से जो बली हो, वही ग्रह स्वदत्तायुर्दाय का उक्त भाग हरता है। यही सत्याचार्य्य* ने भी कहा है ॥ ३ ॥

सार्द्धोदितोदितनवांशहतात्समस्ता-
द्भागोऽष्टयुक्तसतशङ्ख्यमुपैति नाशम् ।
क्रूरे विलग्नसहिते विधिना त्वनेन
सौम्येक्षिते दलमतः प्रलयं प्रयाति ॥ ४ ॥

सर्वायुर्दाय विशेषसंस्कार ।

जो क्रूरग्रह लग्न में स्थित हो तो मेषादि राशियों के सब नवांशों के सहित लग्न के भुक्त नवाशों से सम्पूर्णायुर्दाय को गुण-कर उसका एक सौ आठ १०८वाँ भाग सम्पूर्णायुर्दाय में घटावे और जो उक्त क्रूरग्रह को कोई शुभग्रह देखता हो तो उक्त भाग का अर्द्धभाग घटावे तो आयुर्दाय स्पष्ट होता है और यथार्थ सूक्ष्मरीति तो यह है कि सम्पूर्ण राशियों में एकसौ आठ १०८ नवांश होते हैं, उनमें से लग्न के वर्त्तमान नवांश तक जितने नवांश हों उन सबको कलारूप करके उस कलासमूह से प्रत्येक ग्रह के वर्षादि आयुर्दाय को अलग अलग गुण देवे फिर पलों के स्थान में

---

* सत्याचार्यः—"एकादशोत्क्रमात्सप्तमादिति प्राह हरणकर्माणि ।
एकर्क्षगेषु वीर्याधिकः स्वभागं हरेदेकः ॥
अर्ध तृतीयभागं चतुर्थकं पंचमं च षष्ठं च ।
आयुःपिण्डात्पापा हरन्ति सौम्यास्तथार्द्धानि ॥
स्वदशासंस्थः पापः स्वन्दायं शोभनस्ततोऽर्द्धं तु ।
अपहरति सर्वमायुर्यथा च योगरतमपि वक्ष्ये ॥"
"एकर्क्षोपगतानां यो भवति बलाधिको विशेषेण ।
क्षपयति यथोक्तमंशं स एव नान्योऽपि तत्रस्थः ॥"

साठ का भाग देवे, जो लब्ध हो उसे दण्डों के स्थान में जोड़कर उसमें भी साठ का भाग देवे, वहाँ जो लब्ध मिले उसको दिनस्थान में जोड़कर उसमें तीस का भाग देवे, वहाँ जो लब्ध हो उसको मास स्थान में जोड़कर उसमें बारह का भाग देवे, वहाँ भी जो लब्ध हो उसको वर्षस्थान में जोड़कर उसमें इक्कीस हजार छह सौ २१६०० का भाग देवे, वहाँ जो वर्ष, मास, दिन, दण्ड और पल लब्ध हों उनको उसी ग्रह के आयुर्दाय में घटा देवे। ऐसी ही क्रिया लग्नादि सब ग्रहों के आयुर्दायों में करे तो सबके आयुर्दाय स्पष्ट होते हैं और सब आयुर्दायों में यह क्रिया इकट्ठी करने से ग्रहों की दशा अन्तर्दशा के जानने में बहुत कष्ट होगा ॥ ४ ॥

समाः षष्टिर्द्विघ्ना मनुजकरिणां पञ्च च निशा
हयानां द्वात्रिंशत् खरकरभयोः पञ्चककृतिः ।
विरूपा तत्त्वायुर्वृषमहिषयोर्द्वादश शुनां
स्मृतं छागादीनां दशकसहिता षट् च परमम् ॥ ५ ॥

मनुष्यादि की परमायुर्दाय ।

मनुष्य और हाथी का पाँच दिन-रात्रि अधिक एकसौ बीस १२० वर्ष का परम आयुर्दाय होता है, घोड़े का बत्तीस ३२ वर्ष का, गधा और ऊँट का पच्चीस २५ वर्ष का, बैल और भैंस का चौबीस २४ वर्ष का, कूकुर इत्यादि नखवाले जीवों का बारह १२ वर्ष का और बकरी, भेड़, हरिण और नीलगाय इत्यादि का सोलह १६ वर्ष का परम आयुर्दाय होता है। आयुर्दाय कहने का प्रयोजन यह है कि जिस किसी घोड़े इत्यादि का आयुर्दाय जानना हो तो वहाँ मनुष्य कासा आयुर्दाय गणित से बनाकर त्रैराशिक करना कि एकसौ बीस १२० वर्ष पाँच दिन की परमायु होती है तो गणित से आई हुई कितनी होगी ? और जो बत्तीस ३२ वर्ष का परमायुर्दाय हो तो कितना आवेगा। फिर तत्काल में गणित से आया हुआ जो आयुर्दाय हो उसे बत्तीस से गुण उसमें

एकसौ १२० वर्ष का भाग दे, जो लब्ध मिले वही घोड़े का आयुर्दाय हुआ । इसी तरह सब जीवों का आयुर्दाय जानना ।। ५ ।।

अनिमिषपरमांशके विलग्ने
शशितनये गवि पञ्चवर्गलिप्ते ।
भवति हि परमायुषः प्रमाणं
यदि सहिताः सकलाः स्वतुङ्गभेषु ।। ६ ।।

परमायुर्दाययोग ।

मीन राशि लग्न में हो, उसमें मीन ही के नवांश का उदय हो और बुध वृष राशि के पच्चीस २५ कलाओं को भोग करके स्थित हो और सब ग्रह अपने अपने उच्चस्थान में स्थित हों, ऐसे योग में पैदा हुए की एक सौ बीस वर्ष, पाँच दिन-रात की आयु होती है और यही आयु गणित से भी आती है ।

यथा—बुध अपने नीचस्थान को छोड़कर मध्य में वर्त्तमान है इस लिये बुध के राश्यादि १ । ० । २५ में बुध के परमनीच ध्रुवक ११ । १५ । ५० को घटाया तो १ । १५ । २५ यह राश्यादि शेष रहा । इन सबकी कला किया तो २७२५ कला हुईं । अब अनुमान किया कि छह राशियों की १०८०० कलाओं के भोग करने से बुधदत्त परमनीचायु के छह वर्ष होते हैं और जो २७२५ इतनी ही कलायें भोग किया है तो कितनी आवेंगी । फिर छह ६ के अंक से इन बुधभुक्त कलाओं २७२५ को गुण कर इस १०८०० अंक से भाग दिया तो एक वर्ष छह महीने पाँच दिन १ । ६ । ५ लब्ध मिले । इन्हें परमनीच छह वर्षों में जोड़ दिया तो ७ । ६ । ५ यही बुध का दिया हुआ आयुर्दाय हुआ, परन्तु मङ्गल ग्यारहवें स्थान में स्थित है इसलिये उसके दिये हुए पन्द्रह वर्ष आयुर्दाय में अर्द्धहानि हुई तो मंगल का दिया हुआ साढ़े सात वर्ष ७ । ६ । ० आयुर्दाय हुआ और शनैश्चर आठवें स्थान में स्थित है इसलिये उसके दिये आयुर्दाय २० वर्ष में पंचमांश हानि

अर्थात् चार वर्ष कम हुए तो शनैश्चर का दिया हुआ सोलह १६ वर्ष आयुर्दाय हुआ। अब सब ग्रहों के आयुर्दाय को कहते हैं।

यथा—सूर्य के १९, चन्द्रमा के २५, मङ्गल के ७। ६, बुध के ७। ६। ५, बृहस्पति के १५, शुक्र के २१, शनैश्चर के १६ और लग्न के नव नवांश बीत गये हैं इसलिये लग्न के ९ ये सब एकत्र किये तो एकसौ बीस वर्ष पाँच दिन हुए १२०।००।५॥६॥

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
०	१	९	१	३	११	६	११
९	२	२७	०	४	२६	१९	२९
०	०	०	२५	०	०	०	५९

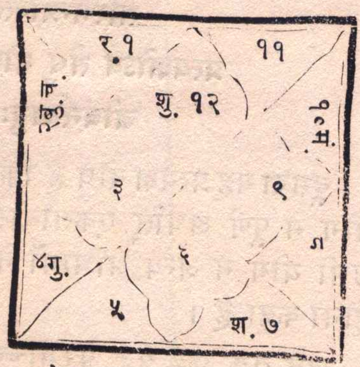

आयुर्दायं विष्णुगुप्तोऽपि* चैवं
देवस्वामी सिद्धसेनश्च चक्रे।
दोषश्चैषां जायतेऽष्टावरिष्टं
हित्वा नायुर्विंशतेः स्यादधस्तात्॥७॥

अन्यमत से आयुदोष।

इसी मय, यवन, मणित्थ और पराशर के कहे हुए आयुर्दाय को विष्णुगुप्त ने कहा है जिसका दूसरा नाम चाणक्य भी लोग कहते हैं। देवस्वामी और सिद्धसेन ने भी इसी आयुर्दाय को कहा

---

* विष्णुगुप्तः—"परमोच्चगतैः सर्वैर्मीने मीनांशसंस्थिते।
सौम्ये च वृषभे जातः परमायुः स जीवति॥"

देवस्वामी—"सूर्याद्यैरुच्चगतैर्मीने मीनांशसंस्थिते लग्ने।
सौम्ये वृषभं याते जातः परमायुराप्नोति॥"

सिद्धसेनः—"मीने परमांशगते सौम्ये गवि पंचवर्गलिप्तास्थे।
सर्वैः परमोच्चगतैर्जातः परमायुराप्नोति॥"

है परन्तु इस अनेक आचार्यों के कहे हुए आयुर्दाय में भी एक यह दोष है कि बीस वर्ष के नीचे यह आयुर्दाय नहीं होता और आठ वर्ष तक अरिष्ट ही कहा है बाद उसके बीस वर्ष तक बहुत से मर जाते हैं। ठीक तब होता जब कि आठ वर्ष से ऊपर बीस वर्ष के भीतर कोई न मरता ॥ ७ ॥

यस्मिन्योगे पूर्णमायुः प्रदिष्टं
तस्मिन्प्रोक्तं चक्रवर्तित्वमन्यैः ।
प्रत्यक्षोऽयं तेषु दोषः परोऽपि
जीवन्त्यायुः पूर्णमर्थैर्विनापि ॥ ८ ॥

दूसरा यह प्रत्यक्ष दोष है कि जिस पूर्वोक्त (अनिमिष इत्यादि) योग में पूर्ण अर्थात् एकसौबीस वर्ष पाँच दिन की आयु कही है उसी योग में अन्य आचार्यों ने चक्रवर्तित्व* अर्थात् राजाधिराज होना कहा है।

जब तक छह ग्रह परमोच्च में न हों तब तक पूर्णायु नहीं हो सकती और छह ग्रह उच्च के होंगे तो वे अवश्य ही चक्रवर्त्ती करेंगे, परन्तु देखते हैं कि बिना धन और राज्य के भी बहुत लोग ऐसे हैं कि पूर्णायु पर्य्यंत जीते रहते हैं। यथार्थ में तो ये उक्त दोनों श्लोक श्रीवराहमिहिराचार्य के नहीं हैं, क्योंकि उक्ताचार्य ने कहा है कि—

"ज्योतिषमागमशास्त्रं विप्रतिपत्तौ न योग्यमस्माकम् ।
स्वयमेव विकल्पयितुं किंतु बहूनां मतं वक्ष्ये ॥"

"अर्थात् यह ज्योतिषशास्त्र वेदांग अथवा दृष्टादृष्ट का ज्ञापक है। इसमें कहीं मतविरोध हो तो उस पर किसी के मत का खण्डन या किसी के मत का मण्डन अथवा अपनी कुछ कल्पना करना हमको उचित नहीं है किंतु हम बहुत आचार्यों के मत को कहेंगे ॥"

---

* यथाऽऽह बादरायणः—"षड्भिः स्याच्चक्रवर्ती त्रिभुवनमखिलं शास्ति सर्वैर्ग्रहेन्द्रैः'।"
तथा यवनेश्वरः—"षड्राजर्द्धिबलोपकर्षप्रदानमानेष्वभिजातशक्तिः ॥"

फिर ऐसा कहकर भी उक्ताचार्य कैसे किसी के मत का खण्डन मण्डन करते और लग्न में क्रूरग्रह के रहते सार्द्धोदितोदित इत्यादि कहे हुए संस्कार को प्रत्येक लग्नों के प्रत्येक अंशों में भिन्न-भिन्न होने के कारण (बीस वर्ष से नीचे आयुर्दाय इस गणित से नहीं आता है) यह भी कहना ठीक नहीं हो सकता है, क्योंकि इस विष्णुमित्र की कुण्डली में गणित करने से साढ़े पन्द्रह वर्ष का भी आयुर्दाय आता है ।।

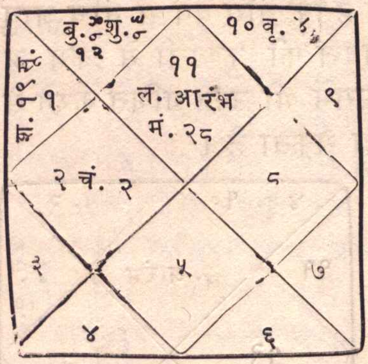

यथा—कुम्भलग्न का आरम्भ ही है तो उसका आयुर्दाय कुछ भी नहीं है। सूर्य्य अपने परमोच्च में स्थित है इससे उसका आयुर्दाय उन्नीस वर्ष हुआ। चन्द्रमा भी अपने परमोच्च में स्थित है इससे उसका आयुर्दाय पच्चीस वर्ष का हुआ। शुक्र भी अपने परमोच्च में स्थित है इससे उसका आयुर्दाय इक्कीस वर्ष का हुआ। बुध अपने परम नीचस्थान में स्थित है इससे उसका आयुर्दाय छह वर्ष का हुआ। बृहस्पति भी अपने परम नीचस्थान में स्थित है इससे उसका आयुर्दाय साढ़े सात वर्ष का हुआ। शनैश्चर भी अपने परम नीचस्थान में स्थित है इससे उसका आयुर्दाय दश वर्ष का हुआ। मंगल कुम्भलग्न में अट्ठाइस अंश भोग करके स्थित है इससे उसका आयुर्दाय "मध्येऽनुपातः" इस उक्त रीति से तेरह वर्ष नव महीने का हुआ। फिर बृहस्पति लग्न से बारहवें स्थान में स्थित है इससे चक्रार्द्धहानि हुई। अर्थात् उक्त आयुर्दाय में आधा घटाया तो बृहस्पति का आयुर्दाय तीन वर्ष नव महीने का हुआ। अब सहित

लग्न के सब ग्रहों का आयुर्दाय अट्ठानवे वर्ष छह महीने का हुआ। फिर मंगल लग्न में स्थित है इससे "सार्द्धोदितोदित" यह संस्कार किया अर्थात् लग्नभुक्त एकानबे नवांश से उक्त सब आयुर्दाय को गुणकर उसमें एकसौ आठ का भाग दिया तो कुछ कम तिरासी वर्ष लब्ध मिले, उनको साढ़े अट्ठानवे में घटाया तो शेष पन्द्रह वर्ष छह महीने रहे। यही विष्णुमित्र का आयुर्दाय हुआ। और जो कदाचित् कोई कहे कि लग्न में कोई क्रूरग्रह न हो ? तो जिस अभिप्राय से कहा है कि बीस वर्ष से नीचे आयुर्दाय नहीं होता है तो भी जिस यज्ञदत्त की कुण्डली से कम आयुर्दायवाली कोई कुण्डली नहीं है उसमें भी उक्त गणित करने से बीस वर्ष तक भी आयुर्दाय नहीं आ सकता है।

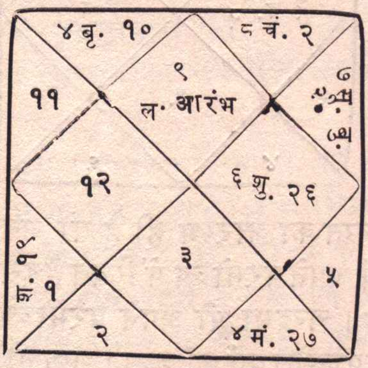

यथा—धन लग्न का आरंभ ही है, इससे उसका आयुर्दाय कुछ भी नहीं है। चन्द्रमा क्षीण होकर बारहवें स्थान में स्थित है और नीच स्थान में भी है इससे साढ़े बारह वर्ष का आयुर्दाय हुआ। उसमें भी सम्पूर्ण आयुर्दाय "चक्रार्द्धहानि" में समाप्त हुआ तो चन्द्रमा का भी आयुर्दाय कुछ नहीं है। सूर्य अपने नीच में स्थित होकर ग्यारहवें स्थान में स्थित है इससे "चक्रार्द्धहानि" इत्यादि क्रिया करके चार वर्ष नव महीने का उसका आयुर्दाय हुआ। मङ्गल नीच होकर आठवें स्थान में स्थित है इससे साढ़े सात वर्ष नीचायुर्दाय में पंचमांश "चक्रार्द्धहानि" करके शेष छह वर्ष उसका आयुर्दाय हुआ। बुध अपने उच्च को छोड़ एक राशि छह अंश पर स्थित होकर लग्न

से ग्यारहवें स्थान में स्थित है इससे "मध्येऽनुपातः" इस उक्त रीति से आये हुए दश वर्ष दश महीने के आयुर्दाय में आधा "चक्रार्द्धहानि" से समाप्त होकर शेष पाँच वर्ष पाँच महीने बुध का आयुर्दाय हुआ। शुक्र अपने परमनीच स्थान में स्थित होकर लग्न से दशवें स्थान में स्थित है इससे उसके दश वर्ष छह महीने परम नीचायुर्दाय में छठा अंश "चक्रार्द्धहानि" से समाप्त हुआ। शेष आठ वर्ष नव महीने शुक्र का आयुर्दाय हुआ। बृहस्पति अपने परमनीच स्थान में स्थित है इससे साढ़े सात वर्ष का उसका आयुर्दाय हुआ। शनैश्चर अपने परमनीच स्थान में स्थित है इससे दश वर्ष का उसका आयुर्दाय हुआ। अब सबको जोड़कर बयालिस वर्ष पाँच महीने हुए यद्यपि यह असम्भव है तथापि कदाचित् सब ग्रह अस्त हो जायँ तो भी "सूर्योच्छिन्नद्युतिषु च दलं प्रोझ्य शुक्रार्कपुत्रौ" इस रीति से अर्थात् शुक्र शनैश्चर को छोड़ बुध का एक बार आधा आयुर्दाय घट गया है इसलिये उसको भी छोड़ सूर्य्य अस्त होता नहीं, इसलिये उसको भी छोड़, शेष ग्रहों के आयुर्दाय में आधा घटाने से पैंतीस वर्ष आठ महीने के अंदाज आयुर्दाय होगा इससे कम किसी तरह नहीं हो सकता है तो भी पूर्वोक्त कहना ठीक नहीं है। यदि इस पर भी कोई कहे कि जब पैंतीस वर्ष आठ महीने से कम आयुर्दाय इस गणित से नहीं आ सकता है तो बीस वर्ष से कम नहीं आवेगा यह कहना ठीक ही है और जिनकी कुण्डलियों में लग्नस्थ क्रूरग्रह नहीं हैं वे लोग भी बहुत से ऐसे हैं कि आठ वर्ष से ऊपर बीस वर्ष से नीचे मर जाते है तब इस रीति से गणित करनेवालों का मत कहाँ ठीक रहा ? इस पर हम यह कहते हैं कि ऐसा कहनेवाले लोगों ने उन उक्त गणित करनेवाले आचार्यों के मत को नहीं समझा है, क्योंकि जिन आचार्यों ने उक्त रीति से गणित किया है उन्हीं आचार्यों ने बहुत से मृत्युयोग भी कहे हैं। यथा दोहा—

छठें अठें गृह पाप के, पापग्रह रिपु दृष्ट।
होरा जो निजपाक में, जात करै सो नष्ट ॥ १ ॥

महादशा जब क्रूर की, क्रूरान्तर तेहि बीच ।
तब सबको सन्देह यह, होय कदाचित् मीच ॥ २ ॥
मङ्गल की अन्तर्दशा, शनिकदशा बिच होय ।
जबहिं दीर्घजीवी तबहिं, मरै निश्चही सोइ ॥ ३ ॥
लग्नाधिप को शत्रु जो, लग्न मध्य गत होइ ।
जब आवै ताकी दशा, निश्चय मारै सोइ ॥ ४ ॥

फिर इन योगों के रहते बीस वर्ष से नीचे क्यों नहीं मृत्यु होगी इससे यह उक्त गणित ठीक है। जो लोग इस गणित को दूषित कहते हैं वे ही सब लोग दूषित हैं और जो दूसरा प्रत्यक्ष दोष कहा है वह भी ठीक नहीं है क्योंकि विना चक्रवर्तियोग के भी दीर्घायुयोग हो सकता है। यथा—

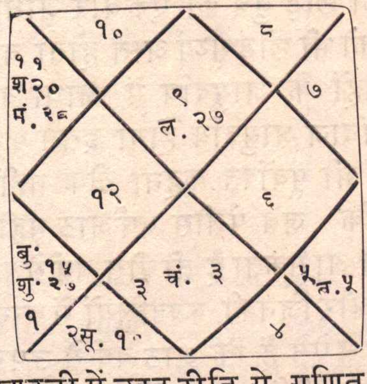

इस देवदत्त की कुण्डली में उक्त रीति से गणित करने पर एक सौ पन्द्रह वर्ष ग्यारह महीने का आयुर्दाय आता है और इसी में केमद्रुम योग भी है। कदाचित् कोई कहे कि यही आचार्य आगे कहेंगे कि केन्द्र में चन्द्रमा हो तो केमद्रुम नहीं होता और यहाँ वही चन्द्रमा केन्द्र ही में स्थित है तो क्यों कर केमद्रुम होगा। इस पर मैं यह कहता हूँ कि जो वराहमिहिराचार्य ने कहा है कि केन्द्र में चन्द्रमा के रहते केमद्रुम नहीं होता है सो ठीक है परन्तु वहाँ केन्द्र-पद से लग्नरूप केन्द्र का ग्रहण टीकाकारों ने किया है और यथार्थ में लग्न या चन्द्रमा ये दोनों बराबर हैं, दोनों से केमद्रुम होता है।

यहाँ चन्द्रमा से मत हो परन्तु लग्न से तो केमद्रुम स्पष्ट है। क्योंकि भगवान् गार्गि आचार्य ने कहा है कि—

व्ययार्थकेन्द्रगश्चन्द्राद्विना भानुं न चेद् ग्रहः।
कश्चित्स्याद्वा विना चन्द्र लग्नात्केन्द्रगतोऽथवा ॥ १ ॥
योगः केमद्रुमो नाम तदा स्यात्तत्र गर्हितः।
भवन्ति निन्दिताचारा दारिद्र्यामयसंयुताः ॥ २ ॥

अर्थ—चन्द्रमा से बारहवें, दूसरे और केन्द्रस्थान में सूर्य को छोड़कर जो कोई ग्रह न स्थित हो तो एक, और लग्न से केन्द्रस्थान में चन्द्रमा को छोड़ जो कोई ग्रह न स्थित हो तो दूसरा केमद्रुम नाम योग होता है। उसमें जो पैदा होते हैं वे लोग अतिशय निन्दित तथा निन्दित कर्म करनेवाले, दरिद्र और रोगग्रस्त होते हैं। इससे विना धन और राज्य के बहुत दिन तक जीना कुछ असम्भव नहीं है इसलिये इस गणित को अशुद्ध कहना अशुद्धों का काम है ॥ ८ ॥

स्वमतेन किलाह जीवशर्मा*
ग्रहदायं परमायुषः स्वरांशम्।
ग्रहभुक्तनवांशराशितुल्यं
बहुसाम्यं समुपैति सत्यवाक्यम् ॥ ९ ॥

जीवशर्ममतायुर्दाय।

जीवशर्मा नाम आचार्य ने अपने मत से परमायुष अर्थात् एक सौ बीस वर्ष पाँच दिन १२०।००।५ का सातवाँ भाग अर्थात् सत्रह वर्ष, एक महीना, बाइस दिन, आठ घड़ी और चौंतीस पल १७।१।२२।८।३४ प्रत्येक उच्चस्थित ग्रह का आयुर्दाय कहा है। यहाँ भी नीच स्थान में उक्त आयुर्दाय का आधा और जो उच्च

*जीवशर्मा—"सप्तदशैको द्वियमौ वसवो वेदाग्नयो १७।१।२२।८।३४ ग्रहेन्द्राणाम्।
वर्षाण्युच्चस्थानां नीचस्थानामतोऽर्द्धं स्यात् ॥
मध्येऽनुपाततः स्यादानयनं शेषमत्र यत्किंचित्।
पिंडायुष इव कार्यं तत्सर्वं गणिततत्त्वज्ञैः ॥ "इति ॥

नीच से अन्यत्र है उसका "मध्येऽनुपातः" इस रीति से अथवा वक्रगति को छोड़ अन्य गति से शत्रु स्थान में गये हुए ग्रह के आयुर्दाय की तृतीयांश हानि और शुक्र, शनैश्चर को छोड़ अस्तंगत ग्रह के आयुर्दाय की अर्द्धहानि और "सर्वार्द्धत्रिचरणेत्यादि" उक्त चक्रार्द्धहानि और "क्रूरे विलग्नसहितेत्यादि" संस्कार ये सब क्रियायें पहिले कही हुई होती हैं ।

सत्याचार्य्यमतायुर्दाय ।

जिस किसी राशि के जिस नवांश में ग्रह वर्तमान हो उस नवांश के पूर्व मेषादि गणना से जितनी संख्यावाली नवांश राशि हो उतने वर्ष और वर्तमान नवांश में त्रैराशिक करके आये हुए मासादि सब मिलकर उस ग्रह का दिया हुआ आयुर्दाय होता है। यथा— मेष के नवांश में ग्रह स्थित हो तो एकवर्ष, वृष के नवांश में दो वर्ष, ऐसे ही मिथुन में तीन और मीन में बारह वर्ष उस ग्रह का आयुर्दाय होता है । और कोई कहते हैं कि जिस किसी राशि के जितने नवांश ग्रह भोग कर चुका हो, उतने वर्ष उस ग्रह का आयुर्दाय होता है । यथा—प्रथम नवांश ग्रह भोग कर चुका हो तो एक वर्ष, दूसरा नवांश भोग कर चुका हो तो दो वर्ष, ऐसे ही नवाँ नवांश भोग करने से नव वर्ष उस ग्रह का आयुर्दाय होता है । परन्तु यह उनका कहना ठीक नहीं है क्योंकि ऐसा अर्थ करने से (ग्रहभुक्तनवांशराशितुल्यम्) इस वचन में राशिपद व्यर्थ हो जायगा, इस से पूर्वोक्त अर्थ ठीक है और वही सत्याचार्य का मत, वराहमिहिर तथा अन्य बहुत से आचार्यों का अभिमत है ।। ९ ।।

सत्योक्ते ग्रहमिष्टं लिप्तीकृत्वा शतद्वयेनाप्तम् ।
मण्डलभागविशुद्धेऽब्दाः स्युश्शेषात्तु मासाद्याः ।। १० ।।

सत्याचार्य्यमतायुर्दाय-गणित ।

सत्याचार्य के कहे हुए आयुर्दाय के गणित की यह रीति है कि जिस ग्रह का आयुर्दाय लाना हो उसके राश्यादि को कलारूप बनाकर अर्थात् राशियों को तीस से गुण के उसमें आगे रक्खे हुए अंशों को जोड़ दे फिर उन सब अंशों को साठ से गुण के उसमें

आगे रक्खी हुई कलाओं को जोड़ दे। फिर उस कलासमूह में दोसौ का भाग देवे जो लब्ध मिले वे वर्ष हुए। परन्तु जो वे बारह से ज्यादह होवें तो उसमें भी बारह का भाग देकर जो शेष रहें वे ही वर्ष होंगे और जो शेष रहे उसको बारह से गुण के उसमें भी दोसौ का भाग देवे जो लब्ध मिले वे ही महीने होंगे तथा जो शेष रहा उसको तीस से गुण के उसमें भी दोसौ का भाग देवे जो लब्ध मिले वे ही दिन होंगे और जो शेष रहा उसको साठ से गुण के फिर उसमें भी दोसौ का भाग देवे जो लब्ध मिले वे ही दण्ड होंगे। इसी तरह पल इत्यादि भी आते हैं। यही सब वर्षादि इष्ट ग्रह का आयुर्दाय होगा।

यथा—तात्कालिक सूर्य १।८।४५।०० है। इसकी सब राश्यादि को कलारूप किया तो दो हजार तीन सौ पच्चीस कला हुईं। इस २३२५ कलासमूह में २०० का भाग देने से ११ लब्ध मिले। ये १२ से अधिक नहीं हैं इसलिये ये ही वर्ष हुए और शेष १२५ रहे, इनको बारह से गुण दिया तो १५०० हुए, इनमें २०० का भाग दिया तो ७ लब्ध मिले ये ही महीने हैं। शेष १०० रहे, इनको ३० से गुण दिया तो ३००० हुए। इनमें भी २०० का भाग दिया तो लब्ध मिले १५ ये ही दिन हुए और शेष कुछ नहीं रहा तो आगे दण्डादि शून्य हुआ सब मिलकर ११।७।१५।०० वर्षादि सूर्य का दिया हुआ आयुर्दाय हुआ। इसी रीति से सब ग्रहों का आयुर्दाय लाना चाहिए और इसी गणित की दूसरी सूक्ष्म रीति यह है कि इष्ट ग्रह के राश्यादि को अलग अलग पहिले बारह से गुण कर फिर उन अङ्कों का नव से गुण देवे फिर विकलांकों में साठ का भाग देवे जो शेष रहें उनको उसी स्थान पर रहने देवे, और लब्धांकों को कलांकों में जोड़कर उनमें भी साठ का भाग देवे जो शेष रहें उनको भी उसी स्थान में रहने दे, और जो लब्ध मिलें उनको अंशस्थान में जोड़कर उसमें तीस का भाग देवे जो शेष रहें उनको उसी स्थान में रहने देवे, और लब्धांकों को राशि स्थान में जोड़कर उसमें बारह का भाग देवे जो शेष रहें उनको उसी स्थान में रहने देवे, और लब्धांकों में फिर बारह का भाग देवे जो शेष रहें उनको

उसी स्थान पर रहने देवे और लब्धांकों को त्याग करे। अब जितने शेषांक हैं वे सब क्रम से उस ग्रह के दिये हुए आयुर्दाय के पल, दण्ड, दिन, मास और वर्ष होंगे ।

यथा—तात्कालिक सूर्य का १ । ८ । ४५ । ०० इतना राश्यादि है । इसकी राशि, अंश, कला और विकलाओं को अलग अलग बारह से गुण दिया तो ये १२ । ९६ । ५४० । ०० अंक हुए । इनको फिर ९ से गुण दिया तो १०८ । ८६४ । ४८६० । ०० ये अंक हुए। अब विकलाशून्य है तो पल शून्य हुए, फिर कला के इस ४८६० स्थान में साठ का भाग दिया तो शेष कुछ नहीं रहा इससे दण्ड शून्य हुए और लब्ध मिले हुए इस ८१ अंक को अंशस्थानी इस ८६४ अंश में जोड़ दिया तो ९४५ इतने हुए फिर इसमें तीस का भाग दिया तो शेष रहे १५ यही दिन हुए और लब्ध मिले ३१ इनको राशिस्थानी इस १०८ अंक में जोड़ दिया तो १३९ हुए। अब इनमें बारह का भाग दिया तो शेष रहे ७ ये महीने हुए और लब्ध मिले ११ इनमें फिर बारह का भाग देने से यही शेष रह जायँगे इससे यही ११ वर्ष हुए। सब मिलकर ११ वर्ष, ७ महीना, १५ दिन, ०० घटी यही सूर्य का दिया हुआ आयुर्दाय हुआ ।। १० ।।

स्वतुङ्गवक्रोपगतैस्त्रिसंगुणं
द्विरुत्तमस्वांशकभत्रिभागगैः ।
इयान्विशेषस्तु भदत्तभाषिते
समानमन्यत्प्रथमेऽप्युदीरितम् ।। ११ ।।

सत्याचार्य के मत से आगत आयुर्दाय में संस्कार ।

अपने उच्च स्थान में स्थित ग्रह के और वक्री ग्रह के उक्त रीति से आये हुए आयुर्दाय को तीन से गुण देवे और अपनी राशि में, वर्गोत्तम में, नवांश में और द्रेष्काण में स्थित ग्रह के आयुर्दाय को दो से गुण देवे तो उसका दिया हुआ आयुर्दाय होता है । यही संस्कार सत्याचार्य के कहे हुए आयुर्दाय में विशेष है । और जितने

संस्कार मय, यवन और मणित्थादि के आयुर्दाय में कहे हुए हैं, वे सब संस्कार इस सत्याचार्य के कहे हुए आयुर्दाय में करना चाहिए अर्थात् जो ग्रह वक्रगति को छोड़ अन्यगति से शत्रु स्थान में स्थित हो उसके आयुर्दाय में तीसरा भाग घटा देना चाहिए और शुक्र शनैश्चर को छोड़कर जो ग्रह अस्त हो उसके आयुर्दाय का अर्द्ध भाग घटा देना चाहिए और चक्रार्द्धहानि भी पूर्ववत् इस आयुर्दाय में करना चाहिए ।। ११ ।।

किन्त्वत्र भांशप्रतिमं ददाति
वीर्यान्विता राशिसमं च होरा ।
क्रूरोदये योऽपचयः स नात्र
कार्यं च नाब्दैः प्रथमोपदिष्टैः ।। १२ ।।

लग्नायुर्दायविधि ।

मेषादि से आरम्भ करके जितनी संख्यावाला नवांश राशिलग्न के भुक्त हों उतने ही वर्ष और शेष अंशादि से उक्त त्रैराशिक द्वारा आया हुआ मासादि ये सब मिलकर लग्न का आयुर्दाय होता है । और जो लग्न कदाचित् बली हो अर्थात् अपना स्वामी वहाँ ही स्थित हो अथवा शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हो तो राशिसम अर्थात् मेष से लेकर वर्तमान लग्नराशि से पूर्व जितनी राशि बीत गई हैं उतने वर्ष और वर्त्तमान लग्नराशि के जितने अंशादि बीत गये हैं उनसे त्रैराशिक द्वारा आया मासादि ये सब मिलकर लग्न का आयुर्दाय होगा । यहाँ मासादि लाने की यह रीति है कि वर्त्तमान लग्न के भुक्तांशों के कला बनाकर उस कलासमूह को बारह से गुणकर उसमें अठारह सौ १८०० से भाग दे, जो लब्ध मिलें वे महीने हुए और जो शेष रहें उनको तीस से गुणकर उसमें भी अठारहसौ का भाग देवे, जो लब्ध मिलें वे दिन हुए और जो शेष रहें उनको साठ से गुणकर उसमें भी अठारहसौ का भाग देवे, जो लब्ध मिलें वे दंड हुए। इसी तरह पलादि भी आते हैं । और लग्न में क्रूरग्रह स्थित होने से जो हानि पहिले कही है वह इस सत्याचार्य

के आयुर्दाय में नहीं होती है और पहिले कहे हुए वर्षों का भी यहाँ प्रयोजन नहीं हैं ।। १२ ।।

सत्योपदेशो वरमत्र किन्तु
कुर्वन्त्ययोग्यं बहुवर्गणाभिः ।
आचार्यकत्वं च बहुघ्नताया-
मेकं तु यद्भूरि तदेव कार्य्यम् ।। १३ ।।

सत्याचार्यमताङ्गीकरण ।

यद्यपि मय, यवन और मणित्थादि-मत तथा जीवशर्म-मत एवं सत्याचार्य-मत इन तीनों में से सत्याचार्य ही के मत को बहुत से आचार्य श्रेष्ठ मानते हैं, परन्तु इसमें आयुर्दाय का वारंवार गुणने के कारण इसको भी कोई आचार्य ठीक नहीं मानते हैं इस से श्रीवराह-मिहिराचार्य कहते हैं कि इसमें मेरा यही (आचार्यकत्वम्) अर्थात् कर्म विशेष अभिमत है कि जिस ग्रह के आयुर्दाय का वारंवार द्विगुणा या त्रिगुणा करना प्राप्त हो, उसको एक ही बार गुणना; सो भी अधिक से अर्थात् जो द्विगुणा करना या त्रिगुणा करना ये दोनों प्राप्त हों तो त्रिगुणा ही करना द्विगुणा न करना और जो द्विगुणा, त्रिगुणा या चतुर्गुणा करना ये तीनों प्राप्त हों तो चतुर्गुणा ही करना, द्विगुणा या त्रिगुणा न करना । जो द्विगुणा करना दो बार प्राप्त हो तो एक ही बार करना । जो पूर्वोक्त एक ही हानि वारंवार प्राप्त हो तो उसे एक ही बार करना, तब जो दूसरी प्राप्त हो तो उसको भी करना फिर जो तीसरी प्राप्त हो तो उसको करना चाहिए । परन्तु यहाँ यह भी जानना चाहिए कि पूर्वोक्त गुणनादि क्रिया को पूर्वोक्त हानि के पश्चात् करना चाहिए। यद्यपि श्रीवराहमिहिराचार्य को यही अंशायु अभिमत है तथापि जो लग्न बली हो तो यही अंशायु ठीक जानना और जो सूर्य बली हो तो पूर्वोक्त मय, यवनादि अभिमत आयुर्दाय ठीक जानना । क्योंकि मणित्थाचार्य ने कहा है कि—

"विलग्नभे बलोपेते शुभदृष्टेंऽशसम्भवः ।
रवौ पिण्डोद्भवं कुर्य्यादिति ब्रूयुश्चिरन्तनाः ॥"

अर्थात् जो लग्न बली हो अथवा शुभग्रह-दृष्ट हो तो अंशों से उत्पन्न आयुर्दाय को ग्रहण करे और जो सूर्य्य बली हो तो पिंडायु को ग्रहण करे । यह प्राचीनाचार्यों ने कहा है ॥ १३ ॥

गुरुशशिसहिते कुलीरलग्ने
शशितनये भृगुजे च केन्द्रयाते ।
भवरिपुसहजोपगैश्च शेषै-
रमितमिहायुरनुक्रमाद्विना स्यात् ॥ १४ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके आयुर्दायाध्यायः सप्तमः ॥७॥

अमितायुर्दाययोग ।

कर्क राशि लग्न में हो और उसमें चन्द्रमा और बृहस्पति ये दोनों स्थित हों और बुध या शुक्र ये दोनों कहीं केन्द्र में स्थित हों और शेष सब ग्रह ग्यारहवें या छठे अथवा तीसरे स्थान में स्थित हों तो अमित अर्थात् गणनारहित आयुर्दाय होता है ॥ १४ ॥

दो० श्रीवराहकृतजातके, बहुविध आयुर्दाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत सप्तमाध्याय ॥ ७ ॥

अथ दशान्तर्दशाध्यायोऽष्टमः ।

*** उदयरविशशाङ्कप्राणिकेन्द्रादिसंस्थाः**
प्रथमवयसि मध्येऽन्त्ये च दद्युः फलानि ।

---

* यवनेश्वर—"निशाकरादित्यविलग्नमध्ये तत्कालयोगादधिकं बलं यः ।
विभर्ति तस्यादिदशेष्यते सा शेषास्ततः शेषबलक्रमेण ॥"

न हि न फलविपाकः केन्द्रसंस्थाद्यभावे
भवति हि फलपक्तिः पूर्वमापोक्लिमेऽपि ॥ १ ॥

दशाक्रमज्ञान ।

तनुस्थानी लग्न, आत्मस्थानी सूर्य और मनस्थानी चन्द्रमा इन तीनों में जो बली हो उसकी प्रथम दशा होती है, फिर उसीके स्थान से जो केन्द्रस्थान हो, उसमें जो ग्रह स्थित हों उनकी दशा होती है, फिर पणफरस्थान में स्थित ग्रहों की, फिर आपोक्लिमस्थान में स्थित ग्रहों की दशा होती है । और वही केन्द्र, पणफर और आपोक्लिमस्थ ग्रह क्रम से आद्यावस्था*, मध्यावस्था तथा अन्त्यावस्था में फल भी देते हैं और कदाचित् केन्द्र में कोई ग्रह न स्थित हो तो किसी की दशा का फल नहीं है, यह नहीं कह सकते; क्योंकि केन्द्र में किसी ग्रह के न रहने से पणफरस्थान में स्थित ग्रहों की प्रथम दशा होती है और वही आद्यावस्था में फलदायक होते हैं । कदाचित् पणफर स्थान में भी कोई ग्रह स्थित न हो तो आपोक्लिमस्थान में स्थित ग्रहों की प्रथम दशा होती है और वही प्रथमावस्था में फलदायक होती है । और जो आपोक्लिम में कोई ग्रह स्थित न हो तो केन्द्र या पणफरस्थान में स्थित ग्रहों की क्रम से दशा तथा उसका ही फल होता है । और पणफर स्थान में कोई ग्रह न हो तो केन्द्र या आपोक्लिमस्थान में स्थित ग्रहों की क्रम से दशा और उसका ही फल होता है । और केन्द्र में कोई ग्रह स्थित न हो तो पणफर तथा आपोक्लिमस्थान में स्थित ग्रहों की दशा होती है और वही फलदायक होती है और जो केन्द्र ही में सब ग्रह स्थित हों तो उन्हीं की क्रम से दशा तथा फल होता है । ऐसे ही पणफरादि में भी जानना ॥ १ ॥

---

* यवनेश्वरः—"पूर्वे तु केन्द्रोपगताः फलन्ति मध्ये: वयः पाणफरे निविष्टाः ।
आपोक्लिमस्थाः फलदा वयोऽन्त्ये यथाबलं स्वं समुपैति पूर्वम् ॥"

आयुः कृतं येन हि यत्तदेव
कल्प्या दशा सा प्रबलस्य पूर्वम् ।
साम्ये बहूनां बहुवर्षदस्य
तेषां च साम्ये प्रथमोदितस्य ॥ २ ॥

दशाप्रमाण तथा बहुग्रहदशा-क्रम ज्ञान ।

जिस ग्रह का दिया हुआ जितना आयुर्दाय हो वही उस ग्रह की दशा है । केन्द्र में स्थित ग्रहों में से जो ग्रह बली हो उसकी दशा पहिले, फिर उससे जो हीनबल हो उसकी, फिर उससे भी जो हीन-बल हो उसकी दशा होती है । ऐसे ही पणफर में तथा आपोक्लिम में जानना । और जो कई ग्रहों का बल बराबर हो तो जिसका दिया हुआ आयुर्दाय बहुत वर्षोंवाला हो उसकी दशा, फिर उससे कम वर्ष वाले ग्रह की दशा होती है । कदाचित् कई ग्रहों का बल तथा वर्ष भी बराबर हों तो जो ग्रह पहिले उदित हुआ हो उसकी पहिले, फिर अन्य ग्रह की दशा होती है । परन्तु उदय दो प्रकार का है—एक तो प्रतिदिन भचक्र घूमने के कारण, दूसरा सूर्य की किरणों में अतिशय समीप अर्थात् अस्त होकर फिर उन से दूर होने के कारण । उनमें से यहाँ दूसरे का ग्रहण है, क्योंकि भगवान् गार्गि आचार्य ने कहा है कि (ये पूर्वं रविविच्युताः) अर्थात् जो ग्रह पहिले सूर्य की किरणों से दूर हुए हैं ॥ २ ॥

एकर्क्षगोऽर्द्धमपहृत्य ददाति तु स्वं
त्र्यंशं त्रिकोणगृहगः स्मरगः स्वरांशम् ।
पादं फलस्य चतुरस्रगतः सहोरा-
स्त्वेवं परस्परगताः परिपाचयन्ति ॥ ३ ॥

अन्तर्दशा-क्रम ज्ञान ।

दशापति के साथ जो ग्रह स्थित है वह दशापति की आधी आयु लेकर अपने गुणानुसार फल देगा । तदनन्तर दशापति से

जो नवें, पाँचवें ग्रह स्थित है वह उसका तीसरा भाग लेकर अपना फल देता है। इसी तरह दशाधीश से सप्तमस्थान में स्थित ग्रह सातवाँ भाग तथा चौथे, आठवें में स्थित चतुर्थांश लेकर अपना फल देता है। इसी तरह लग्न के सहित सब ग्रह, सबकी महादशाओं में, अपनी-अपनी अन्तर्दशा लेकर उनमें अपना-अपना फल करते हैं। परन्तु प्रत्येक महादशा में पहिले दशापति की अन्तर्दशा, फिर उसके स्थान में स्थित अन्य ग्रह की, फिर दशापति के स्थान से नवें, पाँचवें स्थान में स्थित ग्रह की, फिर दशापति के स्थान से सातवें स्थान में स्थित ग्रह की, फिर दशापति के स्थान से चौथे, आठवें स्थान में स्थित ग्रह की अन्तर्दशा होती है। इनमें से जिसकी अन्तर्दशा न प्राप्त हो उसको छोड़ उसी स्थान में उसके आगेवाले जिस अन्य ग्रह की अन्तर्दशा प्राप्त हो उसी की होती है। इन्हीं स्थानों के क्रम से लग्न की भी अन्तर्दशा होती है।।३।।*

स्थानान्यथैतानि सवर्णयित्वा
सर्वाण्यधश्छेदविवर्जितानि ।
दशाब्दपिण्डे गुणका यथांशं
छेदस्तदैक्येन दशाप्रभेदः ।। ४ ।।

अथान्तर्दशा-विभाग-क्रम ।

पूर्व कहे हुए सर्वांश, अर्द्धांश, तृतीयांश, सप्तमांश और चतुर्थांश इन सब खण्डों को एक जाति करके अर्थात् एक के नीचे एक हर $\frac{1}{1}$ और एक के नीचे दो हर $\frac{1}{2}$ और एक के नीचे तीन हर $\frac{1}{3}$ और एक के नीचे सात हर $\frac{1}{7}$ और एक के नीचे चार हर $\frac{1}{4}$ रखकर इन सब खण्डों में से जिन खण्डों की जहाँ आवश्यकता हो वहाँ

---

*स्वल्पजातके—"एकर्क्षगोऽर्द्धं त्र्यंशं त्रिकोणयोः सप्तमे तु सप्तांशम् ।
चतुरस्रयोस्तु पादं पाचयति गतो ग्रहः स्वगुणैः ।।"
तथा भगवान् गार्गिः—"एकर्क्षे संस्थितश्चार्द्धं त्रिभागं तु त्रिकोणगः ।
सप्तमस्थः स्वरांशं तु पादन्तु चतुरस्रगः ।।
लग्नेन सहिताः सर्वे ह्यन्योन्यफलदायकाः ।।"
एवं च यवनेश्वर-सत्याचार्य-यमादयः ।

उतने ही खण्डों का समच्छेद करे अर्थात् उन खण्डों के नीचे जितने हर हों उन सबका लघुतम समापवर्त्य निकाले अर्थात् ऐसी संख्या प्राप्त करे जिसमें सब हरों का पूरा भाग लगे और जिससे छोटी अन्य संख्या न हो। उसमें प्रत्येक छोटे हरों का भाग देकर जो लब्ध मिलें उनसे प्रत्येक छोटे हरों के ऊपर स्थित अंकों को गुणे, फिर सब नीचे के हरों का त्याग करे और जो उनके ऊपर अंक हैं वही प्रत्येक अंक प्रत्येक महादशा के गुणक हैं और उन्हीं सबका जोड़ उक्त गुणक से गुणी हुई महादशा का भाजक होगा। यही अन्तर्दशा का क्रम है।

उदाहरण।

यथा—लग्न की महादशा तीन ३ वर्ष की है और लग्न में कोई एक ग्रह स्थित है और लग्न से उक्त त्रिकोणादि स्थानों में कोई भी ग्रह नहीं है, तो लग्न की महादशा में लग्न की और लग्न स्थित ग्रह की अंतर्दशा होगी। उसकी प्रत्येक अवधि जानने की यह रीति है कि, पहिले एक के नीचे एक हर $\frac{१}{१}$ यह लग्न की और एक के नीचे दो हर $\frac{१}{२}$ यह लग्न स्थित ग्रह की अंतर्दशा मानो। फिर इन $\frac{१}{१}$, $\frac{१}{२}$ दोनों के हरों का लघुतम समापवर्त्य निकालने से दो हुए। यही समच्छेद हुआ। इसमें प्रथम एक हर का भाग दिया तो लब्ध मिले हुए दो से प्रथम हर के ऊपर स्थित एक अंक को गुणकर इसको $\frac{२}{२}$ अलग रक्खा, फिर उसी समच्छेद में दूसरे हर दो का भाग दिया तो लब्ध मिले हुए एक से दूसरे हर के ऊपर स्थित अंक को गुणकर इस अंक $\frac{१}{२}$ को भी अलग रक्खा। अब दोनों $\frac{२}{२}$, $\frac{१}{२}$ अलग रक्खे हुए अंकों के नीचे हरों का त्याग किया और ऊपर के दो, एक अंकों को जोड़ दिया तो तीन हुए। अब ऊपर स्थित प्रथम दो अंक से महादशा के तीन वर्षों को गुण दिया तो छह हुए। अब इस छह में जुड़े हुए तीन का भाग दिया तो दो वर्ष लब्ध मिले। यही लग्न की अन्तर्दशा हुई और फिर महादशा के तीन ३ वर्षों को दूसरे स्थान में स्थित एक से गुण दिया और उसमें जुड़े हुए तीन से भाग दिया तो एक वर्ष लब्ध हुआ। यही लग्न में स्थित ग्रह की अन्तर्दशा हुई। फिर लग्न और लग्न स्थित

ग्रह की अन्तर्दशा को जोड़ दिया तो वही महादशा के तीन वर्ष हुए और जो महादशापति से नवें या पाँचवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हो और अन्य उक्त स्थानों में कोई ग्रह न स्थित हो तो $\frac{१}{१}$, $\frac{१}{३}$ ऐसे अंकों का न्यास करके समच्छेद किया $\frac{३}{३}$, $\frac{१}{३}$ तो ऐसे अंक हुए। अब नीचे के हरों को त्याग किया और ऊपर के प्रथमांक से महादशा के चार वर्षों को गुण दिया तो बारह १२ हुए। इस में ऊपर के दोनों अंकों के जोड़ चार से भाग दिया तो लब्ध हुए तीन। यही महादशापति की अन्तर्दशा हुई और फिर दूसरे अंक से महादशा के वर्षों को गुण दिया तो चार हुए, फिर जुड़े हुए चार का उसमें भाग दिया तो लब्ध मिला एक। यही एक वर्ष नवें या पाँचवें स्थान में स्थित ग्रह की अन्तर्दशा हुई। दोनों अन्तर्दशाओं को जोड़ दिया तो महादशा के चार वर्ष हुए। इसी तरह सब ग्रहों की महादशाओं में सबकी अन्तर्दशाएँ जानना चाहिए ॥ ४ ॥

सम्यग्बलिनः स्वतुङ्गभागे
सम्पूर्णा बलवर्जितस्य रिक्ता ।
नीचांशगतस्य शत्रुभागे
ज्ञेयाऽनिष्टफला दशा प्रसूतौ ॥ ५ ॥

शुभाशुभ दशान्तर्दशानिर्णय ।

जो ग्रह पूर्वोक्त बलसंयुक्त हो और जो अपने परमोच्च स्थान में स्थित हो चाहे बली हो, चाहे न हो, इन दोनों की दशा और अन्तर्दशा का सम्पूर्णा* नाम है। यह सम्पूर्णा सम्पूर्ण फलों की देनेवाली है और जो ग्रह निर्बल हो या अपने परमनीच स्थान में स्थित हो तथा अपने शत्रु की राशि या नवांश में स्थित हो, उसकी दशा या अन्तर्दशा का रिक्ता नाम है। यह रिक्ता† सम्पूर्ण अनिष्ट फलों की देनेवाली है ॥ ५ ॥

---

*भगवान् गार्गिः—"सर्वैर्बलैरुपेतस्य परमोच्चगतस्य च ।
संपूर्णाख्या दशा ज्ञेया धनारोग्यविवर्धिनी ।"

† भगवान् गार्गिः—"सर्वैर्बलैर्विहीनस्य नीचराशिगतस्य च ।
रिक्ता नाम दशा ज्ञेया धनारोग्यविनाशिनी ॥"

भ्रष्टस्य तुङ्गादवरोहिसञ्ज्ञा*
मध्या भवेत्सा सुहृदुच्चभागे ।
आरोहिणी निम्नपरिच्युतस्य
नीचारिभांशेष्वधमा भवेत्सा ।। ६ ।।

दशान्तर्दशा-नामान्तर ।

जो ग्रह अपने परमोच्चभाग से नीचे को चलकर परमनीच भाग तक छहराशि में कहीं स्थित हो, उसकी दशा या अन्तर्दशा का अवरोहिणी नाम है। यह अवरोहिणी अधमफलों की देने वाली है और यही अवरोहिणी दशा और अन्तर्दशा जो अपने मित्र की राशि या नवांश में अथवा उच्च के नवांश में स्थित ग्रह की हो तो उसका मध्या नाम होता है। वह मध्यमफल की देनेवाली होती है। और जो ग्रह अपने परमनीच भाग से चलकर परमोच्चभाग तक छहराशि में कहीं स्थित हो, उसकी दशा और अन्तर्दशा का आरोहिणी नाम है। यह शुभफलों की देनेवाली है और यही आरोहिणी दशा या अन्तर्दशा जो अपने नीच राशि के नवांश में या शत्रु की राशि अथवा नवांश में स्थित ग्रह की हो तो उसका अधमा नाम होता है। वह अधमफलों की देनेवाली होती है ।। ६ ।।

नीचारिभांशे समवस्थितस्य
शस्ते गृहे मिश्रफला प्रदिष्टा ।
सञ्ज्ञानुरूपाणि फलान्यथैषां
दशासु वक्ष्यामि फलोपयोगम् ।। ७ ।।

---

* भगवान् गार्गिः—उच्चनीचान्तरस्थस्य दशा स्यादवरोहिणी ।
तस्यामल्पमवाप्नोति फलं क्लेशाच्छुभं नरः ।।
मित्रोच्चात्मांशकस्थस्य मध्या मध्यफला तु सा ।
नीचोच्चमध्यगस्योक्ता श्रेष्ठा चारोहिणी दशा ।।
सैवाधमाख्या भवति नीचराश्यंशगस्य तु ।
अवरोहिणी चेदधमा भवेत्कष्टफला तदा ।।
आरोहिणी मध्यफला संपूर्णा परिकीर्तिता ।"

दशान्तर्दशा नामान्तर ।

जो ग्रह अपनी उच्चराशि या मूल-त्रिकोणराशि, अपनी राशि तथा मित्र की राशि में स्थित होकर नीच राशि के या शत्रु-राशि के नवांश में स्थित हो तो उसकी दशा तथा अन्तर्दशा का मिश्रफला नाम है। यह शुभ और अशुभ मिले हुए फलों की देनेवाली है। अब इन सबका यथोचित नामसदृश फल दशाओं में कहेंगे ॥ ७ ॥

उभयेऽधममध्यपूजिता द्रेष्काणैश्चरभेषु चोत्क्रमात् ।
अशुभेष्टसमाः स्थिरे क्रमाद्धोरायाः परिकल्पिता दशा ॥८॥

शुभाशुभ लग्नदशा ।

जो लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो द्रेष्काणों के क्रम से लग्न की अधम, मध्यम तथा शुभ दशा होती है अर्थात् प्रथम द्रेष्काण का उदय हो तो अधम फल देनेवाली, दूसरे द्रेष्काण का उदय हो तो मध्यम (समफल) देनेवाली और तीसरे द्रेष्काण का उदय हो तो शुभ फल देनेवाली लग्न की दशा होती है। जो लग्न में चर राशि हो तो द्रेष्काणों के व्युत्क्रम से अर्थात् प्रथम द्रेष्काण का उदय हो तो शुभ फल देनेवाली, दूसरे द्रेष्काण का उदय हो तो शुभाशुभ मिले हुए फल की देनेवाली और तीसरे द्रेष्काण का उदय हो तो अधम फल की देनेवाली लग्न की दशा होती है। जो लग्न में स्थिर राशि हो तो पहले द्रेष्काण में अशुभ, द्वितीय द्रेष्काण में श्रेष्ठ और तीसरे द्रेष्काण में मध्यम फल देनेवाली दशा होती है ॥ ८ ॥

एकं द्वौ नव विंशतिर्धृतिकृती पञ्चाशदेषां क्रमा-
च्चन्द्रारेन्दुजशुक्रजीवदिनकृद्दैवाकरीणां समाः ।
स्वैः स्वैः पुष्टफला निसर्गजनितैः पक्तिर्दशायाः क्रमा-
दन्ते लग्नदशा शुभेति यवना नेच्छन्ति केचित्तथा ॥ ९ ॥

नैसर्गिक ग्रहदशा-काल ।

चन्द्रमा, मंगल, बुध, शुक्र, बृहस्पति, सूर्य और शनैश्चर इन ग्रहों की नैसर्गिक दशाओं के क्रम से १, २, ९, २०, १८, २०, ५० ये वर्ष होते हैं अर्थात् जन्म समय से आरम्भ करके चन्द्रमा की एक वर्ष की, मंगल की दो वर्ष की, बुध की नव वर्ष की, शुक्र की बीस वर्ष की, बृहस्पति की अठारह वर्ष की, सूर्य की बीस वर्ष की और शनैश्चर की पचास वर्ष की नैसर्गिक दशा होती है । सब जोड़-कर एक सौ बीस १२० वर्ष की सबकी दशाएँ हुईं ।

नैसर्गिक दशप्रयोजन ।

पूर्व गणित की रीति से कही हुई दशा या अन्तर्दशा इस नैस र्गिक दशा के वर्षों से युक्त हो अर्थात् जिस काल में पूर्वोक्तदशा हो उसी काल में यह भी हो अथवा जितने ही काल तक दोनों दशाएँ मिलकर भोग करती हों तब तक उन दशाओं का शुभ या अशुभ फल सम्पूर्ण होता है । जो नैसर्गिक और तात्कालिक ये दोनों भिन्न-भिन्न काल में हों तो ग्रह के बलाबल से सम्पूर्ण अथवा हीन फल होता है ।

लग्न का नैसर्गिक दशाकाल ।

एक सौ बीस वर्ष से अधिक जो किसी का आयुर्दाय हो तो वही अधिक काल लग्न की नैसर्गिक दशा होती है । वह लग्न की दशा शुभ फलों की देने वाली होती है और जो एकसौ* बीस वर्ष से अधिक आयुर्दाय न हो तो लग्न की दशा नहीं होती है । ऐसे ही सत्तर वर्ष से अधिक न हो तो शनैश्चर की नैसर्गिक दशा नहीं होती है । पचास वर्ष से अधिक न हो तो सूर्य और शनैश्चर इन दोनों की नैसर्गिक दशा नहीं होती है । इसी तरह जितना ही आयुर्दाय

---

* सत्याचार्यः—"एकाब्दिकः शशी द्व्याब्दिकः कुजो द्वादशाब्दिकः सौम्यः ।
द्वात्रिंशद्भृगुपुत्रो गुरुस्तु कथितः शतस्यार्द्धम् ॥
सप्तत्यब्दः सूर्यो विंशत्यधिकः शनैश्चरोऽब्दशतः ।
वयसोऽन्तराणि चैषां स्त्रदशातैसर्गिकः कालः ॥
स्वं स्वं वयसः सदृशं ग्रहः समासाद्य देहिनां कालम् ।
रक्षणपोषणचेष्टास्वभावदाः स्युर्यथासंख्यम् ॥"

कम हो उतने ही ग्रहों की दशा कम होती जायगी और कोई ऐसा कहते हैं कि एक सौ बीस वर्ष की परमायु कही है तो किस तरह उससे अधिक आयु हो सकेगी ? सो उनका कहना ठीक नहीं है; क्योंकि एक सौ बीस वर्ष की जो परमायु कही गई है सो घोड़ादि जानवरों के आयुर्दाय जानने के लिये कही गई है, कुछ इसके लिये नहीं कही गई है कि इतने ही तक आयु होती है। इससे अधिक नहीं होती है। क्योंकि एकसौ बीस वर्ष से भी अधिक आयु हो सकती है। यथा—

मीन लग्न और मीन ही के नवांश में किसी का जन्म हो और मीन लग्न बली हो तो चौबीस वर्ष लग्न की आयु हुई और सूर्य को छोड़कर अन्य सब ग्रह जिस किसी राशि में वक्री या उच्चस्थ होकर मीन ही के नवांश में स्थित हों तो उन सबकी दो सौ सोलह वर्ष की और सूर्य मेष राशि में धन के नवांश में स्थित हो तो उसकी सत्ताईस वर्ष की आयु हुई। अब सबका जोड़ दो सौ सरसठ हुआ। इतने वर्ष का भी आयुदाय गणित से आ सकता है। कदाचित् इस पर भी कोई कहे कि ऐसा किसी को हमने नहीं देखा कि जो दो सौ सरसठ वर्ष तक जीता रहे। इसका उत्तर यह है कि हम लोगों की कितनी बड़ी भारी दृष्टि है कि जिससे इस सम्पूर्ण संसार को देख सकेंगे। इसमें इतने दिन का जीना कुछ कठिन नहीं है। यह यवनाचार्य का मत है। परन्तु श्रुतकीर्ति* इत्यादि आचार्य्य इस लग्न की नैसर्गिक दशा को नहीं मानते हैं ॥ ९ ॥

पाकस्वामिनि लग्नगे सुहृदि वा वर्गेऽस्य सौम्येऽपि वा
प्रारब्धा शुभदा दशा त्रिदशषड्लाभेषु वा पापके ।
मित्रोच्चोपचयत्रिकोणमदने पाकेश्वरस्य स्थिति-
श्चन्द्रः सत्फलबोधनानि कुरुते पापानि चातोऽन्यथा ॥१०॥

---

* श्रुतकीर्तिः—"अन्ते लग्नदशा शुभेति यवना नैतद्बहूनां मतं
तस्मिन् हीनबले यतोऽन्त्यसमये सा स्यादतो नेष्यते ।"

दशाप्रारम्भकालिक शुभाशुभज्ञान ।

दशा और अन्तर्दशा के जितने वर्षादि हों, उनमें वर्षों के स्थान में बारह से गुणकर उनमें अगले मासों को जोड़ दे, फिर उन मासों को तीस से गुणकर उनमें अगले दिनों को जोड़ दे, फिर इस सब दिनादि को जन्मकालिक सावन अहर्गण में जोड़ दे तो दशा और अन्तर्दशा के समाप्त काल का सावन अहर्गण होगा। अब इसी सावन अहर्गण से जन्मकालिक ग्रहों की तरह सलग्न ग्रहों को स्पष्ट करके उनसे अगली दशा और अन्तर्दशा के शुभाशुभ भलों का विचार करे। जो अगली दशा और अन्तर्दशा का स्वामी अथवा स्वामी का मित्र अथवा स्वामी का पूर्वोक्त वर्ग अथवा कोई शुभ ग्रह लग्न में स्थित हो तो वह प्रारम्भ होनेवाली दशा या अन्तर्दशा शुभ फलों की देनेवाली होती है। अथवा उसी दशा या अन्तर्दशा का स्वामी पूर्व दशा समाप्तकालिक लग्न से तीसरे, दशवें, छठे और ग्यारहवें इनमें कहीं स्थित हो तो भी उक्त दशा और अन्तर्दशा शुभ फलों की देने वाली होती है। यद्यपि काल की संख्या करने के लिये सौर, सावन, चान्द्र और नक्षत्र ये चार प्रकार के मान कहे गये हैं। सौर उसे कहते हैं जो कि सूर्य्य* के एक एक अंश भोग करने से होता है और चान्द्र उसे कहते हैं जो कि चन्द्रमा के एक-एक सोलहवें भाग के घटने और बढ़ने से होता है तथा सावन उसे कहते हैं जो कि सूर्य के उदय से फिर उदय तक होता है और नाक्षत्र उसे कहते हैं जो कि चन्द्रमा के एक-एक नक्षत्र को भोग करने से होता है। तथापि इस आयुर्दाय, दशा तथा अन्तर्दशा के विषय में सावन ही का ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि भगवान् गार्गि आचार्य ने कहा है कि—

आयुर्दायविभागश्च प्रायश्चित्तक्रियास्तथा ।
सावनेनैव कर्तव्याः सत्राणामप्युपासनम् ॥

---

* ''रव्यंशभोगोऽहोरात्रः सौरश्चान्द्रमसस्तिथिः ।
चन्द्रनक्षत्रभोगस्तु नाक्षत्रः परिकीर्तितः ॥
स साबनो ग्रहर्क्षाणामुदयादुदयावधि ।
नाक्षत्रमाने मासः स्यात्सप्तविंशतिबासराः ॥
शेषमानेषु निर्दिष्टो मासस्त्रिंशद्दिनात्मकः ।''

अर्थ—आयुर्दाय का विभाग अर्थात् दशा, अन्तर्दशा इत्यादि और प्रायश्चित्त क्रिया अर्थात् किये हुए पापों को दूर करने के योग्य कर्मविशेष और यज्ञादि कर्मों का अनुष्ठान इन सबका नियम सावन ही मान से करना चाहिए ।

तात्कालिक दशादि का शुभाशुभ ज्ञान ।

दशापति के मित्र, गृह तथा उच्चस्थान और उपचय अर्थात् तीसरा, छठा, दशवाँ, ग्यारहवाँ और त्रिकोण अर्थात् पाँचवाँ, नवाँ और सातवाँ इनमें से किसी स्थान में जब चन्द्रमा रहता है तब वह राशि जन्म काल में जिस भाव में रहती है उस भाव के और तात्कालिक दशा के शुभ फल को जनाती है और जब इन स्थानों को छोड़कर दशापति के शत्रुगृह, नीस्थान तथा प्रथम, दूसरा, चौथा, आठवाँ और बारहवाँ इनमें से किसी स्थान में चन्द्रमा रहता है तब वह राशि जन्मकाल में जिस भाव में हो उस भाव के और तात्कालिक दशा के अशुभ फल को जनाती है ।। १० ।।

प्रारब्धा हिमगौ दशा स्वगृहगे मानार्थसौख्यावहा
कौजे दूषयति स्त्रियं बुधगृहे विद्यासुहृद्वित्तदाः ।
दुर्गारण्यपथालये कृषिकरी सिंहे सितर्क्षेऽन्नदा
कुस्त्रीदा मृगकुम्भयोर्गुरुगृहे मानार्थसौख्यावहा ।। ११ ।।

दशान्तर्दशाकालिक चन्द्राक्रांतराशि से शुभाशुभफलज्ञान ।

अपने स्थान अर्थात् कर्क के चन्द्रमा में जिस दशा का प्रारम्भ होता है वह दशा मान, धन और सुख इत्यादि की देनेवाली होती है । मेष तथा वृश्चिक के चन्द्रमा में जिस दशा का प्रारम्भ होता है वह दशा स्त्री को दूषित करती है । मिथुन और कन्या के चन्द्रमा में जिस दशा का प्रारम्भ होता है वह दशा विद्या, मित्र और धनादिकों की देनेवाली होती है । सिंहराशि के चन्द्रमा में जिस दशा का प्रारम्भ होता है वह दशा दुर्ग अर्थात् किसी कठिनस्थान, वन तथा मकान के समीप में खेती करानेवाली होती है । वृष और तुला के चन्द्रमा में जिस दशा का प्रारम्भ होता है वह दशा अन्न

देनेवाली होती है। मकर और कुम्भ के चन्द्रमा में जिस दशा का प्रारम्भ होता है वह दशा निन्दित स्त्री की देनेवाली होती है। धन और मीन के चन्द्रमा में जिस दशा का प्रारम्भ होता है वह दशा मान, धन और सुखादिकों की देनेवाली होती है। इसी तरह शुभ काल में शुभ दशा के प्रारम्भ होने से उसका अतिशय शुभ फल और अशुभ काल में शुभ दशा के प्रारम्भ होने से उसका मध्यम फल और अशुभ काल में अशुभ दशा के प्रारम्भ होने से उसका अतिशय अशुभ फल तथा मध्या दशा शुभ काल में प्रारम्भ होनेसे शुभ फल देनेवाली एवं अशुभ काल में प्रारम्भ होने से अशुभ फल देनेवाली होती है॥ ११ ॥

सौर्या स्वंनखदन्तचर्मकनककौर्याध्वभूपाहवै-
स्तैक्ष्ण्यं धैर्यमजस्रमुद्यमरतिः ख्यातिः प्रतापोन्नतिः।
भार्यापुत्रधनारिशस्त्रहुतभुग्भूपोद्भवा व्यापद-
स्त्यागी पापरतिः स्वाभृत्यकलहो हृत्क्रोडपीडामयाः ॥१२॥

सूर्य की शुभ दशा का फल।

नख (व्याघ्रनख या सुगंधि द्रव्य-विशेष), दाँत (हाथी दाँत आदि) चर्म (बाघंबर-मृगचर्मादि), सोना, क्रूरता, मार्ग (रास्ता), राजा और लड़ाई इनसे धन की प्राप्ति तथा तेजी (क्रूरता), धैर्यावलम्बन, हमेशा उद्यम में मन लगना, प्रसिद्ध होना तथा प्रताप की बढ़ती ये सब फल सूर्य की शुभ दशा या अन्तर्दशा में होते हैं॥

सूर्य की अशुभदशा का फल।

स्त्री, पुत्र, धन, शत्रु हथियार, अग्नि और राजा इन सबसे विपत्ति होती है। त्याग तथा पापकर्मों में प्रीति, अपने भृत्य से झगड़ा, हृदय और पेट में पीड़ा और रोग ये सब फल सूर्य की अशुभ दशा में होते हैं। परन्तु यहाँ यह विचारना चाहिए कि इन उक्त फलों में भी जो शुभ हैं वे शुभ दशा में और जो अशुभ फल हैं वे अशुभ दशा में तथा जो मिले हुए हैं वे शुभाशुभ दशा में होते हैं॥ १२ ॥

इन्दोः प्राप्य दशां फलानि लभते मन्त्रद्विजात्युद्भवा-
नीक्षुक्षीरविकारवस्त्रकुसुमक्रीडातिलान्नश्रमैः।
निद्रालस्यमृदुद्विजामररतिः स्त्रीजन्ममेधाविता
कीर्त्यर्थोपचयक्षयौ च बलिभिर्वैरं स्वपक्षेण च ॥ १३ ॥

चन्द्रमा की शुभदशा का फल।

मन्त्र, ब्राह्मण, राब या गुड़, दही या घी, वस्त्र, फूल, मैथुनादि कर्म्म, तिल, अन्न और परिश्रम इनसे पैदा हुआ शुभ फल चन्द्रमा की शुभ दशा और अन्तर्दशा में होता है ॥

चन्द्रमा की अशुभदशा का फल।

निद्रा, आलस्य, क्षमा, ब्राह्मण और देवता इनमें प्रीति; कन्या पैदा होना, बुद्धि की वृद्धि, कीर्ति, धन की क्षय-वृद्धि तथा किसी बली वैरी और अपने बन्धुवर्ग से वैर ये सब फल चन्द्रमा की अशुभ दशा या अन्तर्दशा में होते हैं। परन्तु यहाँ भी शुभ दशा में शुभ फल और अशुभ दशा में अशुभ फल तथा शुभाशुभ दशा में मिला हुआ फल होता है ॥ १३ ॥

भौमस्यारिविमर्द्दभूपसहजक्षित्याविकाज्यैर्धनं
प्रद्वेषः सुतदारमित्रसहजैर्विद्वद्गुरुद्वेष्टृता।
तृष्णासृग्ज्वरपित्तभङ्गजनिता रोगाः परस्त्रीष्टताः*
प्रीतिः पापरतैरधर्मनिरतिः पारुष्यतैक्ष्ण्यानि च ॥ १४ ॥

मंगल की शुभदशा का फल।

शत्रु का नाश होना, राजा, भाई, भूमि, ऊनी वस्तु और बकरा इन सबसे धन का मिलना ये सब फल मंगल की दशा या अन्तर्दशा में होते हैं ॥

मंगल की अशुभदशा का फल।

पुत्र, मित्र, स्त्री और भाई इन सबसे वैर तथा पण्डित और गुरु

* परस्त्रीकृताः इत्यपि पांठः।

इनमें अप्रीति; पियास, रुधिरकोप से ज्वर, पित्ताधिक्य और अङ्गों का टूटना इन सबसे पैदा हुए रोग होते हैं। तथा अन्य स्त्रियों के गमन करने से गर्मी व धातुक्षय इत्यादि रोग या परस्त्री में स्नेह रखना और पापियों में प्रीति, अधर्म्म में रुचि, कठोर बोलना और कठोर स्वभाव ये सब फल मङ्गल की अशुभ दशा तथा अन्तर्दशा में होते हैं ॥ १४ ॥

बौध्यां दौत्यसुहृद्गुरुद्विजधनं विद्वत्प्रशंसा यशो
युक्तिद्रव्यसुवर्णवेसरमहीसौभाग्यसौख्याप्तयः ।
हास्योपासनकौशलं मतिचयो धर्म्मक्रियासिद्धयः
पारुष्यं श्रमबन्धमानसशुचः पीडा च धातुत्रयात् ॥ १५ ॥

बुध की शुभ दशा का फल ।

दूतकर्म, मित्र, गुरु और ब्राह्मण इन सबसे धन की प्राप्ति और पण्डितों से की हुई स्तुति, कीर्ति तथा कांस्य, पित्तल, सुवर्ण, ऊँट, पृथ्वी, सौभाग्य और सुख इन सबकी प्राप्ति तथा हास्य, सेवा में चतुरता, बुद्धि वृद्धि और धर्म्म क्रियाओं की सिद्धि ये सब फल बुध की शुभ दशा तथा अन्तर्दशा में होते हैं।

बुध की अशुभदशा का फल ।

कठोर वचन, परिश्रम, बन्धन, मन में खेद तथा वात, पित्त और कफ इन तीनों धातुओं के विषमभाव से शरीर में पीड़ा ये सब फल बुध की अशुभ दशा तथा अन्तर्दशा में होते हैं ॥ १५ ॥

जैव्यां मानगुणोदयो मतिचयः कान्तिः प्रतापोन्नति-
र्माहात्म्योद्यममन्त्रनीतिनृपतिस्वाध्यायमन्त्रैर्धनम् ।
हेमाश्वात्मजकुञ्जराम्बरचयः प्रीतिश्च सद्भूमिपैः
सूक्ष्मोहागमनाश्रमः श्रवणरुग्वैरं विधर्म्माश्रितैः ॥ १६ ॥

बृहस्पति की शुभदशा का फल ।

मान और गुणों का उदय, बुद्धि की वृद्धि, सुन्दर कान्ति, प्रताप की

वृद्धि, माहात्म्य (परोपकारशीलता), बढ़ती का उपाय, मन्त्र का जप, नीति, राजा और वेदाध्ययन इन सबसे धन की प्राप्ति तथा सुवर्ण, घोड़ा, पुत्र, हाथी और वस्त्र इन सब का संचय और अच्छे राजाओं से मित्रता ये सब फल बृहस्पति की शुभ दशा और अन्तर्दशा में होते हैं ।।

बृहस्पति की अशुभदशा का फल ।

अत्यन्त सूक्ष्म वस्तु के विचार और गमन का परिश्रम तथा कर्ण रोग और धर्म्म रहित पुरुषों से वैर ये सब फल बृहस्पति की अशुभ दशा और अन्तर्दशा में होते हैं ।। १६ ।।

शौक्र्यां गीतरतिप्रमोदसुरभिद्रव्यान्नपानाम्बर-
स्त्रीरत्नद्युतिमन्मथोपकरणज्ञानेष्टमित्रागमाः ।
कौशल्यं क्रयविक्रये कृषिनिधिप्राप्तिर्धनस्यागमो
वृन्दोर्वीशनिषादधर्मरहितैर्वैरं शुचः स्नेहतः ।। १७ ।।

शुक्र की शुभदशा का फल ।

गीत में प्राप्ति, आनन्द, सुगन्धित वस्तु, भोजन तथा पीने की वस्तु, वस्त्र, उत्तम स्त्री, जवाहिरात, कान्ति, भोग-विलास के सामान, ज्ञान, प्रियवस्तु और मित्र इन सब वस्तुओं की प्राप्ति तथा वस्तुओं के मोल लेने और बेचने की चतुरता, खेती का कर्म, किसी गड़ी हुई वस्तु और धन की प्राप्ति ये सब फल शुक्र की शुभ दशा और अन्तर्दशा में होते हैं ।

शुक्र की अशुभदशा का फल ।

टुकड़ीबाज लुँगाड़ों से, राजा से, व्याधों से और पापियों से बैर तथा जिनमें बहुत ही प्रीति हो उनसे क्लेश ये सब फल शुक्र की अशुभ दशा में होते हैं ।। १७ ।।

सौर्य्यामत्र खरोष्ट्रपक्षिमहिषीवृद्धाङ्गनावाप्तयः
श्रेणीग्रामपुराधिकारजनिता पूजा कुधान्यागमः ।

श्लेष्मेर्ष्यानिलकोपमोहमलिनव्यापत्तितन्द्राश्रमान्
भृत्यापत्यकलत्रभर्त्सनमपि प्राप्नोति च व्यङ्गताम् ॥ १८ ॥

शनैश्चर की शुभदशा का फल ।

गधा, ऊँट, पक्षी, भैंस तथा वृद्धा स्त्री इन वस्तुओं की प्राप्ति और समान जातिवालों का समूह, गाँव तथा नगर इन सबका अधिकार मिलने से पूजा और निषिद्ध अन्न की प्राप्ति ये सब फल शनैश्चर की शुभ दशा और अन्तर्दशा में होते हैं।

शनैश्चर की अशुभदशा का फल ।

कफाधिक्य, परसन्ताप, वायुकोप, क्रोध, मोह और मलिनता, विशेष आपत्ति, आलस्य तथा परिश्रम इन सब वस्तुओं की प्राप्ति और दास, पुत्र और स्त्री इन सबसे फजीहत होना और किसी व्याधि आदि से अंग-भंग होना ये सब फल शनैश्चर की अशुभ दशा और अन्तर्दशा में होते हैं ॥ १८ ॥

दशासु शस्तासु* शुभानि कुर्व-
न्त्यनिष्टसञ्ज्ञास्वशुभानि चैवम् ।
मिश्रासु मिश्राणि दशाफलानि
होराफलं लग्नपतेः समानम् ॥ १९ ॥

---

* सत्याचार्यः—"जन्मन्युपचयभवनेषु संस्थिताः सव्यगाः सुमूर्तिधराः ।
श्रेष्ठं फलं विदध्युर्ग्रहाः क्रमात्स्वां दशां प्राप्य ॥
अन्यैर्निहिता रूक्षाल्पमूर्तयो ह्यपचयर्क्षसंस्थाश्च ।
स्वदशाभिहितं नेष्टं ग्रहाः प्रयच्छन्ति लोकेषु ॥"

तथा च सारावल्याम्—"प्रवेशे बलवान् खेटः शुभैर्वा सन्निरीक्षितः ।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो मृत्युकृन्न भवेत्तदा ॥
अन्तर्दशाधिनाथस्य विबलस्य दशा यदा ।
विबला स्यात्तदा भंगो न बाध्या तस्य च ध्रुवम् ॥
युद्धे च विजयी तस्मिन् ग्रहयोगे शुभे यदि ।
दशायां न भवेत्कष्टं स्वोच्चादिषु च संस्थिते ॥"

सर्वदशाओं का शुभाशुभ फल ।

शुभ दशा तथा शुभ अन्तर्दशा में शुभ ग्रह शुभ फलों को देता है और अशुभ दशा तथा अशुभ अन्तर्दशा में अशुभ ग्रह अशुभ फलों को देता है और शुभाशुभ दशा और अन्तर्दशा में शुभाशुभ ग्रह शुभाशुभ फलों को देता है ।।

लग्नदशा का फल ।

लग्नपति की दशा में जो फल कहा है वही फल लग्न की दशा तथा अन्तर्दशा में होता है ।। १९ ।।

सञ्ज्ञाध्याये यस्य यद्द्रव्यमुक्तं
कर्माजीवो यश्च यस्योपदिष्टः ।
भावस्थानालोकयोगोद्भवं च
तत्तत्सर्वं तस्य योज्यं दशायाम् ।। २० ।।

दशाओं का साधारण फल ।

संज्ञाध्याय में जिस ग्रह का जो ताम्र इत्यादि द्रव्य कहा है उस ग्रह की शुभ दशा और अन्तर्दशा में उस द्रव्य की प्राप्ति तथा अशुभ दशा और अशुभ अन्तर्दशा में उस द्रव्य की हानि कहना चाहिये । और कर्माजीवाध्याय में जिस ग्रह से जो वृत्ति कही है उस ग्रह की शुभदशा या अन्तर्दशा में उस वृत्ति की वृद्धि और अशुभ दशा या अशुभ अन्तर्दशा में उस वृत्ति की हानि कहना चाहिए । जिस ग्रह का जो भावफल, राशिफल, दृष्टि-फल और योगफल अन्यत्र कहा है वह सब उस ग्रह की दशा या अन्तर्दशा में कहना चाहिए; परन्तु योगफल में यह भेद है कि बहुत से योगकारक ग्रहों में जो ग्रह बली हो, उसकी ही दशा और अन्तर्दशा में वह योगफल कहना चाहिए।। २० ।।

छायां महाभूतकृतां च सर्वे-
ऽभिव्यञ्जयन्ति स्वदशामवाप्य ।

क्ष्मम्ब्वग्निवाय्वम्बरजान्गुणांश्च
नासास्यदृक्त्वक्छ्रवणानुमेयान् ॥ २१ ॥

अग्नि, पृथ्वी, आकाश, जल और वायु इन पाँचों में से जो महाभूत जिस ग्रह का कहा है, वह ग्रह अपनी दशा और अन्तर्दशा में उस महाभूत की कान्ति को प्राणी के शरीर में प्रकट करता है अर्थात् मंगल और सूर्य अपनी दशा में अग्नि की कान्ति, बुध भूमि की कान्ति, बृहस्पति आकाश की कान्ति, शुक्र और चन्द्रमा जल की कान्ति और शनैश्चर वायु की कान्ति को प्राणी के शरीर में प्रकट करते हैं और वही कान्ति अपने गुणों को प्रकाशित करती है। अग्नि की कान्ति उत्तम रूप को, भूमि की कान्ति उत्तम गन्ध को, आकाश की कान्ति उत्तम मधुर शब्दों को, जल की कान्ति उत्तम रस को और वायु की कान्ति उत्तम स्पर्श को प्रकाशित करती है। ये पूर्वोक्त गुण इन्द्रियों से मालूम होते हैं। नेत्र से रूप, नाक से गन्ध, कान से शब्द, जिह्वा से रस और त्वचा से स्पर्श मालूम होता है। अर्थात् जिसके शरीर में उत्तम सुगंधि आती हो तो बुधकृत पार्थिवी छाया, यदि मिष्ट रसों का प्रेमी हो तो चन्द्र-शुक्रकृत जल की छाया, जो बहुत तेज स्वभाव और सुन्दर रूपवाला हो तो सूर्य मंगलकृत आग्नेयी छाया, जो स्पर्श में बहुत कोमल हो तो शनैश्चरकृत वायुसम्बन्धी छाया और जो मिष्टभाषी हो तो गुरुकृत आकाश सम्बन्धी छाया जानना चाहिए। छाया के विशेष लक्षण वाराही संहिता में देखना चाहिए ॥२१॥

शुभफलददशायां तादृगेवान्तरात्मा
बहु जनयति पुंसां सौख्यमर्थागमं च ।
कथितफलविपाकैस्तर्कयेद्वर्तमानां
परिणमति फलोक्तिः स्वप्नचिन्तास्ववीर्यैः ॥ २२ ॥

ग्रहजीवैक्यभाव का वर्णन ।

शुभ फल देनेवाले ग्रह की दशा में पुरुषों का जीवात्मा शुभ

फल देनेवाले ग्रह के तुल्य होकर सुख और धन की प्राप्ति इत्यादि बहुत फलों को देता है और अशुभ होने से अशुभ फलों का देना तो अर्थ से ही सिद्ध हैं ।

वर्त्तमान भोग से वर्त्तमान दशा का निर्णय ।

ग्रहों की दशाओं का जो फल कहा है उस फल को भोगते किसी को देखकर उस फल के अनुसार अनुमान करना चाहिए कि इस ग्रह की दशा इस प्राणी के वर्तमान है ।

वीर्यनिग्रहोक्तफल की सार्थकता ।

जो ग्रह बलहीन होते हैं उनका उक्त शुभाशुभ फल उनकी ही दशा और अन्तर्दशा में, बल के अनुसार, स्वप्न तथा मन में ही अनुभूत हो जाता है ।। २२ ।।

एकग्रहस्य सदृशे फलयोर्विरोधे
नाशं वदेद्यदधिकं परिपच्यते तत् ।
नान्यो ग्रहः सदृशमन्यफलं हिनस्ति
स्वां स्वां दशामुपगताः सुफलप्रदाः स्युः ।। २३ ।।

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके दशान्तर्दशाध्यायोऽष्टमः ।।८।।

एकग्रहदत्त फलद्वय-विरोध का नियम ।

एक ग्रह के दिये हुए सदृश वस्तु-विषयक विरोधी दो फल हों तो उन दोनों का नाश होता है । यथा—कोई एक ग्रह किसी प्रकार से सुवर्ण का देनेवाला है और वही दूसरे प्रकार से सोने का हरनेवाला है, तो यहाँ पर सोने की हानि तथा लाभ कुछ नहीं होता है और कोई एक ग्रह दो प्रकार सोने का देनेवाला है और वही किसी एक प्रकार से सोने का हरने वाला है तो जो अधिक हो उस फल का भोग होता है अर्थात् दो प्रकार से आने वाले सोने की प्राप्तिरूप फल का भोग होता है और किसी ग्रह के दिये

हुए फल को उससे विरुद्ध फल देनेवाला ग्रह नाश नहीं करता है। क्योंकि अपनी-अपनी दशा को प्राप्त होकर सब ग्रह अपना-अपना फल देते हैं। यथा—कोई एक ग्रह सोने का देनेवाला है और कोई अन्य ग्रह किसी प्रकार से सोने का हरनेवाला है, तो इन दोनों में से कोई किसी के फल को हटा नहीं सकता है किन्तु इतना करेंगे कि एक अपनी दशा में सोने को देगा और दूसरा अपनी दशा में हर लेगा ॥ २३ ॥

दो० श्रीवराहकृतजातके, ग्रहदशादि ज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत अष्टमाध्याय ॥ ८ ॥

अथाष्टकवर्गाध्यायो नवमः ।

स्वादर्कःप्रथमायबन्धुनिधनद्व्याज्ञातपो द्यूनगो
वक्रात्स्वादिव तद्वदेव रविजाच्छुक्रात्स्मरान्त्यारिगः ।
जीवाद्धर्मसुतायशत्रुषु दशत्र्यायारिगः शीतगो-
स्तेष्वेवान्त्यतपः सुतेषु च बुधाल्लग्नात्सबन्धवन्त्यगः ॥ १ ॥

सूर्याष्टकवर्गाङ्क ।

इस प्रकरण में जन्मकालिक सलग्न ग्रहों के स्थानों से गोचर कालिक स्थान द्वारा प्रत्येक ग्रह के शुभाशुभ का विचार किया जाता है। जन्मकाल में जो ग्रह जिस स्थान पर स्थित हो वही उसका अपना स्थान कहा जाता है।

यथा—सूर्य जन्मकालिक अपने स्थान से तथा मंगल और शनैश्चर के स्थान से गोचर कालिक पहिले, ग्यारहवें, चौथे, आठवें, दूसरे, दशवें, नवें, सातवें और शुक्र के स्थान से सातवें, बारहवें, छठे और बृहस्पति के स्थान से नवें, पाँचवें, बारहवें, छठे तथा चन्द्रमा के स्थान से दशवें, तीसरे, ग्यारहवें, छठे और बुध के स्थान से दशवें, तीसरे, ग्यारहवें, छठे, बारहवें, नवें, पाँचवें तथा इसी तरह लग्न स्थान से दशवें, तीसरे, ग्यारहवें, छठे, चौथे और बारहवें इन स्थानों में रहते शुभ और अन्यत्र स्थित अशुभ फल होता है ॥ १ ॥

सूर्यशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र।

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११	०	७	१०
८	०	८	१०	०	०	८	११
९	०	९	११	०	०	९	१२
१०	०	१०	१२	०	०	१०	०
११	०	११	०	०	०	११	०

सूर्य्यानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र।

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	१	३	१	१	१	३	१
५	२	५	२	२	२	५	२
६	४	६	४	३	३	६	५
१२	५	१२	७	४	४	१२	७
०	७	०	८	७	५	०	८
०	८	०	०	८	८	०	९
०	९	०	०	१०	९	०	०
०	१२	०	०	१२	१०	०	०
०	०	०	०	०	११	०	०

लग्नात्षट्त्रिदशायगः सधनधीधर्म्मेषु चाराच्छशी
स्वात्सास्तादिषु साष्टसप्तसु रवेः षट्त्र्यायधीस्थो यमात् ।
धीत्र्यायाष्टमकण्टकेषु शशिजाज्जीवाद्व्ययायाष्टगः
केन्द्रस्थश्च सितात्तु धर्मसुखधीत्र्यायास्पदानङ्गगः ॥ २ ॥

चन्द्राष्टकवर्गाङ्क ।

चन्द्रमा जन्मकालिक लग्न से गोचरकालिक छठे, तीसरे, दशवें, ग्यारहवें और मंगल के स्थान से छठे, तीसरे, दशवें, ग्यारहवें, दूसरे, पाँचवें, नवें और अपने स्थान से छठे, तीसरे, दशवें, ग्यारहवें, सातवें, पहिले तथा सूर्य के स्थान से छठे, तीसरे, दशवें, ग्यारहवें, आठवें, सातवें और शनैश्चर के स्थान से छठे, तीसरे, ग्यारहवें, पाँचवें तथा बुध के स्थान से पाँचवें, तीसरे, ग्यारहवें, आठवें, पहिले, चौथे, सातवें, दशवें और बृहस्पति के स्थान से बारहवें, ग्यारहवें, आठवें, पहिले, चौथे, सातवें, दशवें और शुक्र के स्थान से नवें, चौथे, पाँचवें, तीसरे, ग्यारहवें, दशवें और सातवें इन स्थानों में रहते शुभ और अन्यत्र स्थित अशुभ फल होता है ॥ २ ॥

चन्द्रशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०	सू०
१	२	१	१	३	३	३	३
३	३	३	४	४	५	६	६
६	५	४	७	५	६	१०	७
७	६	५	८	७	११	११	८
१०	९	७	१०	९	०	०	१०
११	१०	८	११	१०	०	०	११
०	११	१०	१२	११	०	०	०
०	०	११	०	०	०	०	०

चन्द्रानिष्टाकवर्गाङ्कचक्र ।

चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०	सू०
२	१	२	२	१	१	१	१
४	४	६	३	२	२	२	२
५	७	९	५	६	४	४	४
८	८	१२	६	८	७	५	५
९	१२	०	९	१२	८	७	९
१२	०	०	०	०	९	८	१२
०	०	०	०	०	१०	९	०
०	०	०	०	०	१२	१२	०

वक्रस्तूपचयेष्विनात्सतनयेष्वाद्यादिकेषूदया-
च्चन्द्राद्दिग्विफलेषु केन्द्र निधनप्राप्तचर्थगः स्वाच्छुभः ।
धर्माायाष्टमकेन्द्रगोऽर्कतनयाज्ज्ञात्षट्त्रिधीलाभगः
शुक्रात्षड्व्ययलाभमृत्युषु गुरोः कर्मान्त्यलाभारिषु ॥ ३ ॥

मङ्गलाष्टकवर्गाङ्क ।

मङ्गल जन्मकालिक सूर्य के स्थान से गोचरकालिक तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें और पाँचवें; लग्नस्थान से पहिले, तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें; चन्द्रमा के स्थान से तीसरे, छठे और ग्यारहवें; अपने स्थान से पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, आठवें, ग्यारहवें, तथा दूसरे; शनैश्चर के स्थान से नवें, ग्यारहवें, आठवें, पहिले, चौथे, सातवें तथा दशवें; बुध के स्थान से छठे, तीसरे, पाँचवें और ग्यारहवें; शुक्र के स्थान से छठे, बारहवें, ग्यारहवें और आठवें तथा बृहस्पति के स्थान से दशवें, बारहवें, ग्यारहवें, छठे इन स्थानों में शुभ और अन्यत्र स्थित अशुभ होता है ॥ ३ ॥

मङ्गलशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०	सू०	चं०
१	३	६	६	१	१	३	३
२	५	१०	८	४	३	५	६
४	६	११	११	७	६	६	११
७	११	१२	१२	८	१०	१०	०
८	०	०	०	९	११	११	०
१०	०	०	०	१०	०	०	०
११	०	०	०	११	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

मङ्गलानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०	सू०	चं०
३	१	१	१	२	२	१	१
५	२	२	२	३	४	२	२
६	४	३	३	५	५	४	४
९	७	४	४	६	७	७	५
१२	८	५	५	१२	८	८	७
०	९	७	७	०	९	९	८
०	१०	८	९	०	१२	१२	९
०	१२	९	१०	०	०	०	१०
०	०	०	०	०	०	०	१२

द्व्याद्यायाष्टतपःसुखेषु भृगुजात्सत्र्यात्मजेष्विदुजः

साज्ञास्तेषु यमारयोर्व्ययरिपुप्राप्तचष्टगो वाक्पतेः ।

धर्मायारिसुतव्ययेषु सवितुः स्वात्साद्यकर्मत्रिगः
षट्स्वायाष्टसुखास्पदेषु हिमगोः साद्येषु लग्नाच्छुभः ॥ ४ ॥

बुधाष्टकवर्गाङ्क ।

बुध जन्मकालिक शुक्र के स्थान से गोचर कालिक दूसरे, पहिले, ग्यारहवें, आठवें, नवें, चौथे, तीसरे तथा पाँचवें और ऐसे ही मंगल तथा शनैश्चर इन दोनों के स्थानों से दूसरे, पहिले, ग्यारहवें, आठवें, नवें, चौथे, दशवें तथा सातवें और ऐसे ही बृहस्पति के स्थान से बारहवें, छठे, ग्यारहवें तथा आठवें और ऐसे ही सूर्य के स्थान से नवें, ग्यारहवें, छठे, पाँचवें तथा बारहवें और ऐसे ही अपने स्थान से नवें, ग्यारहवें, छठे, पाँचवें, बारहवें, पहिले, दशवें तथा तीसरे और ऐसे ही चन्द्रमा के स्थान से छठे, दूसरे, ग्यारहवें आठवें, चौथे तथा दशवें और ऐसे ही लग्न स्थान से छठे, दूसरे, ग्यारहवें, आठवें, चौथे, दशवें और पहिले इन स्थानों में रहते शुभ और अन्यत्र स्थित अशुभ होता है ॥ ४ ॥

बुधशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

बु०	बृ०	शु०	श०	ल०	सू०	चं०	मं०
१	६	१	१	१	५	२	१
३	८	२	२	२	६	४	२
५	११	३	४	४	९	६	४
६	१२	४	७	६	११	८	७
९	०	५	८	८	१२	१०	८
१०	०	८	९	१०	०	११	९
११	०	९	१०	११	०	०	१०
१२	०	११	११	०	०	०	११

बुधानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

बु०	बृ०	शु०	श०	ल०	सू०	चं०	मं०
२	१	६	३	३	१	१	३
४	२	७	५	५	२	३	५
७	३	१०	६	७	३	५	६
८	४	१२	१२	९	४	७	१२
०	५	०	०	१२	७	९	०
०	७	०	०	०	८	१२	०
०	९	०	०	०	१०	०	०
०	१०	०	०	०	०	०	०

दिक्स्वाद्याष्टमदायबन्धुषु कुजात् स्वात्सत्रिगेष्वङ्गिराः
सूर्यात्सत्रिनवेषु धीस्वनवदिग्लाभारिगो भार्गवात् ।
जायायार्थनवात्मजेषु हिमगोर्मन्दात्त्रिषड्धीव्यये
दिग्धीषट्स्वसुखायपूर्वनवगो ज्ञात्सस्मरेषूदयात् ॥ ५ ॥

बृहस्पत्यष्टकवर्गाङ्क ।

बृहस्पति जन्मकालिक मंगल के स्थान से गोचरकालिक दशवें, दूसरे, पहिले, आठवें, सातवें, ग्यारहवें, चौथे और अपने स्थान से दशवें, दूसरे, पहिले, आठवें, सातवें, ग्यारहवें, चौथे, तीसरे और सूर्य्य के स्थान से दशवें, दूसरे, पहिले, आठवें, सातवें, ग्यारहवें, चौथे, तीसरे, नवें तथा शुक्र के स्थान से पाँचवें, दूसरे, नवें,

दशवें, ग्यारहवें, छठे और चन्द्रमा के स्थान से सातवें, ग्यारहवें, दूसरे, नवें, पाँचवें और शनैश्चर के स्थान से तीसरे, छठे, पाँचवें, बारहवें, एवं बुध के स्थान से दशवें, पाँचवें, छठे, दूसरे, चौथे, ग्यारहवें, पहिले, नवें और लग्नस्थान से दशवें, पाँचवें छठे, दूसरे, चौथे, ग्यारहवें, पहिले, नवें और सातवें इन स्थानों में रहते शुभ और अन्यत्र स्थित अशुभ होता है ॥ ५ ॥

बृहस्पतिशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

बृ०	शु०	श०	ल०	सू०	चं०	मं०	बु०
१	२	३	१	१	२	१	१
२	५	५	२	२	५	२	२
३	६	६	४	३	७	४	४
४	९	१२	५	४	९	७	५
७	१०	०	६	७	११	८	६
८	११	०	७	८	०	१०	९
१०	०	०	९	९	०	११	१०
११	०	०	१०	१०	०	०	११
०	०	०	११	११	०	०	०

बृहस्पतिअनिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

बृ०	शु०	श०	ल०	सू०	चं०	मं०	बु०
५	१	१	३	५	१	३	३
६	३	२	८	६	३	५	७
९	४	४	१२	१२	४	६	८
१२	७	७	०	०	६	९	१२
०	८	८	०	०	८	१२	०
०	१२	९	०	०	१०	०	०
०	०	१०	०	०	१२	०	०
०	०	११	०	०	०	०	०

लग्नादासुतलाभरन्ध्रनवगः सान्त्यः शशाङ्कात्सितः
स्वात्साज्ञेषु सुखत्रिधीनवदशच्छिद्राप्तिगः सूर्यजात् ।
रन्ध्रायव्ययगो रवेर्नवदशप्राप्त्यष्टधीस्थो गुरो-
र्ज्ञाद्धीत्र्यायनवारिगस्त्रिनवषट्पुत्रायसान्त्यः कुजात् ॥ ६ ॥

शुक्राष्टकवर्गाङ्क ।

शुक्र जन्मकालिक लग्नस्थान से गोचरकालिक पहिले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, ग्यारहवें, आठवें, नवें और चन्द्रमा के स्थान से पहिले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, ग्यारहवें, आठवें, नवें, बारहवें और अपने स्थान से पहिले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, ग्यारहवें, आठवें, नवें, दशवें तथा शनैश्चर के स्थान से चौथे, तीसरे, पाँचवें, नवें, दशवें, आठवें, ग्यारहवें और सूर्य के स्थान से आठवें, ग्यारहवें, बारहवें तथा बृहस्पति के स्थान से नवें, दशवें, ग्यारहवें, आठवें, पाँचवें और ऐसे ही बुध के स्थान से पाँचवें, तीसरे, ग्यारहवें, नवें, छठे और मंगल के स्थान से तीसरे, नवें, छठे, पाँचवें, ग्यारहवें और बारहवें इन स्थानों में रहते शुभ और अन्यत्र स्थित अशुभ होता है ॥ ६ ॥

शुक्रशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

शु०	श०	ल०	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०
१	३	१	८	१	३	३	५
२	४	२	११	२	५	५	८
३	५	३	१२	३	६	६	९
४	८	४	०	४	९	९	१०
५	९	५	०	५	११	११	११
८	१०	८	०	८	१२	०	०
९	११	९	०	९	०	०	०
१०	०	११	०	११	०	०	०
११	०	०	०	१२	०	०	०

शुक्रानिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

शु०	श०	ल०	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०
६	१	६	१	६	१	१	१
७	२	७	२	७	२	२	२
१२	६	१०	३	१०	४	४	३
०	७	१२	४	०	७	७	४
०	१२	०	५	०	८	८	६
०	०	०	६	०	१०	१०	७
०	०	०	७	०	०	१२	१२
०	०	०	९	०	०	०	०
०	०	०	१०	०	०	०	०

मन्दः स्वात्त्रिसुतायशत्रुषु शुभः साज्ञान्त्यगो भूमिजात्
केन्द्रायाष्टधनेष्विनादुपचयेष्वाद्ये सुखे चोदयात् ।
धर्मायारिदशान्त्यमृत्युषु बुधाच्चन्द्रात्त्रिषड्लाभगः
षष्ठायान्त्यगतः सितात्सुरगुरोः प्राप्त्यन्त्यधीशत्रुषु ॥ ७ ॥

शनैश्चराष्टकवर्गाङ्क ।

शनैश्चर जन्मकालिक अपने स्थान से गोचरकालिक तीसरे, पाँचवें, ग्यारहवें, छठे और मंगल के स्थान से तीसरे, पाँचवें, ग्यारहवें, छठे, दशवें, बारहवें और सूर्य के स्थान से पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, ग्यारहवें, आठवें, दूसरे तथा लग्नस्थान से तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें, पहिले, चौथे एवं बुध के स्थान से नवें, ग्यारहवें, छठे, दशवें, बारहवें, आठवें और चन्द्रमा के स्थान से तीसरे, छठे, ग्यारहवें और शुक्र के स्थान से छठे, बारहवें, ग्यारहवें तथा बृहस्पति के स्थान से ग्यारहवें, बारहवें, पाँचवें, छठे इन स्थानों में रहते शुभ और अन्यत्र स्थित अशुभ होता है ॥ ७ ॥

शनिशुभाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

श०	ल०	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०
३	१	१	३	३	६	५	६
५	३	२	६	५	८	६	११
६	४	४	११	६	९	११	१२
११	६	७	०	१०	१०	१२	०
०	१०	८	०	११	११	०	०
०	११	१०	०	१२	१२	०	०
०	०	११	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

शन्यनिष्टाष्टकवर्गाङ्कचक्र ।

श०	ल०	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०
१	२	३	१	१	१	१	१
२	५	५	२	२	२	२	२
४	७	६	४	४	३	३	३
७	८	९	५	७	४	४	४
८	९	१२	७	८	५	७	५
९	१२	०	८	९	७	८	७
१०	०	०	९	०	०	९	८
१२	०	०	१०	०	०	१०	९
०	०	०	१२	०	०	०	१०

इति निगदितमिष्टं नेष्टमन्यद्विशेषा-

दधिकफलविपाकं जन्मभात्तत्र दद्युः ।

उपचयगृहमित्रस्वोच्चगैः पुष्टमिष्टं

त्वपचयगृहनीचारातिगैर्नेष्टसम्पत् ॥ ८ ॥

इति वराहमिहिरकृते बृहज्जातकेऽष्टकवर्गाध्यायो नवमः ॥ ९ ॥

अष्टकवर्गाङ्कफल ।

इस प्रकार जन्मकालिक सलग्न ग्रहस्थानों से गोचरकालिक प्रत्येक ग्रहों के कहे हुए स्थान शुभ और अशुभ हैं। उन्हीं शुभ या अशुभ स्थानों के अन्तर करने से जो विशेष अर्थात् शेष रहे उसी के अनुसार शुभ या अशुभ फल को सब ग्रह देते हैं। अन्तर करने की यह रीति है कि शुभ स्थानों में बिन्दुओं का चिह्न और अशुभ स्थानों में रेखाओं का चिह्न दे फिर उन बिन्दुओं और रेखाओं को पृथक् पृथक् जोड़कर उनका अन्तर करे और आठों स्थानों में बिन्दु ही हों तो पूर्ण शुभ फल और रेखा ही हों तो पूर्ण अशुभ फल और न्यूनाधिक बिन्दु और रेखाओं के होने से न्यूनाधिक शुभ या अशुभ फल होता है।

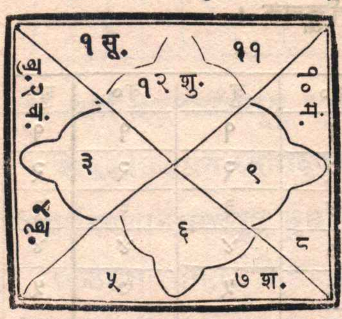

उदाहरण ।

यथा—जन्मकालिक इस कुण्डली में स्थित सलग्न प्रत्येक ग्रहों के स्थानों से गोचरकालिक मेषादि प्रत्येक स्थानों में रहते हुए मंगल का शुभाशुभ फल नीचे लिखे हुए चक्र में स्पष्ट है ॥

चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०	सू०	चं०	बि.यो.	रे.यो
मे०	०	।	०	।	०	।	।	।	३	५
वृ०	।	।	०	।	०	०	।	।	३	५
मि०	।	।	०	।	०	।	०	।	३	५
क०	०	०	।	।	०	।	।	०	४	४
सिं०	०	।	।	०	०	०	०	।	५	३
कं०	।	०	।	।	।	।	०	।	२	६
तु०	०	०	।	०	०	।	।	०	५	३
वृ०	०	।	।	।	।	।	।	।	१	७
ध०	।	।	०	।	।	०	।	।	२	६
म०	०	।	।	०	०	०	०	।	५	३
कुं०	०	०	।	०	।	।	०	।	४	४
मी०	।	०	।	।	।	०	।	०	३	५

और जो गोचरकालिक ग्रह जन्मकाल में लग्न अथवा चन्द्रमा से उपचय अर्थात् तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें इन स्थानों में कहीं अथवा मित्र के स्थान में अथवा स्वस्थान में अथवा स्वोच्चस्थान में स्थित हो तब जो शुभ फल देता है वह पूर्ण ही देता है और जो अपचय अर्थात् उपचय को छोड़ कहीं अन्यत्र स्थित हो अथवा अपने नीच स्थान में व शत्रु के स्थान में स्थित हो तब जो शुभ फल देता है वह पूर्ण नहीं देता है और यह तो अर्थ से सिद्ध है कि शुभ स्थान में स्थित ग्रह अल्प अशुभ फल तथा अशुभ स्थान में स्थित अल्प शुभ फल को देता है ॥ ८ ॥

दो० श्रीवराहकृतजातके, अष्टवर्गज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत नवम अध्याय ॥ ९ ॥

—::—

अथ कर्माजीवाध्यायो दशमः ।

अर्थाप्तिः पितृपितृपत्निशत्रुमित्र-
भ्रातृस्त्रीभृतकजनाद्दिवाकराद्यैः ।
होरेन्द्वोर्दशमगतैर्विकल्पनीया
भेन्द्वर्कास्पदपतिगांशनाथवृत्त्या ॥ १ ॥

धनप्राप्तियोग ।

लग्न* और चन्द्रमा के स्थान से दशवें स्थान में सूर्य स्थित हो तो पिता के द्वारा, चन्द्रमा स्थित हो तो माता के द्वारा, मंगल स्थित हो तो शत्रु के द्वारा, बुध स्थित हो तो मित्र के द्वारा, बृहस्पति स्थित हो तो भ्रातृद्वारा, शुक्र स्थित हो तो स्त्री के द्वारा

---

* भगवान् गार्गिः—"उदयाच्छशिनो वापि ये ग्रहा दशमस्थिताः ।
ते सर्वेऽर्थप्रदा ज्ञेयाः स्वदशासु यथोदिताः ॥
लग्नार्करात्रिनाथेभ्यो दशमाधिपतिर्ग्रहः ।
यस्मिन्नवांशे तत्कालं वर्तते तस्य यः पतिः ॥
तद्वृत्त्या प्रवदेद्वित्तं जातस्य बहवो यदा ।
भवन्ति वित्तदास्तेऽपि स्वदशासु विनिश्चितम् ॥"

और शनैश्चर स्थित हो तो सेवक के द्वारा धन की प्राप्ति कहना चाहिए। कदाचित् लग्न और चन्द्रमा के स्थान से दशवें स्थान में कोई भी ग्रह स्थित न हो तो लग्न, चन्द्रमा और सूर्य इन तीनों में से प्रत्येक के स्थान से दशवें स्थान का स्वामी जहाँ कहीं जिस नवांश में स्थित हो उस नवांश का स्वामी अपनी वृत्ति द्वारा, अपनी दशा में धन का देनेवाला होता है। उसकी वृत्ति आगे कहेंगे ।। १ ।।

अर्कांशे तृणकनकोर्णभेषजाद्यै-
श्चन्द्रांशे कृषिजलजाङ्गनाश्रयाच्च ।
धात्वग्निप्रहरणसाहसैः कुजांशे
सौम्यांशे लिपिगणितादिकाव्यशिल्पैः ।। २ ।।

उक्त नवांशपति-वृत्ति ।

लग्न, चन्द्रमा और सूर्य इन तीनों में से प्रत्येक के स्थान से दशवें स्थान का स्वामी जिस नवांश में स्थित हो उस नवांश का स्वामी सूर्य हो तो तृण, सुवर्ण, ऊन और औषध इत्यादि के द्वारा; जो चन्द्रमा हो तो खेती, जल से पैदा हुई वस्तु तथा स्त्री इनके आश्रय अर्थात् खेती करने से, जल से पैदा हुई वस्तुओं के बेचने-मोल लेने से और स्त्रियों के अधीन रहने से; जो मंगल हो तो मिट्टी इत्यादि धातुओं, अग्निक्रिया, मारना इत्यादि तथा विना विचारे कार्य करना इत्यादि से और जो बुध हो तो लिखने से, हिसाब से, काव्य से और शिल्प (चित्रकारी आदि) के कर्म से धन की प्राप्ति होती है ।। २ ।।

जीवांशे द्विजविबुधाकरादिधर्मैः
काव्यांशे मणिरजतादिगोमहिष्यैः ।
सौरांशे श्रमवधभारनीचशिल्पैः
कर्मेशाध्युषितनवांशकर्मसिद्धिः ।। ३ ।।

और जो बृहस्पति हो तो ब्राह्मण, देवता, खानि, धर्म तथा कर्म इत्यादि से; जो शुक्र हो तो मणि, चाँदी, गौ और भैंस इत्यादिकों से और जो शनैश्चर हो तो बड़े परिश्रम, मारने, भार ढोने, दासों के कर्म करने तथा शिल्प (थवई) के कर्म करने से धन की प्राप्ति होती है।

कर्मेश से गोचरकालिक सिद्धि।

जन्मकालिक* लग्न से जन्मकालिक दशवें स्थान का स्वामी गोचरकालिक जिस नवांश में स्थित हो उस नवांश के स्वामी की पूर्वोक्त वृत्ति करने से शीघ्र ही सिद्धि होती है। परन्तु उतने ही काल तक कि जब तक यह उस नवांश में रहेगा ॥ ३ ॥

मित्रारिस्वगृहगतैर्ग्रहैस्ततोर्था-
स्तुङ्गस्थे बलिनि च भास्करे स्ववीर्यात् ॥
आयस्थैरुदयधनाश्रितैश्च सौम्यैः
संचिन्त्यं बलसहितैरनेकधा स्वम् ॥ ४ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके कर्मा-
जीवा नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

धनप्राप्ति-ज्ञान।

लग्न और चन्द्रमा इन दोनों के स्थान से दशवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हो तो वह ग्रह और कोई दशवें में न हो तो लग्न, चन्द्रमा और सूर्य इनके स्थान से दशवें स्थान के स्वामी जो जन्मकाल में मित्र के स्थान में स्थित हों तो वे अपनी अन्तर्दशा में मित्र के द्वारा और जो शत्रु के स्थान में स्थित हों तो अपनी अन्तर्दशा में शत्रु के द्वारा तथा जो अपने ही स्थान में स्थित हों तो स्वस्थान द्वारा धन की प्राप्ति कराते हैं। पूर्वोक्त प्रकार

* भगवान् गार्गिः—"लग्नकर्माधिपो यस्मिन्नवांशे वर्तते ग्रहः।
चारक्रमेण तत्तुल्यां कर्मणां सिद्धिमादिशेत् ॥"

से जिसको धन प्राप्ति करानेवाला सूर्य बली होकर अपने उच्च स्थान में स्थित हो तो वह प्राणी अपने पराक्रम से धन उपार्जन करनेवाला होता है और जिसके जन्मकालिक ग्यारहवें, लग्न और दूसरे स्थान में शुभग्रह बली होकर स्थित हों तो वह प्राणी अनेक प्रकार से धन को पैदा करता है अर्थात् वह जो कर्म करेगा उसको उसी में धन मिलेगा ॥ ४ ॥

दो० श्रीवराहकृतजातके, धन प्राप्ति ज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगतदशम अध्याय ॥ १० ॥

अथ राजयोगाध्याय एकादशः ।

प्राहुर्यवनाः स्वतुङ्गगैः क्रूरैः क्रूरमतिर्महीपतिः ।
क्रूरैस्तु न जीवशर्मणः पक्षे क्षित्यधिपः प्रजायते ॥ १ ॥

यवन-मत से राजयोग ।

जिसके जन्मकाल में दो से अधिक क्रूरग्रह अपने उच्चस्थानों में स्थित हों तो वह राजा होता है परन्तु उसकी बुद्धि क्रूर होती है और यह तो अर्थ से ही सिद्ध है कि जो दो से अधिक शुभग्रह अपने उच्चस्थानों में स्थित हों तो सुबुद्धिवाला राजा होता है । क्रूर तथा शुभग्रह दोनों अपने उच्चस्थानों में स्थित हों तो पापबुद्धि तथा सुबुद्धिवाला राजा होता है । यह यवनाचार्य कहते हैं ॥

जीवशर्म-मत से राजयोग ।

अपने उच्चस्थानों में क्रूरग्रहों* के होने से राजा नहीं होता है किंतु राजा के तुल्य धनवान् होता है । यह जीवशर्मा का सिद्धांत ॥ १ ॥

वक्रार्कजार्कगुरुभिः सकलैस्त्रिभिश्च
स्वोच्चेषु षोडश नृपाः कथितैकलग्ने ।

---

* मणित्थः—"पापैरुच्चगतैर्जाता न भवन्ति नृपा नराः ।
किन्तु वित्तान्वितास्ते स्युः क्रोधिनः कलहप्रियाः ॥"

द्व्येकाश्रितेषु च तथैकतमे विलग्ने
स्वक्षेत्रगे शशिनि षोडश भूमिपाः स्युः ॥ २ ॥

बत्तीस राजयोग ।

मंगल, शनैश्चर, सूर्य और बृहस्पति ये चारों ग्रह अपने उच्च-स्थानों में स्थित होकर आपस में से प्रत्येक लग्न में स्थित हों तो चार राजयोग होंगे। तथा—मेष में सूर्य, कर्क में बृहस्पति, तुला में शनैश्चर और मकर में मंगल हो तथा शेष ग्रह कहीं भी हों, तब लग्न में मेष हो तो एक, कर्क हो तो दो, तुला हो तो तीन और मकर हो तो चार राजयोग हुए। इन्हीं चारों में से तीन ग्रह अपने उच्चस्थानों में स्थित होकर आपस में प्रत्येक लग्न में हों तो बारह राजयोग होंगे। यथा—मेष में सूर्य, कर्क में बृहस्पति और तुला में शनैश्चर तथा शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में मेष हो तो एक, कर्क हो तो दो और तुला हो तो तीन। इसी तरह से मेष में सूर्य, कर्क में बृहस्पति और मकर में मंगल हो तथा शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में मेष हो तो चार, कर्क हो तो पाँच और मकर हो तो छह। इसी तरह मेष में सूर्य, तुला में शनैश्चर तथा मकर में मंगल हो और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में मेष हो तो सात, तुला हो तो आठ और मकर हो तो नव। इसी तरह कर्क में बृहस्पति, तुला में शनैश्चर और मकर में मंगल हो तथा शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में कर्क हो तो दश, तुला हो तो ग्यारह और मकर हो तो बारह। यही पूर्वोक्त चार मिलकर सोलह राज-योग होते हैं। उन्हीं पूर्वोक्त चारों ग्रहों में से दो ग्रह अपने उच्च-स्थानों में स्थित होकर आपस में प्रत्येक लग्न में स्थित हो और चन्द्रमा अपने स्थान में स्थित हो तो बारह राजयोग होते हैं। यथा—मेष में सूर्य, कर्क में चन्द्रमा और बृहस्पति ये दोनों हों और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में मेष हो तो एक और कर्क हो तो दो। इसी तरह मेष में सूर्य, कर्क में चन्द्रमा तथा तुला में शनैश्चर और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में मेष हो तो तीन, तुला हो तो चार। इसी तरह मेष में सूर्य, कर्क में चन्द्रमा और मकर में

मंगल तथा शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में मेष हो तो पाँच, मकर हो तो छह । इसी तरह कर्क में बृहस्पति और चन्द्रमा, तुला में शनैश्चर और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में कर्क हो तो सात और तुला हो तो आठ । इसी तरह कर्क में बृहस्पति और चन्द्रमा, मकर में मंगल और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में कर्क हो तो नव और मकर हो तो दश । इसी तरह तुला में शनैश्चर, मकर में मंगल और कर्क में चन्द्रमा और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में तुला हो तो ग्यारह और मकर हो तो बारह तथा पूर्वोक्त सोलह मिलकर अट्ठाईस राजयोग होते हैं और उन्हीं पूर्वोक्त चारों ग्रहों में एक ग्रह अपने उच्चस्थान में रहकर लग्न में स्थित हो और चन्द्रमा अपने ही स्थान में हो तो चार योग होते हैं । यथा—कर्क में चन्द्रमा, मेष में सूर्य और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में मेष हो तो एक और इसी तरह कर्क में चन्द्रमा तथा बृहस्पति और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में कर्क हो तो दो और इसी तरह कर्क में चन्द्रमा, तुला में शनैश्चर और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में तुला हो तो तीन और इसी तरह कर्क में चन्द्रमा, मकर में मंगल और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में मकर हो तो चार तथा पूर्वोक्त अट्ठाईस मिलकर बत्तीस राजयोग होते हैं ।। २ ।।

वर्गोत्तमगते लग्ने चन्द्रे वा चन्द्रवर्जितैः ।
चतुराद्यैर्ग्रहैर्दृष्टे नृपा द्वाविंशतिः स्मृताः ।। ३ ।।

चवालिस राजयोग ।

पूर्वोक्त वर्गोत्तम में लग्न हो और इसको चन्द्रमा से अन्य चार-चार ग्रह, पाँच-पाँच ग्रह तथा छह-छह ग्रह देखते हों तो बाईस और चन्द्रमा वर्गोत्तम-नवांश में स्थित हो और उसको भी चार-चार ग्रह, पाँच-पाँच ग्रह तथा छह-छह ग्रह देखते हों तो भी बाईस तथा पूर्वोक्त बाईस मिलकर चवालिस राजयोग होते हैं । यथा लग्न को देखनेवाले सूर्य, मंगल, बुध और बृहस्पति हों तो एक; सूर्य, मंगल, बुध और शुक्र हों तो दो; सूर्य, मंगल, बुध तथा शनैश्चर हों तो तीन; सूर्य, मंगल, बृहस्पति और शुक्र हों

तो चार; सूर्य, मंगल, बृहस्पति और शनैश्चर हो तो पाँच; सूर्य, मंगल, शुक्र और शनैश्चर हों तो छह; सूर्य, बुध, बृहस्पति तथा शुक्र हों तो सात; सूर्य, बुध, बृहस्पति और शनैश्चर हों तो आठ; सूर्य, बुध, शुक्र तथा शनैश्चर हों तो नव; सूर्य बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर हों तो दश; मंगल, बुध, बृहस्पति और शुक्र हों तो ग्यारह; मंगल, बुध, बृहस्पति और शनैश्चर हों तो बारह; मंगल, बुध, शुक्र तथा शनैश्चर हों तो तेरह; मंगल, बृहस्पति, शुक्र तथा शनैश्चर हों तो चौदह; बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा शनैश्चर हों तो पन्द्रह; इसी तरह लग्न को देखनेवाले सूर्य, मंगल, बुध, बृहस्पति और शुक्र हों तो एक; सूर्य, मंगल, बुध, बृहस्पति तथा शनैश्चर हों तो दो; सूर्य, मंगल, बुध, शुक्र और शनैश्चर हों तो तीन; सूर्य मंगल, बृहस्पति, शुक्र तथा शनैश्चर हों तो चार; सूर्य, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर हों तो पाँच; मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर हों तो छह तथा पूर्वोक्त पन्द्रह मिलकर इक्कीस और इसी तरह लग्न को देखनेवाले सूर्य, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर हों तो बाईस राजयोग होते हैं। ऐसे ही वर्गोत्तम में स्थित चन्द्रमा को चार-चार, पाँच-पाँच तथा छह-छह ग्रहों के देखने से बाईस पूर्वोक्त मिलकर चवालिस राजयोग होते हैं। कदाचित् राशियों का नियम करके इन योगों की संख्या की जाय तो पाँचसौ अट्ठाईस राजयोग होंगे॥ ३॥

यमे कुम्भेऽर्केऽजे गवि शशिनि तैरेव तनुगै-
र्नृयुक्सिंहालिस्थैः शशिजगुरुवक्रैर्नृपतयः।
यमेन्दू तुङ्गेऽङ्गे सवितृशशिजौ षष्ठभवने
तुलाजेन्दुक्षेत्रैः ससितकुजजीवैश्च नरपौ॥ ४॥

पाँच राजयोग।

कुम्भ में शनैश्चर, मेष में सूर्य तथा वृष में चन्द्रमा हो और इनमें से प्रत्येक राशिलग्न में हो और बुध, बृहस्पति और मंगल ये क्रम से मिथुन, सिंह तथा वृश्चिक इन राशियों में स्थित हों तो तीन

राजयोग होते हैं । यथा—शनैश्चर कुम्भ में, सूर्य मेष में, चन्द्रमा वृष में, बुध मिथुन में, बृहस्पति सिंह में, मंगल वृश्चिक में और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में कुम्भ हो तो एक, मेष हो तो दो, वृष हो तो तीन राजयोग होते हैं । ऐसे ही शनैश्चर या चन्द्रमा अपने उच्चस्थानों में स्थित होकर इनमें से प्रत्येक लग्न में स्थित हो और सूर्य, बुध ये कन्या में स्थित हों और तुला, मेष तथा कर्क इन राशियों में क्रम से शुक्र, मंगल एवं बृहस्पति ये स्थित हों तो दो राजयोग होते हैं । यथा—शनैश्चर तुला में, चन्द्रमा वृष में, सूर्य तथा बुध ये दोनों कन्या में, शुक्र तुला में, मंगल मेष में, बृहस्पति कर्क में और शेष ग्रह कहीं हों, तब लग्न में तुला हो तो एक और वृष हो तो दो यही पूर्वोक्त तीन मिलकर पाँच राजयोग होते हैं ।। ४ ।।

कुजे तुङ्गेऽर्केन्द्वोर्धनुषि यमलग्ने च कुपतिः
पतिर्भूमेश्चान्यः क्षितिसुतविलग्ने सशशिनि ।
सचन्द्रे सौरेऽस्ते सुरपतिगुरौ चापधरगे
स्वतुङ्गस्थे भानावुदयमुपयाते क्षितिपतिः ।। ५ ।।

तीन राजयोग ।

मंगल अपने उच्चस्थान में और सूर्य तथा चन्द्रमा ये दोनों धन राशि में और शनैश्चर मकरस्थ होकर लग्न में स्थित हो तो उत्पन्न बालक राजा होता है १ । मकर राशि लग्न में स्थित हो, उसी में चन्द्रमा और मंगल ये दोनों स्थित हों और सूर्य धन में स्थित हो तो भी राजा होता है २ । मेष राशि लग्न में हो और उसी में दश अंश के मध्य में सूर्य स्थित हो तथा धनराशि में बृहस्पति, तुला राशि में चन्द्रमा और शनैश्चर ये दोनों स्थित हों तो राजा होता है ३ । ये तीन राजयोग हुए ।। ५ ।।

वृषे सेन्दौ लग्ने सवितृगुरुतीक्ष्णांशुतनयैः
सुहृज्जायाखस्थैर्भवति नियमान्मानवपतिः ।

मृगे*मन्दे लग्ने सहजरिपुधर्मव्ययगतैः
शशाङ्काद्यैः ख्यातः पृथुगुणयशाः पुङ्गलपतिः ॥ ६ ॥

दो राजयोग ।

वृषराशि लग्न में हो और उसी में चन्द्रमा स्थित हो तथा सिंह में सूर्य, वृश्चिक में बृहस्पति और कुम्भ में शनैश्चर स्थित हो तो इस योग में जन्म लेनेवाला अवश्य राजा होता है। यह एक योग हुआ। मकर राशि लग्न में स्थित हो और उसी में शनैश्चर स्थित हो तथा मीन राशि में चन्द्रमा, मिथुन में मंगल, कन्या में बुध और धन में बृहस्पति हो तथा सूर्य और शुक्र ये दोनों कहीं स्थित हों, तो इस योग में पैदा होनेवाला गुणी तथा यशस्वी महाराजा होता है। ये दो राजयोग हुए ॥ ६ ॥

हये सेन्दौ जीवे मृगमुखगते भूमितनये
स्वतुङ्गस्थौ लग्ने भृगुजशशिजावत्र नृपती ।
सुतस्थौ वक्रार्की गुरुशशिसिताश्चापि हिबुके
बुधे कन्यालग्ने भवति हि नृपोऽन्योऽपि गुणवान् ॥७॥

तीन राजयोग ।

सहित चन्द्रमा के बृहस्पति धन राशि में, मङ्गल मकर के पूर्वार्द्ध में और शुक्र तथा बुध अपने उच्चस्थानों में स्थित हों और शेष ग्रह कहीं हों तब जो लग्न में शुक्र स्थित हो तो एक और बुध स्थित हो तो दो राजयोग हुए अर्थात् ऐसे योगों में उत्पन्न होनेवाले राजा होते हैं। मंगल तथा शनैश्चर ये दोनों मकर राशि में और बृहस्पति, चन्द्रमा तथा शुक्र ये तीनों धन राशि में स्थित हों और लग्न में कन्याराशि हो और उसी में बुध स्थित हो तो ऐसे योग

---

* माण्डव्यः—"मृगे लग्ने सौरस्तिमियुगगतः शीतकिरणः
कुजो युग्मे नार्या शशभृत-सुतश्चापधरगः ।
गुरुर्दैत्येज्याकविभिमतगतौ चारवशतः
प्रसूतौ यस्यासौ भवति नरपः शक्रसदृशः ॥"

में गुणवान् राजा होता है। एक यह और पूर्वोक्त दो मिलकर तीन राजयोग हुए ॥ ७ ॥

झजे सेन्दौ लग्ने घटमृगमृगेन्द्रेषु सहितै-
र्यमारार्कैर्योऽभूत्स खलु मनुजः शास्ति वसुधाम् ।
अजे सारे मूर्तौ शशिगृहगते चामरगुरौ
सुरेज्ये वा लग्ने धरणिपतिरन्योऽपि गुणवान् ॥ ८ ॥

राजयोगत्रय ।

मीन राशि लग्न में हो, उसी में चन्द्रमा स्थित हो और कुम्भ में शनैश्चर मकर में मंगल तथा सिंह में सूर्य हो तो ऐसे योग में उत्पन्न होनेवाला पृथ्वी का शासन करनेवाला होता है १। मंगल-संयुक्त मेष राशि लग्न में स्थित हो और बृहस्पति कर्क राशि में स्थित हो तो ऐसे योग में भी राजा होता है २। अथवा बृहस्पति संयुक्त कर्क राशि लग्न में और मंगल मेष राशि में स्थित हो तो भी राजा होता है। ३। ये तीन राजयोग हुए ॥ ८ ॥

कर्किणि लग्ने तत्स्थे जीवे चन्द्रसितज्ञैरायप्राप्तैः ।
मेषगतेऽर्के जातं विन्द्याद्विक्रमयुक्तं पृथ्वीनाथम् ॥ ९ ॥

राजयोग ।

कर्क राशि लग्न में हो तथा उसी में बृहस्पति स्थित हो और चन्द्रमा, शुक्र तथा बुध ये तीनों ग्यारहवें स्थान में स्थित हों और मेष में सूर्य हो तो ऐसे योग में उत्पन्न प्राणी को बड़ा पराक्रमी राजा जानना चाहिए ॥ ९ ॥

मृगमुखेऽर्कतनये तनुसंस्थे
क्रियकुलीरहरयोऽधिपयुक्ताः ।
मिथुनतौलिसहितौ बुधशुक्रौ
यदि तदा पृथुयशाः पृथिवीशः ॥ १० ॥

राजयोग।

मकर के पूर्वार्ध में स्थित शनैश्चर लग्न में हो और मेष में मंगल, कर्क में चन्द्रमा, सिंह में सूर्य स्थित हो और मिथुन में बुध तथा तुला में शुक्र स्थित हो तो ऐसे योग में उत्पन्न हुआ बड़ा यशस्वी राजा होता है ॥ १० ॥

स्वोच्चसंस्थे बुधे लग्ने भृगौ मेषूरणस्थिते।
सजीवेऽस्ते निशानाथे राजा मन्दारयोः सुते ॥ ११ ॥

राजयोग।

अपने उच्चस्थान में स्थित बुध लग्न में हो और दशवें (मिथुन) में शुक्र और सहित बृहस्पति के चन्द्रमा सप्तम (मीन) में स्थित हो तथा पाँचवें (मकर) में शनैश्चर तथा मंगल ये दोनों स्थित हों तो ऐसे योग में उत्पन्न हुआ राजा होता है ॥ ११ ॥

अपि खलकुलजाता मानवा राज्यभाजः
किमुत नृपकुलोत्थाः प्रोक्तभूपालयोगैः।
नृपतिकुलसमुत्थाः पार्थिवा वक्ष्यमाणै-
र्भवति नृपतितुल्यस्तेष्वभूपालपुत्रः ॥ १२ ॥

राजयोग-विभागज्ञान।

इन पूर्वोक्त राजयोगों में उत्पन्न होनेवाले नीचजाति भी राजा होते हैं और राजवंश में जन्म लेनेवाले तो राजा होते ही हैं। जो राजयोग आगे कहेंगे उनमें जन्म लेनेवाले राजवंशी ही राजा होते हैं। कदाचित् अन्य जातिवाला उन योगों में जन्म ले तो वह राजा के बराबर होता है ॥ १२ ॥

स्वोच्चस्वत्रिकोणगैर्बलस्थैस्त्र्याद्यैर्भूपतिवंशजा नरेन्द्राः।
पञ्चादिभिरन्यवंशजाता हीनैर्वित्तयुता न भूमिपालाः ॥ १३ ॥

राजयोग।

जिनके जन्मकाल में तीन-चार ग्रह अपने उच्चस्थान और मूल

त्रिकोण स्थान में बली होकर स्थित हों तो वे यदि राजवंश में उत्पन्न हुए हों तो राजा होते हैं और दो-एक ग्रहों के उच्चस्थ और मूल त्रिकोणस्थ होने से राजा नहीं होते, किन्तु राजा के तुल्य धनिक होते हैं। जिनके जन्मकाल में पाँच, छह या सात ग्रह अपने उच्च-स्थान और मूल-त्रिकोण में बली होकर स्थित हों तो वे नीच-कुल में भी जन्म लेकर राजा होते हैं और पाँच से कम चार या तीन ग्रह उच्चस्थ या मूल-त्रिकोणस्थ हों तो राजा नहीं होते, किन्तु धनिक होते हैं। यहाँ ग्रहों की उक्त संख्या मूल-त्रिकोणस्थों से भी पूर्ण हो तो भी कुछ फलहानि नहीं होती है ॥ १३ ॥

लेखास्थेऽर्केऽजेन्दौ लग्ने भौमे स्वोच्चे कुम्भे मन्दे ।
चापं प्राप्ते जीवे राज्ञः पुत्रं विन्द्यात्पृथ्वीनाथम् ॥ १४ ॥

राजयोग ।

मेष लग्न में सूर्य और चन्द्रमा स्थित हो और मंगल अपने उच्चस्थान में, कुम्भ राशि में शनैश्चर और बृहस्पति धन राशि में स्थित हो, तो ऐसे योग में उत्पन्न हुआ राजा का पुत्र राजा होता है। कोई (लेखास्थे) इस पद के स्थान में (लेयस्थे) ऐसा कहते हैं। उसका यह अर्थ है कि सिंह में सूर्य स्थित हो और शेष पूर्वोक्त तुल्य हों, तो इसे भी राजयोग जानना चाहिए ॥१४॥

स्वर्क्षे शुक्रे पातालस्थे धर्मस्थानं प्राप्ते चन्द्रे ।
दुश्चिक्याङ्गप्राप्तिप्राप्तैः शेषैर्जातः स्वामी भूमेः ॥ १५ ॥

राजयोग ।

शुक्र अपनी राशि में स्थित होकर चौथे स्थान में स्थित हो और चन्द्रमा नवें स्थान में स्थित हो तथा शेष ग्रह तीसरे, लग्न और ग्यारहवें स्थान में स्थित हों, तो ऐसे योग में उत्पन्न हुआ राजा का पुत्र राजा होता है और अन्य धनवान् होता है ॥ १५॥

सौम्ये वीर्ययुते तनुयुक्ते वीर्य्याढचे च शुभे सुखयाते ।
धर्मार्थोपचयेष्वथ शेषैर्धर्मात्मा नृपजः पृथिवीशः ॥ १६ ॥

राजयोग ।

जिसके जन्मकाल में वली होकर बुध लग्न में और शुभग्रह अर्थात् बृहस्पति या शुक्र इन दोनों में से कोई नवें स्थान में तथा शेष ग्रह नवें, दूसरे, तीसरे, छठे, दशवें, और ग्यारहवें इन स्थानों में स्थित हों, तो यदि वह राजपुत्र हो तो धर्मात्मा राजा होता है और यदि अन्य हो तो धर्मात्मा तथा धनवान् होता है। और कोई (शुभयाते) इस पद के स्थान में (सुखयाते) ऐसा कहते हैं वहाँ सुखपद से चौथा स्थान लेना चाहिए। शेष पूर्वोक्त ही है ॥१६॥

वृषोदये मूर्तिधनारिलाभगैः
शशाङ्कजीवार्कसुतापरैर्नृपः ।
सुखे गुरौ खे शशितीक्ष्णदीधिती
यमोदये लाभगतैर्नृपोऽपरैः ॥ १७ ॥

राजयोगद्वय ।

जिसके जन्मकाल में वृष लग्न हो और उसी में चन्द्रमा स्थित हो तथा बृहस्पति मिथुन में, शनैश्चर तुला में और शेष ग्रह मीन में स्थित हों, तो यदि वह राजा का पुत्र हो तो राजा होता है और अन्य हो तो धनवान् होता है १। बृहस्पति चौथे स्थान में, चन्द्रमा और सूर्य दशवें स्थान में, शनैश्चर लग्न में और शेष ग्रह ग्यारहवें स्थान में स्थित हों, तो भी राजा का पुत्र हो तो राजा होता है और अन्य हो तो धनवान् होता है २। ये दो राजयोग हुए ॥१७॥

मेषूरणायतनुगाः शशिमन्दजीवा
ज्ञारौ धने सितरवी हिबुके नरेन्द्रः ।
वक्रासितौ शशिसुरेज्यसितार्कसौम्या
होरासुखास्तशुभखाप्तिगताः प्रजेशम् ॥ १८ ॥

राजयोगद्वय ।

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा दशवें स्थान में, शनैश्चर ग्यारहवें

स्थान में, बृहस्पति लग्न में, बुध और मंगल ये दोनों दूसरे स्थान में तथा शुक्र और सूर्य ये दोनों चौथे स्थान में स्थित हों तो यदि वह राजा का पुत्र हो तो राजा होता है और अन्य हो तो धनवान् होता है १ । और मंगल तथा शनैश्चर ये दोनों लग्न में, चन्द्रमा चौथे स्थान में, बृहस्पति सातवें स्थान में, शुक्र नवें स्थान में, सूर्य दशवें स्थान में और बुध ग्यारहवें स्थान में स्थित हो तो यदि राजा का पुत्र हो तो राजा होता है और अन्य कुल में पैदा हुआ धनवान् होता है २ ।। १८ ।।

कर्मलग्नयुतपाकदशायां राज्यलब्धिरथवा प्रबलस्य ।

शत्रुनीचगृहजातदशायां छिद्रसंश्रयदशा* परिकल्प्या ।।१९।।

राज्यप्राप्ति-कालज्ञान ।

राजयोगकारक ग्रहों में से जो ग्रह जन्मकालिक लग्न में या दशवें स्थान में स्थित हो उसकी दशा या अन्तर्दशा में राज्य की प्राप्ति होती है और जो उक्त दोनों स्थानों में राजयोगकारक ग्रह स्थित हों तो उनमें जो बलवान् हो उसकी दशा या अन्तर्दशा में और जो उक्त स्थानों में बहुत राजयोगकारक ग्रह स्थित हों तो भी उनमें जो ग्रह सबसे बलवान् हो उसकी दशा या अन्तर्दशा में तथा जो उक्त दोनों स्थानों में कोई ग्रह न स्थित हो, तो राजयोगकारक ग्रहों में सबसे बली हो उसी की दशा या अन्तर्दशा में राज्य की प्राप्ति होती है । यद्यपि उस राज्य देनेवाले ग्रह की बहुत-सी अन्तर्दशाएँ होंगी परन्तु उनमें भी जिस दशा या अन्तर्दशाकाल में राज्य देनेवाला ग्रहगोचर बलसंयुक्त हो उसी दशा या अन्तर्दशा में राज्य की प्राप्ति होती है और जो अपने शत्रु के स्थान या नीच स्थान में स्थित होकर बलवान् हो तो उसकी दी हुई दशा या

---

* यात्रायाम्—"अरिकोपहतदशायां जन्मोदयनाथशत्रुपाके च ।
स्वदशेशकारकदशाः संश्रयणीयो नरेन्द्रः ।।"

तथा च भगवान् गार्गिः—"लग्नगः कर्मगो वा स्यादथ वा प्रबलोऽपि यः ।
सः स्यात्स्वान्तर्दशाकाले राज्यदः प्रबलो यदा ।।
नीचारिगृहसंस्थस्य दशायां प्रबलस्य च ।
च्युतिर्बलविहीनस्य तन्मोक्षः परसंश्रयात् ।।"

अन्तर्दशा में उक्त प्राप्त भी राज्य छूट जाता है और जो यही शत्रु के स्थान अथवा नीचस्थान में स्थित ग्रह निर्बल हो तो उसकी दी हुई दशा या अन्तर्दशा में उक्त प्राप्त राज्य छूटकर अन्य राजादि की सहायता से फिर राज्य मिल जाता है ॥ १९ ॥

गुरुसितबुधलग्ने सप्तमस्थेऽर्कपुत्रे
वियति दिवसनाथे भोगिनां जन्म विन्द्यात् ।
शुभबलयुतकेन्द्रैः क्रूरभस्थैश्च पापै-
र्व्रजति शबरदस्युस्वामितामर्थभाक् च ॥ २० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके राजयोगाऽध्याय एकादशः ॥ ११ ॥

भोगयोग ।

जिसके जन्मकाल में बृहस्पति, शुक्र और बुध ये तीनों ग्रह लग्न में, शनैश्चर सातवें स्थान में और सूर्य दशवें स्थान में स्थित हो तो वह सदा भोगी होता है। और कोई (गुरुसितबुधलग्ने) इस पद का अर्थ करते हैं कि गुरु, शुक्र और बुध इन ग्रहों की राशि अर्थात् धन-मीन, वृष-तुला, मिथुन-कन्या इनमें से कोई लग्न में स्थित हो, क्योंकि जब दशवें स्थान में सूर्य रहेंगे तो बुध और शुक्र इन दोनों की लग्न में स्थित होने की सम्भावना भी नहीं हो सकती है। परन्तु गार्गि* आचार्य पूर्वार्थ ही को स्वीकार करते हैं।

शबर-दस्यु-स्वामियोग ।

जिसके जन्मकाल में शुभग्रहों की राशियों की स्थिति केन्द्र में

---

* अत्र भगवान् गार्गिः—"जीवज्ञभार्गवैर्लग्ने सप्तमस्थेऽर्कनन्दने ।
दशमस्थे रवौ जातो भोगवान् पुरुषो भवेत् ॥"

हो और पापग्रह क्रूरग्रहों की राशियों में स्थित हों, तो वह भिल्ल* या चोरों का राजा होता है और धनवान् तथा भोगी होता है ॥२०॥

दो० श्रीवराहकृतजातके, राजयोगज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत गेरहाँध्याय ॥ ११ ॥

अथ नाभसयोगाऽध्यायो द्वादशः ।

नवदिग्वसवस्त्रिकाग्निवेदै-
र्गुणिता द्वित्रिचतुर्विकल्पजाः स्युः ।
यवनैस्त्रिगुणा हि षट्शती सा
कथिता विस्तरतोऽत्र तत्समासः ॥ १ ॥

नाभसयोग-संख्याज्ञान ।

प्रथम नाभसयोगों के आकृति, संख्या, आश्रय और दल ये चार भेद हैं। इनमें भी आकृतियोग के बीस, संख्यायोग के सात, आश्रययोग के तीन और दलयोग के दो भेद हैं। उक्त चारों भेदों में से आकृतियोग अकेला होने के कारण बीस ही प्रकार का रहेगा और अन्य दो-दो, तीन-तीन, चार-चार अर्थात् आकृति तथा संख्या और आकृति, संख्या तथा आश्रय और आकृति, संख्या, आश्रय तथा दल ये आपस में बदलने के कारण नव, दश, आठ को क्रम से तीन, तीन तथा चार से गुणने पर जितने अंक हों उतने भेद होते हैं अर्थात् आकृति और संख्या के आपस में बदलने से सत्ताईस और आकृति, संख्या तथा आश्रय इनके आपस में बदलने से तीस और आकृति, संख्या, आश्रय और दल इनके आपस में बदलने से बत्तीस भेद होते हैं। यहाँ श्रीवराहमिहिरजी ने इन्हें संक्षेप से कहा है और यवनों ने इन्हीं के विस्तारपूर्वक अठारह सौ भेद कहे हैं।

---

* तथा भगवान् गार्गिः—"पापर्क्षेत्वगतैः पापै केन्द्रस्थैः सौम्यराशिभिः ।
सबलैर्यस्य जन्म स्यात्स्यादसौ दस्युनायकः ॥"

यथा—आकृतियोग के तेईस भेद और संख्यादि तीन योगों के आपस में बदलने से एकसौसत्ताईस भेद, पूर्वोक्त तेईस भेद मिलकर डेढ़सौ हुए और यही सब बारह राशियों के बदलने से अठारहसौ होते हैं। इनमें भी पूर्वोक्त एकसौसत्ताईस होने का यह कारण है कि योगकारक सातों ग्रहों में एक-एक के बदलने से सात भेद, दो-दो के बदलने से इक्कीस भेद, तीन-तीन के बदलने से पैंतिस भेद, चार-चार के बदलने से भी पैंतिस भेद, पाँच-पाँच के बदलने से इक्कीस भेद, छह-छह के बदलने से सात भेद और सातों का एक भेद ये सब मिलकर एकसौसत्ताईस भेद होते हैं ॥ १ ॥

रज्जुर्मुशलं नलश्चराद्यैः
सत्यश्चाश्रयजाञ्जगाद योगान् ।
केन्द्रैः सदसद्युतैर्दलाख्यौ
स्रक्सर्पौ कथितौ पराशरेण ॥ २ ॥

आश्रययोगत्रय ।

चर राशियों में सब ग्रहों के होने से रज्जु, स्थिर में होने से मुशल तथा द्विस्वभाव में होने से नलयोग होता है अर्थात् एक*, दो, तीन या चारों चर राशियों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों और स्थिर तथा द्विस्वभाव राशियाँ शून्य हों तो रज्जुयोग और एक, दो, तीन या चारों स्थिरराशियों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तथा चर और द्विस्वभाव राशियाँ शून्य हों तो मुशलयोग और एक, दो, तीन या चारों द्विस्वभाव राशियों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों और चर तथा स्थिर ये राशियाँ शून्य हों तो नलयोग होता है। ये तीनों आश्रययोग सत्याचार्य ने कहे हैं॥

---

*भगवान् गार्गिः—"एको द्वौ वा त्रयः सर्वे चरा युक्ता यदा ग्रहैः ।
चरयोगस्तदा रज्जुः शीर्ष्याणां जन्मदो भवेत ॥
स्थिराश्चेन्मुशलं नाम मानिनां जन्मकृन्नृणाम् ।
द्विस्वभावो नलाख्यस्तु धनिनां परिकीर्तितः ॥"

दो दलयोग ।

चारों केन्द्रों में शुभग्रह स्थित हों तो मालानामक दलयोग और उन्हीं चारों केन्द्रों में सब पापग्रह स्थित हों तो सर्पनामक दलयोग होता है। ये दोनों योग पराशरजी ने कहे हैं। यथार्थ तो यह है कि तीन केन्द्रों में कहीं शुक्र, बुध और गुरु ये स्थित हों और वहाँ कोई पापग्रह न स्थित हो तो मालायोग* और तीनों केन्द्रों में कहीं सूर्य, मंगल और शनैश्चर ये स्थित हों और कोई शुभग्रह वहाँ स्थित न हों तो सर्पयोग होता है ॥ २ ॥

योगा व्रजन्त्याश्रयजाः समत्वं
यवाब्जवज्राण्डजगोलकाद्यैः ।
केन्द्रोपगैः प्रोक्तफलौ दलाख्या-
वित्याहुरन्ये न पृथक्फलौ तौ ॥ ३ ॥

अन्यमत-आश्रययोगानुक्तिकारण-ज्ञान ।

पूर्वोक्त रज्जु, मुशल और नल ये आश्रययोग; यव, अब्ज, वज्र, अण्डज, गोलक, गदा और शकट इन आकृतियोगों के तथा गोलक, युग, शूल और केदार इन संख्यायोगों के समान ही होते हैं; इससे अन्याचार्यों ने इन आश्रययोगों को पृथक् नहीं कहा है। केन्द्रस्थित† शुभाशुभ ग्रहों के शुभाशुभ फल कहने ही से पूर्वोक्त माला और सर्प इन दोनों दलयोगों का भी फल उक्त हो जाता है, इससे इनके फल को भी पृथक् नहीं कहा है। यदि कोई कहे कि वराहमिहिराचार्य ने इन्हें क्यों पृथक् कहा? तो उसका उत्तर यह है कि नाभसयोगों में इनकी गणना करने से ये सब दशाओं में फल

---

* बादरायणः—'केन्द्रेष्वपापेषु सितज्ञजीवैः केन्द्रत्रिसंस्थैः कथयन्ति मालाम् ।
सर्पस्त्वसौम्यैश्च यमारसूर्यैर्योगाविमौ द्वौ कथितौ दलाख्यौ ॥"

† उक्तं च—"केन्द्रत्रिकोणेषु शुभाः प्रशस्तास्तेऽवेव पापा न शुभप्रदाः स्युः॥"

देनेवाले जाने जायँगे। अन्यथा केन्द्रस्थित ग्रहों की तरह इन योगों का भी फल अपनी ही दशामात्र में जाना जायगा ॥ ३ ॥

आसन्नकेन्द्रभवनद्वयगैर्गदाख्यै-
स्तन्वस्तगेषु शकटं विहगः खबन्ध्वोः।
शृङ्गाटकं नवमपञ्चमलग्नसंस्थै-
र्लग्नान्यगैर्हलमिति प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥ ४ ॥

आकृतियोग।

समीपस्थ दो केन्द्र स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो गदा नामक आकृतियोग होता है। यह गदायोग चार प्रकार से होता है। यथा—लग्न और चौथे स्थान में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से एक, चौथे और सातवें स्थान में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से दो, सातवें और दशवें स्थान में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से तीन और दशवें तथा लग्न में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से चार हुए। लग्न और सातवें स्थान में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो शकट नामक आकृतियोग होता है। दशवें और चौथे स्थान में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो विहग नामक आकृतियोग होता है। नवें और पाँचवें तथा लग्न में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो शृङ्गाटकनामक आकृतियोग होता है। लग्न को छोड़ सम्पूर्ण ग्रह परस्पर नवें और पाँचवें स्थान में स्थित हों तो हलनामक आकृतियोग होता है। यह हल-योग तीन प्रकार का है। यथा—दूसरे, छठे तथा दशवें स्थान में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से एक; तीसरे, सातवें तथा ग्यारहवें स्थान में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से दो और चौथे, आठवें, बारहवें स्थान में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से तीन प्रकार हुए। ऐसा पण्डित लोग कहते हैं ॥ ४ ॥

शकटाण्डजवच्छभाशुभैर्वज्रं तद्विपरीतगैर्यवः।
कमलं तु विमिश्रसंस्थितैर्वापी तद्यदि केन्द्रबाह्यतः ॥ ५ ॥

शकट अर्थात् गाड़ी और पक्षी की तरह शुभाशुभ ग्रह क्रम

से स्थित हों अर्थात् लग्न और सातवें स्थान में शुभग्रह स्थित हों और चौथे तथा दशवें स्थान में पापग्रह स्थित हों और अन्यत्र कोई ग्रह न स्थित हो तो वज्रनामक आकृतियोग होता है। इन्हीं ग्रहों के उक्त रीति से विपरीत स्थित होने से अर्थात् लग्न और सातवें स्थान में पापग्रह स्थित हों और चौथे तथा दशवें स्थान में शुभग्रह स्थित हों तो यवनामक आकृतियोग होता है। यही सब शुभाशुभ ग्रह मिलकर चारों केन्द्रों में स्थित हों तो कमलनामक आकृतियोग होता है। यही सब ग्रह चारों केन्द्रों को छोड़कर स्थित हों अर्थात् केन्द्र में कोई भी ग्रह स्थित न हो और पणफर तथा आपोक्लिम में सब स्थित हों तो वापीनामक आकृतियोग होता है ॥ ५ ॥

पूर्वशास्त्रानुसारेण मया वज्रादयः कृताः ।
चतुर्थभवने सूर्याज्ज्ञसितौ भवतः कथम् ॥ ६ ॥

स्वान्यमत-विभाग ।

यद्यपि वज्रादियोगों का सम्भव नहीं है क्योंकि सूर्य से चौथे स्थान में बुध और शुक्र इन दोनों ग्रहों का स्थित होना असम्भव है तथापि प्राचीनशास्त्र के अनुसार मैंने भी वज्रादियोग कहे हैं। इससे उचित है कि मेरे इस कहने में कोई दोष न दें ॥ ६ ॥

कण्टकादिप्रवृत्तैस्तु चतुर्गृहगतैर्ग्रहै ।
यूपेषु शक्तिदण्डाख्या होराद्यैः कण्टकैः क्रमात ॥ ७ ॥

यूप-इषु-शक्ति-दण्ड योग ।

लग्नादि चारों केन्द्रों में से, लग्नादि प्रत्येक से आरम्भ करके चार-चार स्थानों में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से यथाक्रम यूप, इषु, शक्ति और दण्ड ये चार योग होते हैं। यथा—लग्न, दूसरे, तीसरे और चौथे इन्हीं स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित होंतो यूपनाम योग; चौथे, पाँचवें, छठे और सातवें इन्हीं स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो इषुनाम योग; सातवें, आठवें, नवें और दशवें इन्हीं

स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो शक्तिनाम योग और दशवें, ग्यारहवें, बारहवें तथा लग्न इन्हीं स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो दण्डनाम योग होता है ॥ ७ ॥

नौकूटच्छत्रचापानि तद्वत्सप्तर्क्षसंस्थितैः ।
अर्द्धचन्द्रस्तु नावाद्यैः प्रोक्तस्त्वन्यर्क्षसंस्थितैः ॥ ८ ॥

नौका-कूट-छत्र-चापयोग ।

पूर्ववत् लग्नादि चारों केन्द्रों में से लग्नादि प्रत्येक से आरम्भ करके सात-सात स्थानों में सम्पूर्ण ग्रहों के स्थित होने से नौका, कूट, छत्र और चाप ये चार योग होते हैं । यथा—लग्न, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, छठे और सातवें इन्हीं में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो नौकानाम योग तथा चौथे, पाँचवें, छठे, सातवें, आठवें, नवें और दशवें इन्हीं स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो कूट नाम योग और सातवें, आठवें, नवें, दशवें, ग्यारहवें, बारहवें और लग्न इन्हीं स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो छत्रनाम योग तथा दशवें, ग्यारहवें, बारहवें, लग्न तथा दूसरे, तीसरे और चौथे इन्हीं स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो चापनाम योग होता है ॥

अर्धचन्द्रयोग ।

केन्द्रादि स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों से नावादि योगों की तरह अर्थात् पणफर और आपोक्लिम स्थानों से सात-सात स्थानों में निरन्तर ग्रहों के स्थित होने से अर्धचन्द्रनाम योग होता है । वह अर्धचन्द्र आठ प्रकार का है । यथा—दूसरे स्थान से लेकर आठवें स्थान पर्यन्त निरन्तर सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों; तो एक तीसरे स्थान से लेकर नवें स्थान पर्यन्त सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो दो; पाँचवें स्थान से लेकर ग्यारहवें स्थान पर्यन्त तीन; छठे से लेकर बारहवें पर्यन्त सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो चार; इन चार प्रकार का अर्धचन्द्र नाम योग हुआ और ऐसे ही चार और भी जानो ॥८॥

एकान्तरगतैरर्थातसमुद्रः षड्गृहाश्रितैः ।
विलग्नादिस्थितैश्चक्रमित्याकृतिजसंग्रहः ॥ ९ ॥

समुद्रयोग ।

दूसरे स्थान से लेकर बीच-बीच में, एक-एक गृह को छोड़कर, छह स्थानों में अर्थात् दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दशवें और बारहवें इन स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो समुद्रनाम योग होता है ॥

चक्रयोग ।

लग्न से लेकर बीच-बीच में, एक-एक गृह को छोड़कर छह स्थानों में अर्थात् लग्न, तीसरे, पाँचवें, सातवें, नवें और ग्यारहवें इन स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो चक्रनाम योग होता है। यह सब आकृतियोगों का संग्रह हुआ ॥ ९ ॥

संख्यायोगाः स्युः सप्त सप्तर्क्षसंस्थै-
रेकापायाद्वल्लकी दामिनी च ।
पाशः केदारः शूलयोगो युगं च
गोलश्चान्यान्पूर्वमुक्तान्विहाय ॥ १० ॥

संख्यायोग ।

जिस किसी सात स्थानों में तथा एक-एक कम स्थानों में सात ग्रहों के स्थित होने से वल्लकी इत्यादि सात योग होते हैं। यथा—सात ही स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो वल्लकीनामक, छह स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो दामिनीनामक, पाँच स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो पाशनामक, चार ही स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो केदारनामक, तीन ही स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो शूलनामक, दो ही स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो युग नामक और एक ही स्थान में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों तो गोलनामक आकृतियोग होता है। परन्तु पूर्वोक्त अन्य योगों को छोड़कर अर्थात् पूर्वोक्त योगों में से जिस किसी योग का सादृश्य इन संख्यायोगों से हो तो उसकी जगह पर पूर्वोक्त योग ही मानना चाहिए और उस संख्यायोग को न मानना चाहिए ॥ १० ॥

ईर्ष्युर्विदेशनिरतोऽध्वरुचिश्च रज्ज्वां
मानी धनी च मुशले बहुकृत्यशक्तः ।

व्यङ्गः स्थिराढचनिपुणो नलजः स्रगुत्थो

भोगान्वितो भुजगजो बहुदुःखभाक्स्यात् ।। ११ ।।

आश्रय-दल योगफल ।

रज्जु योग में उत्पन्न हुआ प्राणी परवृद्धि देखकर सन्ताप करने वाला, परदेश में रहनेवाला तथा नित्य चलनेवाला होता है। मुशलयोग में उत्पन्न हुआ प्राणी अभिमानी, धनवान् और बहुत कार्य करनेवाला होता है। नलयोग में उत्पन्न हुआ प्राणी अंगहीन, स्थिर बुद्धिवाला, धनवान् और चतुर होता है। मालायोग में उत्पन्न हुआ प्राणी भोगी और सर्पयोग में उत्पन्न हुआ प्राणी बहुत दुःख भोगनेवाला होता है ।। ११ ।।

आश्रययोगास्तु विफला भवन्त्यन्यैर्विमिश्रिताः ।

मिश्रा यैस्ते फलं दद्युरमिश्राः स्वफलप्रदाः ।। १२ ।।

यदि आश्रययोग किसी अन्य यवादियोगों से मिले हुए अर्थात् सदृश हों तो उन आश्रययोगों का कुछ भी फल नहीं होता है, किन्तु उन्हीं यवादियोगों का फल होता है कि जिनसे वे आश्रय-योग मिले होते हैं और जो किसी अन्य यवादियोगों का सादृश्य न हो तो आश्रययोग अपना उक्त फल देनेवाले होते हैं ।। १२ ।।

यज्वार्थभाक्सततमर्थरुचिर्गदायां

तद्वृत्तिभुक्छकटजः सरुजः कुदारः ।

दूतोऽटनः कलहकृद्विहगे प्रदिष्टः

शृङ्गाटके चिरसुखी कृषिकृद्धलाख्ये ।। १३ ।।

आकृतियोगफल ।

गदायोग में उत्पन्न प्राणी यज्ञ करनेवाला तथा सदा धन कमाने वाला; शकटयोग में उत्पन्न प्राणी शकट अर्थात् गाड़ी के द्वारा जीविका करनेवाला, रोगी और निन्दित स्त्रीवाला; विहगयोग में उत्पन्न प्राणी, दूत, नित्य चलनेवाला और झगड़ा करनेवाला तथा

शृंगाटकयोग में उत्पन्न प्राणी अन्तिम अवस्था में सुखी तथा हलयोग में उत्पन्न प्राणी खेती करनेवाला होता है ।। १३ ।।

वज्रेऽन्त्यपूर्वसुखिनः सुभगोऽतिशूरो
वीर्य्यान्वितोऽप्यथ यवे सुखिनो वयोऽन्ते ।
विख्यातकीर्त्यमितसौख्यगुणश्च पद्मे
वाप्यां तनुस्थिरसुखो निधिकृन्न दाता ।। १४ ।।

वज्रयोग में उत्पन्न प्राणी बाल्यावस्था तथा वृद्धावस्था में सुखी, सबका प्रिय और शूरवीर होता है। यवयोग में उत्पन्न प्राणी पराक्रमी और युवावस्था में सुखी होता है। पद्मयोग में उत्पन्न प्राणी प्रसिद्ध कीर्तिवाला, बहुत सुखी और बहुत गुणी होता है। वापीयोग में उत्पन्न प्राणी बहुत काल रहनेवाला, थोड़े सुखवाला, भूमि में धन गाड़नेवाला और कृपण होता है ।। १४ ।।

त्यागात्मवान्क्रतुवरैर्यज ते च यूपे
हिंस्रोऽथ गुप्त्यधिकृतः शरकृच्छराख्ये ।
नीचोऽलसः सुखधनैर्वियुतश्च शक्तौ
दण्डे प्रियैर्विरहितः पुरुषोऽन्त्यवृत्तिः ।। १५ ।।

यूप योग में उत्पन्न प्राणी त्यागी, धैर्यवान् तथा उत्तम यज्ञ करनेवाला; शरयोग में उत्पन्न प्राणी प्राणियों को मारनेवाला, किसी के बाँधने में अधिकारी और तीर बनानेवाला; शक्तियोग में उत्पन्न प्राणी नीच कर्म करनेवाला, आलसी, सुखहीन, धनहीन और दण्डयोग में उत्पन्न प्राणी प्रिय अर्थात् मित्र, पुत्र तथा कलत्रादि से रहित एवं दासवृत्तिवाला होता है ।। १५ ।।

कीर्त्या युतश्चलसुखः कृपणश्च नौजः
कूटेऽनृतप्लवनबन्धनपश्च जातः ।

छत्रोद्भवः स्वजनसौख्यकरोऽन्त्यसौख्यः
शूरश्च कार्मुकभवः प्रथमाऽन्तसयौख्यः ॥ १६ ॥

नौकायोग में उत्पन्न प्राणी यशस्वी, कभी सुखी—कभी दुःखी और कृपण; कूटयोग में उत्पन्न प्राणी मिथ्या बोलनेवाला और बन्धन की रक्षा करनेवाला; क्षत्रयोग में उत्पन्न प्राणी अपने स्त्री पुत्रादिकों के साथ सुख करनेवाला और वृद्धावस्था में सुखी तथा चापयोग में उत्पन्न प्राणी शूर और बाल्यावस्था तथा वृद्धावस्था में सुखी होता है ॥ १६ ॥

अर्द्धेन्दुजः सुभगकान्तवपुः प्रधान-
स्तोयालये नरपतिप्रतिमश्च भोगी ।
चक्रे नरेन्द्रमुकुटद्युतिरञ्जिताङ्घ्रि-
र्वीणोद्भवश्च निपुणः प्रियगीतनृत्यः ॥ १७ ॥

अर्धचन्द्रयोग में उत्पन्न प्राणी सबको प्रिय, सुन्दर देहवाला तथा सबका पूज्य; समुद्रयोग में उत्पन्न प्राणी राजा के सदृश तथा भोगी और चक्रयोग में उत्पन्न प्राणी राजाओं से पैर पुजानेवाला होता है ॥

संख्यायोगफल ।

वीणायोग में उत्पन्न प्राणी कार्य करने में चतुर और गाने-नाचने में स्नेह करनेवाला होता है ॥ १७ ॥

दाताऽन्यकार्यनिरतः पशुपश्च दाम्नि
पाशे धनार्जनविशीलसभृत्यबन्धुः ।
केदारजः कृषिकरः सुबहूपयोज्यः
शूरः क्षतो धनरुचिर्विधनश्च शूले ॥ १८ ॥

दामिनीयोग में उत्पन्न प्राणी दाता, पराया उपकार करनेवाला और पशुओं का पालनेवाला; पाशयोग में उत्पन्न प्राणी अधर्म मार्ग से धन कमानेवाला तथा इसी तरह के दासों तथा

बन्धुओंवाला; केदारयोग में उत्पन्न प्राणी खेती करनेवाला और अच्छी तरह बहुतों का उपकार करनेवाला तथा शूलयोग में उत्पन्न प्राणी शूर, घावयुक्त, धन की रुचिवाला और दरिद्र होता है ।। १८ ।।

धनविरहितः पाखण्डी वा युगे त्वथ गोलके
विधनमलिनोऽज्ञानोपेतः कुशिल्प्यलसोऽटनः ।
इति निगदिता योगाः सार्द्धं फलैरिहनाभसा
नियतफलदाश्चिन्त्या ह्येते समस्तदशास्वपि ।। १९ ।।

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके नाभसयोगाऽध्यायो द्वादशः ।। १२ ।।

युगयोग में उत्पन्न प्राणी धनहीन तथा वेद मार्ग से बहिष्कृत और गोलयोग में उत्पन्न प्राणी धनहीन, मलिन, मूर्ख, नीच कर्म करनेवाला, आलसी तथा भ्रमण करनेवाला होता है ।।

इस तरह फलसहित कहे हुए नाभसयोग दशा-अन्तर्दशा में अथवा सदा नियत फल के देनेवाले होते हैं—ऐसा विचारना चाहिए ।। १९ ।।

इति रामरत्नकृतभाषायां नाभसयोगो नाम द्वादशोऽध्यायः ।। १२ ।।

अथ चन्द्रयोगाध्यायस्त्रयोदशः ।

अधमसमवरिष्ठान्यर्ककेन्द्रादिसंस्थे
शशिनि विनयवित्तज्ञानधीनैपुणानि ।
अहनि निशि च चन्द्रे स्वेऽधिमित्रांशके वा
सुरगुरुसितदृष्टे वित्तवान् स्यात्सुखी च ।। १ ।।

जात-स्वभावज्ञान ।

जिसके जन्मकाल में सूर्य के स्थान से चन्द्रमा केन्द्र में स्थित

हो तो उसके शुभ शील, धन, शास्त्रज्ञान, बुद्धि और चातुर्य ये अधम* अर्थात् नहीं होते हैं। पणफर में स्थित हो तो सम अर्थात् थोड़े और आपोक्लिम में स्थित हो तो वरिष्ठ अर्थात् उत्तम होते हैं ॥

धनसुखयोग।

जिसका जन्म† दिन में हुआ हो और उस काल में चन्द्रमा जिस किसी राशि में अपने या अधिमित्र के नवांश में स्थित हो और उसे बृहस्पति देखता हो तथा रात्रि में जन्म हुआ हो और उसे शुक्र देखता हो तो वह प्राणी धनवान् तथा सुखी होता है ॥ १ ॥

सौम्यैः स्मरारिनिधनेष्वधियोग इन्दो-
स्तस्मिंश्चमूपसचिवक्षितिपालजन्म ।
सम्पन्नसौख्यविभवा हतशत्रवश्च
दीर्घायुषो विगतरोगभयाश्च जाताः ॥ २ ॥

अधियोग-योग।

चन्द्रमा‡ के स्थान से छठे, सातवें और आठवें इन तीनों में या दो में अथवा एक ही स्थान में शुभग्रह स्थित हो तो अधियोगनाम योग होता है। वह सात प्रकार का है। यथा—छठे स्थान में सब शुभग्रह स्थित हों तो एक; सातवें में दो; आठवें में तीन; छठे, सातवें में चार; छठे, आठवें में पाँच; सातवें, आठवें में छह; और छठे,

---

* यवनेश्वरः—"मूर्खान्दरिद्रांश्चपलान्विशीलांश्चन्द्रः प्रसूतेऽर्कचतुष्टयस्थः।
कुर्याद् द्वितीये धनिनां प्रसूतिमापोक्लिमस्थे कुलजाग्रजानाम् ॥"

† भगवान् गार्गिः—"स्वांशेऽधिमित्रस्यांशे वा संस्थितो दिवसे शशी।
गुरुणा दृश्यते तत्र जातो वित्तसुखान्वितः ॥
निश्येवं भृगुणा दृष्टः शशी जन्मनि शस्यते।
विपर्ययस्थे शीतांशौ जायन्तेऽल्पधना नराः ॥"

‡ श्रुतकीर्तिः—"निधनं द्यूनं षष्ठं चन्द्रस्थानाद्यदा शुभैर्युक्तम्।
अधियोगः स प्रोक्तो व्यासक्तौ सप्तधा पूर्वैः।"

सातवें, आठवें में सात अधियोग हुए । इस अधियोग में जिसका जन्म हो वह सेनापति, मन्त्री या राजा होता है अर्थात् वे शुभग्रह जो निर्बल हों तो सेनापति, जो मध्यबल हो तो मंत्री और जो सबल हों तो राजा होता है । और वे सेनापति, मन्त्री और राजा सुखयुक्त ऐश्वर्ययुक्त, शत्रुहीन, दीर्घायु और रोगभय-विहीन होते हैं परन्तु शुभाशुभ* ग्रह इन स्थानों में हों तो शुभाशुभ फल होता है और पापी हों तो पापफल होता है, ऐसा अर्थ से सिद्ध होता है ।। २ ।।

हित्वार्कं सुनफानफादुरुधराः स्वान्त्योभयस्थैर्ग्रहैः
शीतांशोः कथितोऽन्यथा तु बहुभिः केमद्रुमोऽन्यैस्त्वसौ ।
केन्द्रे शीतकरेऽथवा ग्रहयुते केमद्रुमो नेष्यते
केचित्केन्द्रनवांशकेष्वपि वदन्त्युक्तिः प्रसिद्धा न ते ।। ३ ।।

सुनफा-अनफा-दुरुधरा-केमद्रुमयोग ।

सूर्य को छोड़ अन्य ग्रहों में से कोई ग्रह चन्द्रमा से दूसरे, बारहवें या दोनों स्थानों में स्थित हो तो क्रम से सुनफा, अनफा और दुरुधरा ये योग होते हैं अर्थात् दूसरे स्थान में सुनफा, बारहवें में अनफा और दोनों में दुरुधरा योग होता है । इससे अन्यथा अर्थात् चन्द्रमा से दूसरे या बारहवें स्थान में कोई ग्रह न स्थित हों तो केमद्रुम नाम योग होता है । ऐसा बहुत आचार्य कहते हैं । और कोई आचार्य कहते हैं कि चन्द्रमा के अन्य ग्रहों से युक्त होने से या लग्न से केन्द्र में स्थित होने से केमद्रुम नहीं होता है । यद्यपि कोई कहते हैं कि चन्द्रमा† से चौथे स्थान में सूर्य को छोड़ कोई ग्रह स्थित हो तो सुनफा और दशवें स्थान में अनफा और दोनों में दुरुधरा और चौथे, दशवें स्थान में कोई भी ग्रह न स्थित

---

* श्रुतकीर्तिः—"षट्सप्तमाष्टमस्थैश्चन्द्रात्सौम्यैः शुभोऽधियोगः स्यात् ।
पापः पापैरेवं मिश्रैर्मिश्रस्तथैवोक्तः ।।"

† श्रुतकीर्तिः—"चन्द्राच्चतुर्थैः सुनफा दशमस्थितैः कीर्तितोऽनफा विहगैः ।
उभयस्थितैर्दुरुधरा केमद्रुमसंज्ञितोऽन्यथा योगः ।।"

हो तो केमद्रुमयोग होता है। कोई आचार्य कहते हैं कि किसी राशि में जिस राशि के नवांश में चन्द्रमा स्थित हो उस नवांश राशि से दूसरी राशि में सूर्य को छोड़कर कोई ग्रह स्थित हो तो सुनफा और बारहवीं राशि में अनफा और दोनों में दुरुधरा तथा दूसरी और बारहवीं राशि में कोई ग्रह न स्थित हो तो केमद्रुम योग होता है। परन्तु यह केन्द्र नवांशविषयक उनका कहना प्रसिद्ध नहीं है इससे बहुत आचार्यों का ही कहना ठीक है ॥ ३ ॥

त्रिंशत्सरूपा सुनफानफाख्याः
षष्टित्रयं दौरुधराप्रभेदाः ।
इच्छाविकल्पैः क्रमशोऽभिनीय
नीतेर्निवृत्तिः पुनरन्यनीतिः ॥ ४ ॥

सुनफा-अनफा-दुरुधराभेदज्ञान ।

चन्द्रमा से दूसरे स्थान में मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर इनमें से एक-एक, दो-दो, तीन-तीन, चार-चार, पाँच-पाँच ग्रहों के रहते इकतीस प्रकार का सुनफा योग होता है और ऐसे ही बारहवें स्थान में इकतीस प्रकार का अनफा योग होता है। तथा दूसरे और बारहवें इन दोनों स्थानों में उक्त ग्रहों में से भिन्न-भिन्न एक-एक और एक-एक, दो-दो और एक-एक, तीन-तीन और एक-एक, चार-चार और दो-दो, एक-एक और तीन-तीन, एक-एक और चार-चार, एक-एक और दो-दो, दो-दो और दो-दो, तीन-तीन और तीन-तीन, दो-दो ग्रहों के रहते एकसौ अस्सी प्रकार का दुरुधरा योग होता है ॥

इन भेदों के स्पष्ट करने की यह रीति है कि (इच्छाविकल्पैः) अर्थात् इष्टसंख्यक वस्तु को जितने बार आपस में बदलना तो उतने बार (क्रमशोऽभिनीय नीतेर्निवृत्तिः पुनरन्यनीतिः) अर्थात् उक्त वस्तुसमूह में एक को स्थिर मान अन्य को चर मानकर उस चर को बदले फिर जब सब चर बदल चुकें तब किसी अन्य को स्थिर

मान और किसी को चर मानकर वहाँ भी फिर चरों को उतने बार बदले ऐसे ही करने से सब रूप स्पष्ट होते हैं। यथा—

मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर ये पाँच प्रत्येक इष्ट हैं और प्रत्येक को एक बार बदलना है तो प्रत्येक का एक-एक रूप होगा और यदि इनमें दो इष्ट हों और उन्हें दश बार बदलना हो तो मङ्गल को स्थिर मान बुधादि को चर मान के उन्हें बदले तो मङ्गल, बुध १ मङ्गल, बृहस्पति २ मङ्गल, शुक्र ३ मङ्गल, शनैश्चर ४ रूप हुए। अब बुध को स्थिर मान अन्य को चर मान उन्हें बदले तो बुध, बृहस्पति १ बुध, शुक्र २ बुध, शनैश्चर ३ रूप हुए। अब बृहस्पति को स्थिर मान अन्य को चर मान उन्हें बदले तो बृहस्पति, शुक्र १ बृहस्पति, शनैश्चर २ रूप हुए। अब शुक्र को स्थिर मान अन्य को चर मान उन्हें बदले तो शुक्र, शनैश्चर १ रूप हुआ। इसी तरह तीन, चार इत्यादि इष्ट होने पर रूप स्पष्ट होते हैं। पूर्वोक्त सुनफा, अनफा योगों के सब भेदों की संख्या जानने की यह रीति हैं कि एक, दो, तीन, चार और पाँच इनको पहिले क्रम से लिखे। फिर उनके ऊपर उक्त संख्या को व्युत्क्रम से लिखे। नीचे लिखे हुए अङ्कों को भाजक माने और ऊपर लिखे

५	४	३	२	१
१	२	३	४	५

हुए अङ्कों को भाज्य माने और पूर्व स्थान में जो लब्ध मिले उसे ऊपर में स्थित उत्तरांक का गुणक माने फिर क्रिया करे तो भेदों की संख्या ज्ञात होती है। यथा—

पाँच के नीचे एक है तो पाँच में एक का भाग दिया तो लब्ध मिले पाँच ये प्रत्येक ग्रह के बदलने से रूप हुए। अब इसी पाँच के अङ्क से उत्तराङ्क चार को गुणा तो बीस हुए। इनमें नीचे लिखे हुए दो का भाग दिया तो दश लब्ध हुए। ये दश दो ग्रहों के बदलने से रूप हुए और इसी अङ्क से फिर उत्तरांक तीन को गुण दिया तो तीस हुए। इनमें नीचे लिखे हुए तीन का भाग दिया तो दश

लब्ध हुए। ये दश तीन ग्रहों के बदलने से रूप हुए और इसी अङ्क से उत्तरांक दो को गुण दिया तो बीस हुए। इनमें नीचे लिखे हुए चार का भाग दिया तो लब्ध पाँच हुए। ये पाँच चार ग्रहों के बदलने से रूप हुए और इसी अङ्क से उत्तरांक एक को गुण दिया तो पाँच ही हुए, इनमें नीचे लिखे हुए पाँच का भाग दिया तो लब्ध एक हुआ। यही पाँचों ग्रहों का एक रूप हुआ। इन पूर्वोक्त योगों के सम्पूर्ण रूप। यथा:—

चन्द्रमा से दूसरे स्थान में मंगल हो तो १; बुध २; बृहस्पति ३; शुक्र ४; शनैश्चर ५ और मंगल, बुध ६; मंगल, बृहस्पति ७; मंगल, शुक्र ८; मंगल, शनैश्चर ९; बुध, बृहस्पति १०; बुध, शुक्र ११; बुध, शनैश्चर १२; बृहस्पति, शुक्र १३; बृहस्पति, शनैश्चर १४; शुक्र, शनैश्चर १५ और मंगल, बुध, बृहस्पति १६; मंगल, बुध, शुक्र १७; मंगल, बुध तथा शनैश्चर १८; मंगल, बृहस्पति, शुक्र १९; मंगल, बृहस्पति, शनैश्चर २०; मंगल, शुक्र, शनैश्चर २१; बुध, बृहस्पति, शुक्र २२; बुध, बृहस्पति, शनैश्चर २३; बुध, शुक्र, शनैश्चर २४; बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर २५; और मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, २६; मंगल, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर २७; मंगल, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर २८; मंगल, बुध, शुक्र, शनैश्चर २९; बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर ३० और मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर ३१ इतने प्रकार के सुनफा होते हैं और ऐसे ही चन्द्रमा से बारहवें स्थान में ग्रहों के स्थित होने से अनफा होता है। चन्द्रमा से दूसरे, बारहवें इन दोनों में क्रम से और व्युत्क्रम से मंगलादि ग्रहों के स्थित होने से दुरुधरा योग के एक सौ अस्सी १८० रूप होते हैं। यथा—

बुध और मंगल २ मंगल और बृहस्पति ३ बृहस्पति और मंगल ४ मंगल और शुक्र ५ शुक्र और मङ्गल ६ मंगल और शनैश्चर ७ शनैश्चर और मङ्गल ८ बुध और बृहस्पति ९ बृहस्पति और बुध १० बुध और शुक्र ११ शुक्र और बुध १२ बुध और शनैश्चर १३ शनैश्चर और बुध १४ बृहस्पति और शुक्र १५ शुक्र और बृहस्पति १६ बृहस्पति और शनैश्चर १७

शनैश्चर और बृहस्पति १८ शुक्र और शनैश्चर १९ शनैश्चर और शुक्र २० तथा मङ्गल और बुध, बृहस्पति २१ बुध, बृहस्पति और मङ्गल २२ मङ्गल और शुक्र, बुध २३ बुध, शुक्र और मंगल २४ मङ्गल और बुध, शनैश्चर २५ बुध, शनैश्चर और मंगल २६ मङ्गल और बृहस्पति, शुक्र २७ बृहस्पति, शुक्र और मंगल २८ मङ्गल और बृहस्पति, शनैश्चर २९ बृहस्पति, शनैश्चर और मङ्गल ३० मङ्गल और शुक्र, शनैश्चर ३१ शुक्र, शनैश्चर और मङ्गल ३२ बुध और मङ्गल, बृहस्पति ३३ मङ्गल, बृहस्पति और बुध ३४ बुध और मङ्गल, शुक्र ३५ मङ्गल शुक्र और बुध ३६ बुध और मङ्गल, शनैश्चर ३७ मङ्गल, शनैश्चर और बुध ३८ बुध और बृहस्पति, शुक्र ३९ बृहस्पति, शुक्र और बुध ४० बुध और बृहस्पति, शनैश्चर ४१ बृहस्पति, शनैश्चर और बुध ४२ बुध और शुक्र, शनैश्चर ४३ शुक्र, शनैश्चर और बुध ४४ बृहस्पति और मङ्गल, बुध ४५ मङ्गल, बुध और बृहस्पति ४६ बृहस्पति और मङ्गल, शुक्र ४७ मङ्गल, शुक्र और बृहस्पति ४८ बृहस्पति और मङ्गल, शनैश्चर ४९ मङ्गल, शनैश्चर और बृहस्पति ५० बृहस्पति और बुध, शुक्र ५१ बुध, शुक्र और बृहस्पति ५२ बृहस्पति और बुध, शनैश्चर ५३ बुध, शनैश्चर और बृहस्पति ५४ बृहस्पति और शुक्र, शनैश्चर ५५ शुक्र, शनैश्चर और बृहस्पति ५६ शुक्र और मङ्गल, बुध ५७ मङ्गल, बुध और शुक्र ५८ शुक्र और मङ्गल, बृहस्पति ५९ मङ्गल, बृहस्पति और शुक्र ६० शुक्र और मङ्गल, शनैश्चर ६१ मङ्गल, शनैश्चर और शुक्र ६२ शुक्र और बुध, बृहस्पति ६३ बुध, बृहस्पति और शुक्र ६४ शुक्र और बुध, शनैश्चर ६५ बुध, शनैश्चर और शुक्र ६६ शुक्र और बृहस्पति, शनैश्चर ६७ बृहस्पति, शनैश्चर और शुक्र ६८ शनैश्चर और मङ्गल, बुध ६९ मङ्गल, बुध और शनैश्चर ७० शनैश्चर और मङ्गल, बृहस्पति ७१ मङ्गल, बृहस्पति और शनैश्चर ७२ शनैश्चर और मंगल, शुक्र ७३ मंगल, शुक्र और शनैश्चर ७४ शनैश्चर और बुध, बृहस्पति ७५, बुध, बृहस्पति और शनैश्चर ७६ शनैश्चर और बुध, शुक्र, ७७ बुध, शुक्र

और शनैश्चर ७८ शनैश्चर और बृहस्पति, शुक्र ७९ बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर ८० तथा मङ्गल और बुध, बृहस्पति, शुक्र ८१ बुध, बृहस्पति, शुक्र और मंगल ८२ मंगल और बुध, बृहस्पति, शनैश्चर ८३ बुध और बृहस्पति, शनैश्चर और मङ्गल ८४ मङ्गल और बुध, शुक्र, शनैश्चर ८५ बुध, शुक्र शनैश्चर और मंगल ८६ मङ्गल और बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर ८७ बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर और मंगल ८८ बुध और मंगल, बृहस्पति, शुक्र ८९ मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र और बुध ९० बुध और मङ्गल, बृहस्पति, शनैश्चर ९१ मङ्गल, बृहस्पति, शनैश्चर और बुध ९२ बुध और मंगल, शुक्र, शनैश्चर ९३ मंगल, शुक्र, शनैश्चर और बुध ९४ बुध और बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर ९५ बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर और बुध ९६ बृहस्पति और मंगल, बुध, शुक्र ९७ मंगल, बुध, शुक्र और बृहस्पति ९८ बृहस्पति और मंगल, बुध, शनैश्चर ९९ मंगल, बुध, शनैश्चर और बृहस्पति १०० बृहस्पति और मंगल, शुक्र, शनैश्चर १०१ मंगल, शुक्र, शनैश्चर और बृहस्पति १०२ बृहस्पति और बुध, शुक्र, शनैश्चर १०३ बुध, शुक्र, शनैश्चर और बृहस्पति १०४ शुक्र और मंगल, बुध, बृहस्पति १०५ मंगल, बुध, बृहस्पति और शुक्र १०६ शुक्र और मंगल, बुध, शनैश्चर १०७ मंगल, बुध, शनैश्चर और शुक्र १०८ शुक्र और मंगल, बृहस्पति, शनैश्चर १०९ मंगल, बृहस्पति शनैश्चर और शुक्र ११० शुक्र और बुध, बृहस्पति, शनैश्चर १११ बुध, बृहस्पति, शनैश्चर और शुक्र ११२ शनैश्चर और मंगल, बुध, बृहस्पति ११३ मंगल, बुध, बृहस्पति और शनैश्चर ११४ शनैश्चर और मंगल, बुध, शुक्र ११५ मंगल, बुध, शुक्र और शनैश्चर ११६ शनैश्चर और मंगल, बृहस्पति, शुक्र ११७ मंगल, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर ११८ शनैश्चर, और बुध, बृहस्पति, शुक्र ११९ बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर १२० तथा मंगल और बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर १२१ बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर और मंगल १२२ बुध और मंगल, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर १२३ मंगल, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर और बुध १२४ बृहस्पति और मंगल, बुध, शुक्र, शनैश्चर १२५

मंगल, बुध, शुक्र, शनैश्चर और बृहस्पति १२६ शुक्र और मंगल, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर १२७ मंगल, बुध, बृहस्पति. शनैश्चर और शुक्र १२८ शनैश्चर और मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, १२९ मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर १३० तथा मङ्गल, बुध और बृहस्पति, शुक्र १३१ बृहस्पति, शुक्र और मङ्गल, बुध १३२ मङ्गल, बुध और बृहस्पति, शनैश्चर १३३ बृहस्पति, शनैश्चर और मङ्गल, बुध १३४ मङ्गल, बुध और शुक्र, शनैश्चर १३५ शुक्र, शनैश्चर और मङ्गल, बुध १३६ मङ्गल, बृहस्पति और शुक्र, बुध १३७ शुक्र और मंगल, बृहस्पति १३८ मंगल, बृहस्पति और बुध, शनैश्चर, १३९ बुध, शनैश्चर और मङ्गल, बृहस्पति १४० मङ्गल, बृहस्पति और शुक्र, शनैश्चर १४१ शुक्र, शनैश्चर और मङ्गल, बृहस्पति १४२ मङ्गल, शुक्र और बुध, बृहस्पति १४३ बुध, बृहस्पति और मङ्गल, शुक्र १४४ मङ्गल, शुक्र और बुध, शनैश्चर १४५ बुध, शनैश्चर और मंगल, शुक्र १४६ मङ्गल, शुक्र और बृहस्पति, शनैश्चर १४७ बृहस्पति, शनैश्चर और मङ्गल, शुक्र १४८ बुध, बृहस्पति और मंगल, शनैश्चर १४९ मंगल, शनैश्चर और बुध, बृहस्पति १५० मंगल, शनैश्चर और बुध, शुक्र १५१ बुध, शुक्र और मंगल, शनैश्चर १५२ मङ्गल, शनैश्चर और बृहस्पति, शुक्र, १५३ बृहस्पति, शुक्र और मङ्गल, शनैश्चर १५४ बुध, बृहस्पति और शुक्र, शनैश्चर १५५ शुक्र, शनैश्चर और बुध, बृहस्पति १५६ बुध, शुक्र और बृहस्पति, शनैश्चर १५७ बृहस्पति, शनैश्चर और बुध, शुक्र १५८ बृहस्पति, शुक्र और बुध, शनैश्चर १५९ बुध, शनैश्चर और बृहस्पति, शुक्र १६० तथा मंगल, बुध और बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर १६१ बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर और मंगल, बुध १६२ मङ्गल, बृहस्पति और बुध, शुक्र, शनैश्चर १६३ बुध, शुक्र, शनैश्चर और मंगल, बृहस्पति १६४ मङ्गल, शुक्र और बुध, बृहस्पति, शनैश्चर १६५ बुध, बृहस्पति, शनैश्चर और मंगल, शुक्र १६६ मंगल, शनैश्चर और बुध, बृहस्पति, शुक्र १६७ बुध, बृहस्पति, शुक्र और मंगल, शनैश्चर १६८ बुध, बृहस्पति और मंगल, शुक्र, शनैश्चर १६९

मंगल, शुक्र, शनैश्चर और बुध, बृहस्पति १७० बुध, शुक्र और मंगल, बृहस्पति, शनैश्चर १७१ मंगल, बृहस्पति, शनैश्चर और बुध, शुक्र १७२ बुध, शनैश्चर और मंगल, बृहस्पति, शुक्र १७३ मंगल, बृहस्पति, शुक्र और बुध, शनैश्चर १७४ बृहस्पति, शुक्र और मंगल, बुध, शनैश्चर १७५ मंगल, बुध, शनैश्चर और बृहस्पति शुक्र १७६ बृहस्पति, शनैश्चर और मंगल, बुध, शुक्र १७७ मंगल, बुध, शुक्र और बृहस्पति, शनैश्चर १७८ शुक्र, शनैश्चर और मंगल, बुध, बृहस्पति १७९ मंगल, बुध, बृहस्पति और शुक्र, शनैश्चर १८० ॥ ४ ॥

स्वयमधिकृतवित्तः पार्थिवस्तत्समो वा
भवति हि सुनफायां धीधनख्यातिमांश्च ।
प्रभुरगदशरीरः शीलवान् व्यक्तकीर्ति-
र्विषयसुखसुवेषो निर्वृतश्चानफायाम् ॥ ५ ॥

सुनफायोगफल ।

जिसके जन्मकाल में सुनफायोग हो वह प्राणी अपने ही कमाये धन से धनवान् और राजा या राजा के तुल्य और उत्तम बुद्धि, धन और कीर्तिवाला होता है ॥

अनफायोगफल ।

और अनफायोग हो तो वह प्राणी समर्थ, रोगरहित, शील-युक्त, विख्यातकीर्ति, सांसारिक सुखसंयुक्त, सुन्दर वस्त्राभूषण धारण करनेवाला तथा सन्तुष्ट मानस होता है ॥ ५ ॥

उत्पन्नभोगसुखभुग्धनवाहनाढ्य-
स्त्यागान्वितो दुरुधराप्रभवः सुभृत्यः ।
केमद्रुमे मलिनदुःखितनीचनिःस्वाः
प्रेष्याः खलाश्च नृपतेरपि वंशजाताः ॥ ६ ॥

दुरुधरायोगफल।

जिसके जन्मकाल में दुरुधरायोग हो वह प्राणी जिस किसी तरह से उत्पन्न वस्तु से सुखभोगी, धन और वाहन से संयुक्त, दाता और सुन्दर दासवाला होता है ॥

केमद्रुमयोगफल।

जिसके जन्मकाल में केमद्रुम योग हो वह देहादि से मलिन, दुःखित, नीच कर्म्म करनेवाला, निर्धन, दासकर्म करनेवाला और खल होता है। चाहे वह राजा के वंश में भी पैदा हुआ हो तो भी ऐसा ही होता है ॥ ६ ॥

प्रोत्साहशौर्यधनसाहसवान् महीजः
सौम्यः पटुः सुवचनो निपुणः कलासु।
जीवोऽर्थधर्म्मसुखवान् नृपपूजितश्च
कामी भृगुर्बहुधनो विषयोपभोक्ता ॥ ७ ॥

उक्तयोगकारकग्रहफल।

सुनफादि योगकारक मङ्गल हो तो उक्तयोगजात प्राणी उद्यमी, रणप्रिय, धनवान् तथा साहसी होता है और बुध हो तो चतुर मीठे वचनवाला तथा कारीगरी में बहुत निपुण होता है और बृहस्पति हो तो धर्मयुक्त, सुखभोगी और राजाओं का पूज्य होता है और शुक्र हो तो कामी, बहुत धनवान् और विषयभोगी होता है ॥ ७ ॥

परविभवपरिच्छदोपभोक्ता
रवितनयो बहुकार्य्यकृद् गणेशः।
अशुभकृदुडुपोऽह्नि दृश्यमूर्ति-
र्गलिततनुश्च शुभोन्यथान्यदूह्यम् ॥ ८ ॥

पूर्वोक्त योगकारक शनैश्चर हो तो उक्तयोगजात प्राणी पराये कमाये धन तथा वस्तुओं का भोग करनेवाला, बहुत से कार्य

करनेवाला और बहुतों का मालिक होता है और जो उक्त योगकारक ग्रह एक से अधिक हों तो केवल योग ही का फल होता है ग्रहों का फल नहीं होता है ।।

चन्द्रफल ।

दिन में जन्म हो और जन्मकाल में चन्द्रमा दृश्यचक्रार्द्ध अर्थात् सातवें स्थान से लग्न पर्य्यन्त में स्थित हो तो अशुभकारक और अदृश्यचक्रार्द्ध अर्थात् लग्न से सातवें स्थान पर्य्यन्त में स्थित हो तो शुभकारक होता है। जो रात्रि में जन्म हों उस समय चन्द्रमा अदृश्यचक्रार्द्ध में स्थित हो तो अशुभकारक और दृश्यचक्रार्द्ध में स्थित हो तो शुभकारक होता है ।। ८ ।।

लग्नादतीव वसुमान् वसुमाञ्छशांका-
त्सौम्यग्रहैरुपचयोपगतैः समस्तैः ।
द्वाभ्यां समोऽल्पवसुमांश्च तदूनिताया-
मन्येष्वसत्स्वपि फलेष्विदमुत्कटेन ।। ९ ।।

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके चन्द्रयोगाध्यायस्त्रयोदशः।।१३।।

लग्न-चन्द्रोपचयस्थ शुभग्रहफल ।

जिसके जन्मकाल में लग्न से उपचय अर्थात् तीसरे, छठें, दशवें और ग्यारहवें स्थान में सब शुभग्रह ही स्थित हों तो वह अतिशय धनवान् होता है और चन्द्रमा के स्थान से उपचय स्थान में सब शुभग्रह ही स्थित हों तो धनवान् होता है तथा जो दो ही शुभग्रह उक्त स्थान में स्थित हों तो मध्य धनवाला होता है; जो एक ही शुभग्रह उक्त स्थान में स्थित हो तो अल्प धनवान् और जो उक्त स्थान में कोई शुभग्रह न हो तो दरिद्र होता है। यदि कुण्डली में अन्य बहुत से कुयोग भी हों और यह योग पूरा हो तो इसी का फल होता है अन्य कुयोगों का फल नहीं होता है।।९।।

दो० । श्रीवराहकृतजातके, चन्द्रयोगज्ञानाय ।।
रामरत्न-कृत भाषा, विगत तेरहाँध्याय ।। १३ ।।

अथ द्विग्रहयोगाध्यायश्चतुर्दशः ।

तिग्मांशुर्जनयत्युषेशसहितो यन्त्राश्मकारं नरं
भौमेनाघरतं बुधेन निपुणं धीकीर्तिसौख्यान्वितम् ।
क्रूरं वाक्पतिनान्यकार्यनिरतं शुक्रेण रङ्गायुधै-
र्लब्धस्वं रविजेन धातुकुशलं भाण्डप्रकारेषु वा ॥ १ ॥

सूर्यान्यसंयोगफल ।

जिसके जन्मकाल में सूर्य और चन्द्रमा संयुक्त हों तो वह तोप, बन्दूक इत्यादि यन्त्र और पत्थर की चीजें बनाने वाला; सूर्य और मङ्गल संयुक्त हों तो पापी; सूर्य और बुध संयुक्त हो तो सर्व कार्य करने में चतुर, बुद्धिमान्, कीर्तिमान् और सौख्यसंयुक्त; सूर्य और बृहस्पति संयुक्त हों तो तीक्ष्णस्वभाववाला तथा अन्यों का कार्य करनेवाला; सूर्य और शुक्र संयुक्त हों तो नाटकादि क्रिया और हथियारों से मिले हुए धनवाला; सूर्य और शनैश्चर संयुक्त हों तो चाँदी, सोना इत्यादि धातुओं के परखने में बहुत चतुर तथा बर्तन इत्यादि बनाने वाला होता है ॥ १ ॥

कूटस्त्र्यासवकुम्भपण्यमशिवं मातुः सवक्रः शशी
सज्ञः प्रसृतवाक्यमर्थनिपुणं सौभाग्यकीर्त्यान्वितम् ।
विक्रांतं कुलमुख्यमस्थिरमतं वित्तेश्वरं साङ्गिरा
वस्त्राणां ससितः क्रयादिकुशलं सार्किःपुनर्भूसुतम् ॥ २ ॥

चन्द्रान्यसंयोगफल ।

जन्मकाल में चन्द्रमा और मङ्गल संयुक्त हों तो बाजार की चीजें, स्त्री, मद्य और घड़ा इत्यादि बेचनेवाला तथा माता को क्लेशदेनेवाला; चन्द्रमा और बुध संयुक्त हों तो प्रिय बोलनेवाला, अर्थ जानने में बहुत

सूक्ष्म दृष्टिवाला, भाग्यवान् तथा यशस्वी; चन्द्रमा और बृहस्पति संयुक्त हों तो शत्रु को जीतनेवाला, अपने कुल में प्रधान, चंचल मतिवाला और धनवान्; चन्द्रमा और शुक्र संयुक्त हों तो वस्त्रों के बेचने, बीनने, सीने, रँगने और मोल लेने में चतुर; चन्द्रमा और शनैश्चर संयुक्त हों तो पुनर्भू से उत्पन्न होता है। जो स्त्री अपने पति को छोड़कर अन्य समान जातिवाले पुरुष के पास रहती है उसे पुनर्भू कहते हैं ॥ २ ॥

मूलादिस्नेहकूटैर्व्यवहरति वणिग्बाहुयोद्धा ससौम्ये
पुर्यध्यक्षः सजीवे भवति नरपतिः प्राप्तवित्तो द्विजो वा।
गोपो मल्लोऽथ दक्षः परयुवतिरतो द्यूतकृत्सासुरेज्ये
दुःखार्त्तोऽसत्यसन्धःस सवितृतनये भूमिजे निन्दितश्च ॥ ३ ॥

मंगलान्यसंयोगफल।

जो जन्मकाल में मङ्गल-बुध संयुक्त हों तो जड़, पत्ती, फूल और फल इत्यादि तथा तैलादि बाजार की चीजों का व्यापार करनेवाला बनिया तथा बाहु से युद्ध करनेवाला होता है और मंगल-बृहस्पति संयुक्त हों तो गांव का मालिक, या राजा अथवा धनवान् ब्राह्मण होता है। मंगल-शुक्र संयुक्त हों तो गो-बैलों के पालनेवाला, पहलवान, चतुर, पराई स्त्रियों में रति करनेवाला और जुआरी होता है। मंगल-शनैश्चर संयुक्त हों तो दुःखी, मिथ्यावादी और निन्दित कर्म करने वाला होता है ॥ ३ ॥

सौम्ये रङ्गचरो बृहस्पतियुते गीतप्रियो नृत्यवान्
वाग्मी भूगणपः सितेन मृदुना मायापटुर्लंघकः।
सद्विद्यो धनदारवान् बहुगुणः शुक्रेण युक्ते गुरौ
ज्ञेयः श्मश्रुकरोऽसितेन घटकृज्जातोऽन्नकारोऽपि वा ॥ ४ ॥

बुधान्यसंयोगफल।

जन्मकाल में बुध-बृहस्पति संयुक्त हों तो अखाड़े में रहनेवाला,

गीतप्रिय तथा नृत्य जाननेवाला; बुध-शुक्र संयुक्त हों तो बृहस्पति सदृश वक्ता, पृथ्वी तथा बहुत जनों का मालिक; बुध-शनैश्चर संयुक्त हों तो मायावी और गुरुओं की आज्ञा को भङ्ग करनेवाला होता है ।

बृहस्पतिअन्यसंयोगफल ।

जन्मकाल में बृहस्पति-शुक्र संयुक्त हों तो उत्तम विद्यावाला, उत्तम धन-स्त्रीवाला और बहुत गुणवाला एवं बृहस्पति-शनैश्चर संयुक्त हों तो हज्जाम, कुँभार या रसोईबरदार होता है ।।४।।

असितसितसमागमेऽल्पचक्षु-
र्युवतिसमाश्रयसंप्रवृद्धवित्तः ।
भवति च लिपिपुस्तकचित्रवेत्ता
कथितफलैः परतो विकल्पनीयाः ।। ५ ।।

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके द्विग्रहयोगाध्यायश्चतुर्दशः ।।१४।।

शुक्र-शनैश्चरसंयोगफल ।

जिसके जन्मकाल में शुक्र-शनैश्चर संयुक्त हों तो अल्पदृष्टि-वाला स्त्रीपक्ष से बढ़े हुए धनवाला तथा अक्षर पुस्तक वा तस्वीर इन सबको लिखने वाला होता है ।

त्रिग्रहयोगफल ।

जो तीन ग्रहों का कहीं एकत्र संयोग हो तो उन ग्रहों में से दो-दो ग्रहों के बदलने से जितने द्विग्रह योग हों उनका फल उक्त रीति से कहना चाहिए । यथा—सूर्य, चन्द्रमा, मंगल इनका संयोग हो तो सूर्य-चन्द्रमा एक, सूर्य-मंगल दो, चन्द्रमा-मंगल तीन द्विग्रह योग हुए इनका फल पूर्व ही कह चुके हैं ।। ५ ।।

दो० । श्रीवराहकृत जातके, द्विग्रहफल कथनाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत चौदहाँध्याय ।। १४ ।।

—:०:—

अथ प्रव्रज्यायोगाध्यायः पञ्चदशः।

एकस्थैश्चतुरादिभिर्बलयुतैर्जाताः पृथग्वीर्यगैः
शाक्या जीविकभिक्षुवृद्धचरका निर्ग्रन्थवन्याशनाः।
माहेयज्ञगुरुक्षपाकरसितप्राभाकरीनैः क्रमात्
प्रव्रज्याबलिभिः समाः परजितैस्तत्स्वामिभिः प्रच्युतिः ॥ १॥

प्रव्रज्यायोग।

जिनके जन्मकाल में कहीं एकत्र चार, पाँच, छः या सात ग्रह स्थित हों तो वे संन्यासी होते हैं। परन्तु बली योगकारक ग्रहों के भेद से वे भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं। यथा—योगकारक ग्रहों में मङ्गल बली हो तो शाक्य अर्थात् लालवस्त्र धारण करनेवाले संन्यासी, बुध बली हो तो आजीविक अर्थात् मठी संन्यासी और बृहस्पति बली हो तो भिक्षु अर्थात् भीख माँगनेवाले संन्यासी, चन्द्रमा बली हो तो वृद्ध अर्थात् कापालिक संन्यासी, शुक्र बली हो तो चरक अर्थात् चक्र धारण करनेवाले संन्यासी और शनैश्चर बली हो तो निर्ग्रन्थ अर्थात् नग्न रहनेवाले संन्यासी और सूर्य बली हो तो वन्याशन अर्थात् वन में पैदा हुए फल, पत्र भोजन करनेवाले संन्यासी होते हैं। और जितने ग्रह बली हों उतने प्रकार के संन्यास होते हैं अर्थात् योगकारक ग्रहों में जो एक ग्रह बली हो तो उसका ही उक्त संन्यास और जो दो ग्रह बली हों तो उन दोनों के उक्त प्रकार के संन्यास और तीन हों तो तीन प्रकार के संन्यास होते हैं इत्यादि। और जो कोई ग्रह बली न हो तो संन्यास नहीं होता है। उक्त संन्यासकारक

ग्रह किसी अन्य ग्रह से युद्ध में पराजित अर्थात् हार गया हो तो ग्रहण करने पर भी वह संन्यास छूट जाता है ।। १ ।।*

रविलुप्तकरैरदीक्षिता बलिभिस्तद्गतभक्तयो नराः ।
अभियाचितमात्रदीक्षिता निहतैरन्यनिरीक्षितैरपि ।। २ ।।

जिनके जन्मकाल में प्रव्रज्यायोगकारक जितने बली ग्रह अस्त हों उतनी प्रव्रज्याओं को वे लोग ग्रहण नहीं करते हैं किन्तु उन प्रव्रज्याओं के या उन प्रव्रज्याओं के ग्रहण करनेवाले मनुष्यों के भक्त होते हैं और प्रव्रज्यादायक जितने ग्रह अन्य ग्रहों से युद्ध में जीते गये हों या अन्य ग्रहों से देखे जाते हों, उन ग्रहों की दी हुई प्रव्रज्याओं को ग्रहण करने की प्रार्थना तो वे लोग करते हैं किन्तु गुरु से पाते नहीं हैं और जो प्रव्रज्यादायक बली ग्रह अन्य ग्रह से युद्ध में जीता गया हो परन्तु उसे कोई ग्रह देखता न हो तो उसकी दी हुई प्रव्रज्या को ग्रहण करके भी छोड़ देते हैं ।। २ ।।†

जन्मेशोऽन्यैर्यद्यदृष्टोऽर्कपुत्रं
पश्यत्यार्किर्जन्मपं वा बलोनम् ।

---

* सत्याचार्यः—"तेष्वधिकबली जीवस्त्रिदण्डिनं भार्गवं चरकमुख्यम् ।
नग्नश्रमणं सौरो बुधस्तदा जीविकाचार्यम् ।।
वृद्धश्रावकमिन्दुर्दिवाकरस्तापसं तपोयुक्तम् ।
वक्रः शाक्यः श्रमणं क्षेत्राश्रयजं गुणांश्चैतान् ।।
वीर्योपितेऽल्पतनावदीक्षिता भक्तिवादिनस्तेषाम् ।
अन्यैः पराजितश्चेत्प्रव्रज्याप्रच्युतिं कुर्यात ।
यावन्तो वीर्ययुताः प्रव्रज्या भवन्ति तावन्त्यः ।
एकर्क्षगेषु नियमात्तेषामाद्या बलोपेतात् ।।"

† तथोक्तम्—"दीक्षादानसमर्थो यो भवति तदा बलेन संयुक्तः ।
तस्यैव दशाकाले दीक्षां लभते नरोऽवश्यम् ।
यस्य च दीक्षाच्यवनं तस्यैव दशावसाने स्यात् ।
एवं जातककाले संचिन्त्य बलाबलं वाच्यम् ।।"

दीक्षां प्राप्नोत्यार्किद्रेष्काणसंस्थे
भौमार्क्यंशे सौरदृष्टे च चन्द्रे ॥ ३ ॥

प्रव्रज्यायोगान्तर ।

जिसके जन्मकाल में जन्मकालिक चन्द्रमा की राशि का स्वामी अन्य ग्रहों करके अदृष्ट होकर शनैश्चर को देखता हो तो वह प्राणी जन्मकालिक चन्द्रराशि के स्वामी या शनैश्चर इन दोनों में से जो बली हो उसी की अंतर्दशाकाल में शनैश्चरकृत प्रव्रज्या को प्राप्त होता है अर्थात् नंगा रहनेवाला फकीर होता है। अथवा निर्बल* जन्मकालिक चन्द्रराशि के स्वामी को बली होकर शनैश्चर देखता हो तो भी शनैश्चरकृत प्रव्रज्या को प्राप्त होता है। अथवा अन्य ग्रहों से अदृष्ट और शनैश्चर से दृष्ट चन्द्रमा जिस किसी राशिसम्बन्धी शनैश्चर के द्रेष्काण में स्थित होकर मंगल या शनैश्चर इन दोनों में से किसी के नवांश में स्थित हो तो भी शनैश्चरकृत प्रव्रज्या को प्राप्त होता है ॥ ३ ॥

सुरगुरुशशिहोरास्वार्किदृष्टासु धर्मे
गुरुरथ नृपतीनां योगजस्तीर्थकृत्स्यात् ।
नवमभवनसंस्थे मन्दगेऽन्यैरदृष्टे
भवति नरपयोगे दीक्षितः पार्थिवेन्द्रः ॥ ४ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके प्रव्रज्याध्यायः पञ्चदशः ॥ १५ ॥

शास्त्रकृद्योग ।

जिसके जन्मकाल में कोई राजयोग भी हो और बृहस्पति, चन्द्रमा और लग्न इन तीनों को शनैश्चर देखता हो तथा लग्न से नवें स्थान में बृहस्पति स्थित हो तो वह प्राणी शास्त्र

---

* उक्तं च—"शनिदृष्टे बलहीने जन्मनि नाथे वदेच्च निर्ग्रन्थम् ॥"

बनानेवाला होता है अर्थात् कणाद, बुद्ध, पाञ्चशिख, वराहमिहिर और ब्रह्मगुप्त इन आचार्यों के सदृश होता है ।।*

राजप्रव्रज्यायोग ।

और जिसके जन्मकाल में अन्य ग्रहों करके अदृष्ट शनैश्चर लग्न से नवें स्थान में स्थित हो और उसी काल में कोई राजयोग भी हो तो वह राजा भी होकर संन्यासी हो जाता है कदाचित् संन्यासी भी होकर राजा होता है ।। ४ ।।†

दो० श्रीवराहकृत जातके, प्रव्रज्याज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत पन्द्रहाँध्याय ।। १५ ।।

अथ ऋक्षशीलाध्यायः षोडशः ।

प्रियभूषणः सुरूपः सुभगो दक्षोऽश्विनीषु मतिमांश्च ।
कृतनिश्चयः सत्यपरो दक्षः सुखितश्च भरणीषु ।। १ ।।

अश्विनी-भरणी जन्मफल ।

अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी आभूषणों का प्यार करनेवाला, सुन्दररूप, सबको प्यारा, चतुर और बुद्धिमान् होता है। भरणी में उत्पन्न प्रारंभ किये हुए कार्य के परिमाण तक जानेवाला, सत्य बोलनेवाला, चतुर और सुखी होता है ।। १ ।।

बहुभुक्परदाररतस्तेजस्वी कृत्तिकासु विख्यातः ।
रोहिण्यां सत्यशुचिः प्रियंवदः स्थिरमतिः सुरूपश्च ।। २ ।।

---

* माण्डव्यः—"गते मन्दालोकं गुरुशशिविलग्ने नवमगे
गुरौ निष्पद्यन्ते न इह नृपयोगे नृपतयः ।
विजृम्भन्ते येषां लटहरचनारम्भसुभगा
जगत्यां ये विद्वद्गुणकथनपाषाणसदृशाः ।।"

तथा च—"गुरुशशिलग्ना दृष्टा कोणे न तु नवमगो यदि गुरुः ।
नरनाथजन्मजातः शास्त्रकरो भवति न च नृपः ।।"

† तथा च—"नवमस्थाने सौरो यदि स्थितः सर्वदर्शनविमुक्तः ।
नरनाथयोगजातो नृपोऽपि दीक्षान्वितो भवति ।।"

कृत्तिका-रोहिणी जन्मफल ।

कृत्तिका नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी बहुत भोजन करनेवाला, परस्त्रियों में गमन करनेवाला, तेजस्वी और प्रसिद्ध होता है। रोहिणी में सत्य बोलनेवाला, पवित्रतायुक्त, मीठे वचन बोलनेवाला, एकमति और सुन्दररूपवाला होता है ॥ २ ॥

चपलश्चतुरो भीरुः पटुरुत्साही धनी मृगे भोगी ।
शठगर्वितः कृतघ्नो हिंस्रः पापश्च रौद्रर्क्षे ॥ ३ ॥

मृगशिरार्द्रा जन्मफल ।

मृगशिरा नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी चंचल, चतुर, भयसंयुत, वक्ता, उत्साही, धनवान् और भोगी होता है। आर्द्रा में मूर्ख, अभिमानी, अन्यकृत वस्तु का नाश करनेवाला, प्राणियों को व्यर्थ मारनेवाला तथा पापी होता है ॥ ३ ॥

दान्तः सुखी सुशीलो दुर्मेधा रोगभाक् पिपासुश्च ।
अल्पेन च सन्तुष्टः पुनर्वसौ जायते मनुजः ॥ ४ ॥

पुनर्वसु जन्मफल ।

पुनर्वसु नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी इन्द्रियों को वश में करनेवाला, सुखी, सुशील, दुर्बुद्धि, रोगी, बहुत पियासवाला और थोड़े ही में सन्तुष्ट होनेवाला होता है ॥ ४ ॥

शान्तात्मा सुभगः पण्डितो धनी धर्मसंयुतः पुष्ये ।
शठः सर्वभक्षः पापः कृतघ्नधूर्त्तश्च भौजङ्गे ॥ ५ ॥

पुष्य-श्लेषा जन्मफल ।

पुष्य नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी शान्तस्वभाव, सुन्दर रूप, पंडित (बड़ा चतुर), धनवान् और धर्मवान् होता है। श्लेषा में मूर्ख, खाद्याखाद्य का खानेवाला, पापी, अन्यकृत उपकार का विनाशक और धूर्त (छलिया) होता है ॥ ५ ॥

बहुभृत्यधनो भोगी सुरपितृभक्तो महोद्यमः पित्र्ये ।
प्रियवाग्दाता द्युतिमानटनो नृपसेवको भाग्ये ।। ६ ।।

मघा-पूर्वाफाल्गुनी जन्मफल ।

मघा नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी बहुत से दासों से युक्त और धनवाला, भोगी, देवता-पितरों का भक्त और बड़ा उद्यमी होता है। पूर्वाफाल्गुनी में प्यारे वचन बोलनेवाला, दानी, सुन्दरकान्ति, बहुत घूमनेवाला और राजा का सेवक होता है ।। ६ ।।

सुभगो विद्याप्तधनो भोगी सुखभाग्द्वितीयफाल्गुन्याम् ।
उत्साही धृष्टो मद्यपोऽघृणी तस्करो हस्ते ।। ७ ।।

उत्तराफाल्गुनी-हस्त जन्मफल ।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी सबको प्यारा, विद्या से धन कमानेवाला, भोगी और सुखी होता है तथा हस्त में उत्साही, ढीठ, मद्य पीनेवाला, निर्दयी और चोर होता है ।। ७ ।।

चित्राम्बरमाल्यधरः सुलोचनाङ्गश्च भवति चित्रायाम् ।
दान्तो वणिक्कृपालुः प्रियवाग्धर्माश्रितः स्वातौ ।। ८ ।।

चित्रा-स्वाती जन्मफल ।

चित्रा नक्षत्र में जन्म लेनेवाला प्राणी अनेक प्रकार के वस्त्र और माला इत्यादि धारण करनेवाला, सुन्दर नेत्र तथा अंगोंवाला होता है । और स्वाती में इन्द्रियों को जीतनेवाला, वाणिज्य करनेवाला, दयालु, प्यारे वचन बोलनेवाला और धर्मवान् होता है ।। ८ ।।

ईर्ष्युर्लुब्धो द्युतिमान्वचनपटुः कलहकृद्विशाखासु ।
आढ्यो विदेशवासी क्षुधालुरटनोऽनुराधासु ।। ९ ।।

विशाखानुराधा जन्मफल ।

विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी परसन्तापी, लोभी, सुन्दर कान्तिवाला, बोलने में बहुत चतुर और झगड़ालू होता है । अनुराधा में धनवान्, परदेशी, क्षुधायुक्त तथा घूमनेवाला होता है ।।९।।

ज्येष्ठासु न बहुमित्रः सन्तुष्टो धर्मकृत्प्रचुरकोपः ।
मूले मानी धनवान्सुखी न हिंस्रः स्थिरो भोगी ॥ १० ॥

ज्येष्ठा-मूल जन्मफल ।

ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी बहुत मित्र रहित, सन्तुष्ट, धर्म करने वाला और बहुत क्रोधवाला होता है। मूल में अभिमानी, धनवान् सुखी, हिंसारहित, एकमतिवाला और भोगी होता है ॥ १० ॥

इष्टानन्दकलत्रो मानी दृढसौहृदश्च जलदैवे ।
वैश्वे विनीतधार्मिकबहुमित्रकृतज्ञसुभगश्च ॥ ११ ॥

पूर्वोत्तराषाढ़ा जन्मफल ।

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी मन को आनन्द देनेवाली स्त्रीवाला, अभिमानी तथा अच्छे मित्रोंवाला होता है। और उत्तराषाढ़ा में नम्र, धर्मवान्, बहुत मित्रोंवाला, अन्यकृत उपकार का जाननेवाला तथा सबको प्यारा होता है ॥ ११ ॥

श्रीमाञ्छ्रवणे श्रुतवानुदारदारो धनान्वितः ख्यातः ।
दाता आढ्यः शूरो गीतप्रियो धनिष्ठासु धनलुब्धः ॥ १२ ॥

श्रवण-धनिष्ठा जन्मफल ।

श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी शोभा-संयुक्त, पण्डित, उदार स्त्रीवाला, धनी और प्रसिद्ध होता है। और धनिष्ठा में दानी, धनी, शूरवीर, गीतों में प्रेम करनेवाला और लोभी होता है ॥ १२ ॥

स्फुटवाग्व्यसनी रिपुहा साहसिकः शतभिषजि दुर्ग्राह्यः ।
भाद्रपदासूद्विग्नः स्त्रीजित् धनी पटुरदाता च ॥ १३ ॥

शतभिष-पूर्वाभाद्रपद जन्मफल ।

शतभिषा नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी सत्यवादी, द्यूतादि व्यसन-युक्त, शत्रुओं का नाश करनेवाला, विना विचारे कार्य करनेवाला तथा दुःख से ग्रहण करने योग्य होता है। और पूर्वाभाद्रपद में

दुःखित मनवाला, स्त्रियों के वश, धनवान्, चतुर और कृपण होता है ।। १३ ।।

वक्ता सुखी प्रजावाञ्जितशत्रुर्धार्मिको द्वितीयासु ।
सम्पूर्णाङ्गः सुभगः शूरः शुचिरर्थवान् पौष्णे ।। १४ ।।

इति श्रीवराहमिहिर कृते बृहज्जातके ऋक्षशीलाध्यायः षोडशः।।१६।।

उत्तरा-भाद्रपद-रेवती जन्मफल ।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में उत्पन्न प्राणी उचित बोलनेवाला, सुखी, सन्तानयुक्त, शत्रुओं का जीतनेवाला और धर्मवान् होता है । और रेवती में सम्पूर्ण पुष्ट अङ्गोंवाला, सबको प्यारा, शूरवीर पवित्र और धनवान् होता है ।। १४ ।।

दो० श्रीवराहकृतजातके, ऋक्षशील ज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत सोलहाँध्याय ।। १६ ।।

—:०:—

अथ चन्द्रराशिशीलाध्यायः सप्तदशः ।

वृत्ताताम्रदृगुष्णशाकलघुभुक् क्षिप्रप्रसादोऽटनः
कामी दुर्बलजानुरस्थिरधनः शूरोङ्गनावल्लभः ।
सेवाज्ञः कुनखी व्रणाङ्कितशिरा मानी सहोत्थाग्रजः
शक्त्या पाणितलेऽङ्कितोऽतिचपलस्तोये च भीरुः क्रिये ।।१।।

जन्मकालिक मेषस्थ चन्द्रफल ।

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा मेषराशि में स्थित हो तो वह प्राणी गोल-लालनेत्रोंवाला, थोड़ा गरम शाक खानेवाला, शीघ्र प्रसन्न होनेवाला, सदा चलनेवाला, कामी, पैर की गाँठियों में दुर्बल, कभी धनी, कभी निर्धन, शूरवीर, स्त्रियों का प्यारा, सेवा-कर्मों को जाननेवाला, खराब नखोंवाला, घावयुक्त शिरवाला, मानी, भाइयों में श्रेष्ठ

हाथ में शक्ति-नामक हथियार के चिह्नवाला, अति चञ्चल और जल से डरनेवाला होता है ।। १ ।।

कान्तः खेलगतिः पृथूरुवदनः पृष्ठास्यपार्श्वाङ्कितः
त्यागी क्लेशसहः प्रभुः ककुदवान्कन्याप्रजः श्लेष्मलः ।
पूर्वैर्बन्धुधनात्मजैर्विरहितः सौभाग्ययुक्तः क्षमी
दीप्ताग्निः प्रमदाप्रियः स्थिरसुहृन्मध्यान्तसौख्यो गवि ।। २ ।।

वृषस्थ चन्द्रफल ।

जिसके वृष राशि में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी देखने में सुन्दर, खेलने-कूदनेवाला, मोटी जाँघ और बड़े मुखवाला; पीठ, मुख तथा पाँजर इन तीनों में से किसी स्थान में चिह्नवाला, दाता, क्लेश सहनेवाला, समर्थ, भारी स्कन्धवाला, बहुत कन्याओं-वाला, अधिक कफवाला, प्रथम बन्धुधन-पुत्रादिकों से रहित, सबको प्यारा, क्षमा करनेवाला, बहुत भोजन करनेवाला, स्त्रियों को प्रिय, अच्छे मित्रोंवाला और मध्यावस्था तथा वृद्धावस्था में सुखी अर्थात् बाल्यावस्था में दुःखी होता है ।। २ ।।

स्त्रीलोलः सुरतोपचारचतुरस्ताम्रेक्षणः शास्त्रविद्
दूतः कुञ्चितमूर्द्धजः पटुमतिर्हास्येङ्गितद्यूतवित् ।
चार्वङ्गः प्रियवाक् प्रभक्षणरुचिर्गीतप्रियो नृत्यवित्
क्लीबैर्याति रतिं समुन्नतनसश्चन्द्रे तृतीयर्क्षगे ।। ३ ।।

मिथुनस्थ चन्द्रफल ।

जिसके मिथुन राशि में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी स्त्रियों की इच्छा करनेवाला, कामशास्त्र में निपुण, लाल नेत्रोंवाला, शास्त्र का जाननेवाला, दूतकर्म करनेवाला, घुँघुवारे बालोंवाला, चतुर बुद्धिवाला तथा हास्य, चेष्टा और जुआ इनका जाननेवाला, उत्तम अङ्गोंवाला, मधुर बोलनेवाला, बहुत खानेवाला, गीतों में प्रेम

करनेवाला, नृत्य जाननेवाला, हिजरों के साथ प्रीति करनेवाला और ऊँची नाकवाला होता है ॥ ३ ॥

आवक्रद्रुतगः समुन्नतकटिः स्त्रीनिर्जितः सत्सुहृद्
दैवज्ञः प्रचुरालयः क्षयधनैः संयुज्यते चन्द्रवत् ।
ह्रस्वः पीनगलः समेति च वशं साम्ना सुहृद्वत्सल-
स्तोयोद्यानरतः स्ववेश्मसहिते जातः शशाङ्के नरः ॥ ४ ॥

कर्कस्थ चन्द्रफल ।

जिसके कर्क में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी कुटिल और शीघ्र गतिवाला, ऊँचे करिहाँववाला, स्त्रियों के अधीन, अच्छे मित्रोंवाला, ज्योतिश्शास्त्र का जाननेवाला, जैसे चन्द्रमा कभी पूर्ण और कभी क्षीण होते हैं उसी तरह कभी धनहीन, कभी पूर्ण धनवाला, छोटी देह, मोटे गलेवाला, प्रीति से वश में आनेवाला, मित्रों का प्यारा और जल तथा बागों में विहार करनेवाला होता है ॥ ४ ॥

तीक्ष्णः स्थूलहनुर्विशालवदनः पिङ्गेक्षणोऽल्पात्मजः
स्त्रीद्वेषी प्रियमांसकाननगः कुप्यत्यकार्ये चिरम् ।
क्षुत्तृष्णोदरदन्तमानसरुजा संपीडितस्त्यागवान्
विक्रान्तः स्थिरधीः सुगर्वितमना मातुर्विधेयोऽर्कभे ॥ ५ ॥

सिंहस्थ चन्द्रफल ।

जिसके सिंहराशि में चन्द्रमा स्थित हो तो वह तीक्ष्ण स्वभाववाला, मोटी ठोढ़ीवाला, सुन्दर मुखवाला, पीले नेत्रोंवाला, थोड़ी सन्तानवाला, स्त्रियों से शत्रुता करनेवाला तथा मांस, वन और पर्वत इनमें प्रीति करनेवाला, बेमतलब बहुत काल तक क्रोध करनेवाला तथा भूख-प्यास, पेट, दाँत और मन इनके रोगों से पीड़ित, दाता, पराक्रमी, स्थिर बुद्धिवाला, अभिमानी और माता का भक्त होता है ॥ ५ ॥

व्रीडामन्थरचारुवीक्षणगतिः स्रस्तांसबाहुः सुखी
श्लक्ष्णः सत्यरतः कलासुनिपुणः शास्त्रार्थविद्धार्मिकः ।
मेधावी सुरतप्रियः परगृहैर्वित्तैश्च संयुज्यते
कन्यायां परदेशगः प्रियवचाः कन्याप्रजोऽल्पात्मजः ॥ ६ ॥

कन्यास्थ चन्द्रफल ।

जिसके कन्या में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी लज्जासंयुक्त मन्द-मन्द देखने और गमन करनेवाला, झुके हुए काँध तथा बाहुवाला, सुखी, देखने में अच्छा, सत्यवक्ता, सम्पूर्ण कलाओं के जानने में निपुण, शास्त्र के अर्थ को जाननेवाला, धर्मिष्ठ, बुद्धिमान्, कामी, पराये घर और धन से संयुक्त, परदेश जानेवाला, मधुर बोलनेवाला, बहुत कन्या और थोड़े पुत्रोंवाला होता है ॥ ६ ॥

देवब्राह्मणसाधुपूजनरतः प्राज्ञः शुचिः स्त्रीजितः
प्रांशुश्चोन्नतनासिकः कृशचलद्गात्रोऽटनोऽर्थान्वितः ।
हीनाङ्गः क्रयविक्रयेषु कुशलो देवद्विनामा सरुग्
बन्धूनामुपकारकृद्विरुषितस्त्यक्तश्च तैः सप्तमे ॥ ७ ॥

तुलास्थ चन्द्रफल ।

जिसके तुला में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी देवता, ब्राह्मणों और साधुओं का पूजनेवाला, पण्डित, पवित्र, स्त्रियों के अधीन, लम्बा, ऊँची नाकवाला, पतले चञ्चल गात्रोंवाला, चलनेवाला, धनी, अंगहीन, क्रय-विक्रय में निपुण, देवतावाचक दूसरे नामवाला, रोगी, अपने बन्धुओं का उपकारी और बन्धुओं से भर्त्सित तथा त्यक्त होता है ॥ ७ ॥

पृथुलनयनवक्षा वृत्तजङ्घोरुजानु-
र्जनकगुरुवियुक्तः शैशवे व्याधितश्च ।

नरपतिकुलपूज्यः पिङ्गलः क्रूरचेष्टो
झषकुलिशखगाङ्कश्छन्नपापोऽलिजातः ॥ ८ ॥

वृश्चिकस्थ चन्द्रफल ।

जिसके वृश्चिक में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी बड़े नेत्र, बड़ी छाती और गोल जाँघ, गाँठि तथा फीलियोंवाला, पिता और गुरु से रहित, बाल्यावस्था में व्याधि से पीड़ित, राजकुल से पूजित, पीतवर्ण, क्रूर व्यापार करनेवाला और मछली, वज्र और पक्षी इनके चिह्नवाला तथा छिपकर पाप-कर्म करनेवाला होता है ॥८॥

व्यादीर्घास्यशिरोधरः पितृधनस्त्यागी कविर्वीर्यवान्
वक्ता स्थूलरदश्रवाधरनसः कार्योद्यतः शिल्पवित् ।
कुब्जांसः कुनखी समांसलभुजः प्रागल्भ्यवान् धर्मविद्
बन्धुद्विट् न बलात्समेति च वशं साम्नैकसाध्योऽश्वजः ॥ ९ ॥

धनस्थ चन्द्रफल ।

जिसके जन्म समय धनराशि में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी बड़े मुख और ग्रीवावाला, पिता के धन से धनी, दाता, काव्य बनानेवाला, बली, व्याख्यान देनेवाला एवं मोटे दाँत, बड़े कान, मोटे ओष्ठ और मोटी नाकवाला, कार्य करने में तत्पर, शिल्पविद्या जाननेवाला तथा कुबरे स्कन्ध, कुत्सित नख और मोटे बाहुओंवाला, ढीठ, धर्म का जाननेवाला, बन्धुओं का विरोधी, जबरदस्ती किसी के वश नहीं होनेवाला और केवल प्रीति ही से वश्य होनेवाला होता है ॥ ९ ॥

नित्यं लालयति स्वदारतनयान्धर्मध्वजोऽधः कृशः
स्वक्षः क्षामकटिर्गृहीतवचनः सौभाग्ययुक्तोऽलसः ।
शीतालुर्मनुजोऽटनश्च मकरे सत्त्वाधिकः काव्यकृ-
ल्लुब्धोऽगम्यजराङ्गनासु निरतः संत्यक्तलज्जोऽघृणः ॥१०॥

मकरस्थ चन्द्रफल।

जिसके मकरराशि में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी अपनी स्त्री और लड़कों का सदा दुलार करनेवाला, दम्भी, नीचे से पतला, सुन्दर नेत्र, पतली कमरवाला, एक ही बार के कहने से कही बात याद रखनेवाला, अच्छे भाग्यवाला, आलसी, शरदी को नहीं सहनेवाला, सदा चलनेवाला, बली, काव्यकर्ता, लोभी, अगम्य और वृद्धा स्त्री के साथ रति करनेवाला, निर्लज्ज तथा निर्दयी होता है ॥ १० ॥

करभगलः शिरालुः खररोमशदीर्घतनुः
पृथुचरणोरुपृष्ठजघनास्यकटिर्जठरः।
परवनितार्थपापनिरतः क्षयवृद्धियुतः
प्रियकुसुमानुलेपनसुहृद्घटजोऽध्वसहः॥ ११ ॥

कुम्भस्थ चन्द्रफल।

जन्मकाल में कुम्भ का चन्द्रमा हो तो वह प्राणी ऊँट के समान गलेवाला, बहुत नससंयुक्त शरीरवाला, रूखे रोमवाला, लम्बा तथा पैर और पैरों के जोड़, पीठ और फीली मोटे, भारी मुख, भारी पेटवाला; परस्त्री, परधन और पापकर्म इनमें सदा रत रहनेवाला, कभी हानि तथा वृद्धिसंयुत और फूल, चन्दन और मित्र इनसे प्यार करनेवाला तथा मार्ग चलने में समर्थ होता है ॥ ११ ॥

जलपरधनभोक्ता दारवासोऽनुरक्तः
समरुचिरशरीरस्तुङ्गनासो बृहत्कः।
अभिभवति सपत्नान्स्त्रीजितश्चारुदृष्टि-
र्द्युतिनिधिधनभोगी पण्डितश्चान्त्यराशौ॥ १२ ॥

मीनस्थ चन्द्रफल।

मीन राशि में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी जल से उत्पन्न धन तथा पराये धन का भोगकर्त्ता, स्त्री और वस्त्रों में प्रीति करनेवाला, समान सुन्दर शरीरवाला, ऊँची नाकवाला, भारी

शिरवाला, शत्रुओं को जीतनेवाला, स्त्रियों के अधीन, सुन्दर दृष्टिवाला, कान्तिमान्, गड़े धन का भोगनेवाला, पण्डित होता है ॥ १२ ॥

बलवति राशौ तदधिपतौ वा
स्वबलयुतः स्याद्यदि तुहिनांशुः ।
कथितफलानामविकलदाता
शशिवदतोऽन्येऽप्यनुपरिचिन्त्याः ॥ १३ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके चन्द्रराशिशीलं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

उक्तापवादफल ।

जन्मकालिक चन्द्रमा जिस राशि में स्थित हो वह राशि बली हो और उस राशि का स्वामी बली हो तथा चन्द्रमा पूर्ण बली हो तो वह पूर्वोक्त राशिफल ठीक-ठीक होता है और जो ये तीनों बली नहीं होते हैं तो उक्त राशिफल पूर्ण नहीं होता है तथा इसी तरह शेष ग्रहाक्रांतराशियों के फल का विचार करना चाहिए।।१३।।

दो० । श्रीवराहकृतजातके, राशिशीलज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत सत्रहाँध्याय ।। १७ ।।

—:०:—

अथ ग्रहराशिशीलाध्यायोऽष्टादशः ।

राशिस्थरविफलम् ।

प्रथितश्चतुरोऽटनोऽल्पवित्तः
क्रियगे त्वायुधभृद्वितुङ्गभागे ।
गवि वस्त्रसुगन्धपण्यजीवी
वनिताद्विट् कुशलश्च गीतवाद्ये ॥ १ ॥

मेष-वृषस्थ सूर्यफल ।

जिसके जन्मकालिक सूर्य मेष में उच्चांश को छोड़कर स्थित

हो वह प्राणी प्रसिद्ध, चतुर, घूमनेवाला, थोड़े धनवाला और हथियार धारण करनेवाला होता है और उच्चांश में स्थित हो तो इससे विपरीत फल होता है। सूर्य वृषराशि में स्थित हो तो वस्त्र, सुगंध और बाजार की वस्तुओं से जीविका करनेवाला, स्त्रियों से शत्रुता करनेवाला तथा गाने-बजाने में बहुत निपुण होता है ॥ १ ॥

विद्याज्योतिषवित्तवान्मिथुनगे भानौ कुलीरस्थिते
तीक्ष्णोऽस्वः परकार्य्यकृच्छ्रमपथक्लेशैश्च संयुज्यते ।
सिंहस्थे वनशैलगोकुलरतिर्वीर्य्यान्वितोऽज्ञः पुमान्
कन्यास्थे लिपिलेख्यकाव्यगणितज्ञानान्वितः स्त्रीवपुः ॥ २ ॥

मिथुन-कर्क-सिंह-कन्यास्थ सूर्यफल ।

सूर्य मिथुन में स्थित हो तो विद्वान्, ज्योतिषी और धनवान् होता है; कर्क में स्थित हो तो तीक्ष्ण स्वभाव, दरिद्री, परकार्य करनेवाला तथा खेद और राह के क्लेशों से संयुक्त होता है; सिंहराशि में स्थित हो तो वन, पर्वत और गोकुलादि में प्रीति करनेवाला, बलवान् तथा मूर्ख होता है और कन्याराशि में स्थित हो तो लिखना, चित्रकारी, काव्य और गणित इन सबका जानने-वाला तथा स्त्री के सदृश आकृतिवाला होता है ॥ २ ॥

जातस्तौलिनि शौण्डिकोऽध्वनिरतो हैरण्यको नीचकृत्
क्रूरः साहसिको विषार्जितधनः शस्त्रान्तगोऽलिस्थिते ।
सत्पूज्यो धनवान् धनुर्द्धरगते तीक्ष्णो भिषक्कारुको
नीचोऽज्ञः कुवणिङ् मृगेल्पधनवाँल्लुब्धोऽन्यभाग्यै रतः ॥ ३ ॥

तुला-वृश्चिक-धन-मकरस्थ सूर्यफल ।

जिसके जन्म समय सूर्य तुला में स्थित हो तो मद्यपीने तथा बनानेवाला, सदा मार्ग चलनेवाला, सोने का काम करनेवाला तथा नीच कर्म करनेवाला होता है। यदि वृश्चिकराशि में सूर्य स्थित हो तो क्रूरस्वभाव, साहसी, विषादि से कमाये धनवाला

और हथियारों का तत्व जाननेवाला होता है । धनराशि में सूर्य स्थित हो तो सज्जनों से पूजित, धनवान्, तीक्ष्ण स्वभाव, वैद्य तथा शिल्प कर्म करनेवाला होता है। और मकर राशि में सूर्य स्थित हो तो नीच कर्म करनेवाला, मूर्ख, निन्दित बनियों का काम करनेवाला, थोड़े धनवाला, लोभी और अन्य के भाग्य से भाग्य-वाला होता है ॥ ३ ॥

नीचो घटे तनयभाग्यपरिच्युतोऽस्व-
स्तोयोत्थपण्यविभवो वनितादृतोऽन्त्ये ।
नक्षत्रमानवतनुप्रतिमे विभागे
लक्ष्मादिशेत्तुहिनरश्मिदिनेशयुक्ते ॥ ४ ॥

इति रविफलम् ।

कुम्भ-मीनस्य सूर्यफल ।

जिसके कुम्भराशि में सूर्य स्थित हो वह नीचकर्मकर्त्ता, पुत्र और भाग्य से रहित तथा निर्धन होता है; मीनराशि में सूर्य स्थित हो तो जल में उत्पन्न वस्तुओं के क्रय-विक्रयादि से मिले हुए धनवाला तथा स्त्रियों से पूज्य होता है। जिसके जन्मकालिक चन्द्रमा और सूर्य ये दोनों एकत्र जिस राशि में स्थित हों वह राशि पूर्वोक्तकाल नराकारचक्र के जिस अंग में स्थित हो उस प्राणी के उसी अंग में मशक, तिलादि चिह्न कहना चाहिए ॥४॥

राशिस्थ भौमफलम् ।

नरपतिसत्कृतोऽटनश्चमूपवणिक्सधनाः
क्षततनुचौरभूरिविषयांश्च कुजः स्वगृहे ।
युवतिजितान्सुहृत्सु विषमान्परदाररतान्
कुहकसुवेषभीरुपरुषान् सितभे २।७ जनयेत् ॥ ५ ॥

मेष-वृश्चिक-वृष-तुलास्थ मङ्गलफल ।

जिसके जन्मकालिक मंगल स्वगृह अर्थात् मेष या वृश्चिक में स्थित हो तो वह प्राणी राजाओं से पूजित, सदा घूमने फिरनेवाला, सेनापति, बनियों का कर्म करनेवाला, धनवान्, घावों से संयुक्त, चोर और बहुत विषयी होता है तथा वृष या तुला इनमें कहीं स्थित हो तो वह प्राणी स्त्रियों के अधीन, मित्रों में कुटिलता रखनेवाला, परस्त्रीगामी, कपटी, सुन्दर वेष धारण करनेवाला, भयसंयुक्त और कर्कश स्वभाव होता है ॥ ५ ॥

बौधेऽसहस्तनयवान् विसुहृत्कृतज्ञो
गान्धर्वयुद्धकुशलः कृपणोऽभयोऽर्थी ।
चान्द्रेऽर्थवान् सलिलयानसमर्जितस्वः
प्राज्ञश्च भूमितनये विकलः खलश्च ॥ ६ ॥

मिथुन-कन्या-कर्कस्थ मङ्गलफल ।

जिसके जन्मकाल में मिथुन या कन्या में मंगल स्थित हो तो वह प्राणी तेजस्वी, पुत्रवान्, मित्ररहित, अन्यकृत उपकार का जाननेवाला, गाना और लड़ाई में निपुण, कृपण, निर्भय तथा याचना करनेवाला होता है और कर्क में मंगल स्थित हो तो वह प्राणी धनवान्, नौका से कमाये हुए धनवाला, बुद्धिमान्, अंगहीन और दुर्जन होता है ॥ ६ ॥

निःस्वः क्लेशसहो वनान्तरचरः सिंहेऽल्पदारात्मजो
जैवे नैकरिपुर्नरेन्द्रसचिवः ख्यातोऽभयोऽल्पात्मजः ।
दुःखार्तो निधनोऽटनोऽनृतरतस्तीक्ष्णश्च कुम्भस्थिते
भौमे भूरिधनात्मजो मृगगते भूपोऽथवा तत्समः ॥ ७ ॥

इति भौमफलम् ।

सिंह-धन-मीन-मकर-कुम्भस्थ मंगलफल ।

सिंहराशि में मंगल स्थित हो तो वह प्राणी निर्धन, क्लेश

सहनेवाला, वन में घूमनेवाला, थोड़ी स्त्री और थोड़े सन्तानवाला होता है; धन या मीन में स्थित हो तो वह प्राणी बहुत शत्रुयुक्त, राजा का मन्त्री, प्रसिद्ध कीर्तिवाला, निर्भय और कम सन्तानवाला होता है; कुम्भ में स्थित हो तो वह प्राणी दुःखी, निर्धन, बहुत घूमनेवाला, मिथ्या बोलनेवाला तथा तीक्ष्ण स्वभाव होता है और मकर में स्थित हो तो वह प्राणी बहुत धन और सन्तानवाला तथा राजा अथवा राजा के सदृश होता है ॥ ७ ॥

राशिस्थबुधफलम् ।

द्यूतर्णपानरतनास्तिकचौरनिःस्वाः
कुस्त्रीककूटकृदसत्यरताः कुजर्क्षे ।
आचार्यभूरिसुतदारधनार्जनेष्टाः
शौक्रे वदान्यगुरुभक्तिरताश्च सौम्ये ॥ ८ ॥

मेष-वृश्चिक-वृष-तुलास्थ बुधफल ।

जिसके जन्मकालिक बुध मेष या वृश्चिक में स्थित हो तो वह प्राणी जुवारी, ऋणी, मद्यपी, नास्तिक, चोर, निर्धन, कुत्सित स्त्रीवाला, दंभी और मिथ्या बोलनेवाला होता है; वृष या तुला में स्थित हो तो वह प्राणी आचार्य अर्थात् उपदेशकर्ता, बहुत सन्तान और स्त्रियोंवाला, सदा धन कमानेवाला, दाता तथा गुरुभक्त होता है ॥ ८ ॥

विकत्थनः शास्त्रकलाविदग्धः
प्रियंवदः सौख्यरतस्तृतीये ।
जलार्जितस्वः स्वजनस्य शत्रुः
शशाङ्कजे शीतकरर्क्षयुक्ते ॥ ९ ॥

मिथुन-कर्कस्थ बुधफल ।

मिथुन राशि में बुध स्थित हो तो वह प्राणी मिथ्या बोलनेवाला, शास्त्र और कला (गीत, वाद्य, नृत्य, लेपन, चित्र आदि

कर्म) में निपुण, प्रिय बोलनेवाला और सदा सुख करनेवाला होता है; कर्क राशि में स्थित हो तो वह प्राणी जल में उत्पन्न वस्तुओं से कमाये हुए धनवाला तथा अपने बन्धुओं का वैरी होता है ॥ ९ ॥

स्त्रीद्वेष्यो विधनसुखात्मजोऽटनोऽज्ञः
स्त्रीलोलः स्वपरिभवोऽर्कराशिगे ज्ञे ।
त्यागी ज्ञः प्रचुरगुणः सुखी क्षमावान्
युक्तिज्ञो विगतभयश्च षष्ठराशौ ॥ १० ॥

सिंह-कन्यास्थ बुधफल ।

सिंह राशि में बुध स्थित हो तो वह प्राणी स्त्रियों का अप्रिय, निर्धन, सुखरहित, सन्तानरहित, सदा घूमनेवाला, मूर्ख, स्त्रियों का अभिलाषी तथा स्वजनों से तिरस्कृत होता है; कन्याराशि में स्थित हो तो वह प्राणी दाता, पण्डित, अनेक गुणोंवाला, सुखी, क्षमावान्, अनेक उपायों का जाननेवाला और निर्भय होता है ॥ १० ॥

परकर्मकृदस्वशिल्पबुद्धी-
ऋणवान्विष्टिकरो बुधेऽर्कजर्क्षे ।
नृपसत्कृतपण्डिताप्तवाक्यो
नवमेऽन्त्ये जितसेवकोऽन्त्यशिल्पः ॥ ११ ॥

इति बुधफलम् ।

मकर-कुम्भ-धन-मीनस्थ बुधफल ।

मकर और कुम्भ में बुध स्थित हो तो वह प्राणी अन्यों का कार्य करनेवाला, निर्धन, चित्रकारी इत्यादि की इच्छा करनेवाला, ऋणी तथा आज्ञाकारी होता है; धनराशि में स्थित हो तो वह प्राणी राजाओं से पूजित, पण्डित और योग्य वाक्य कहनेवाला होता है; और मीन राशि में स्थित हो तो वह प्राणी अपने

सेवकों को वश में कर लेनेवाला तथा अन्त्यावस्था में चित्रकारी इत्यादि करनेवाला होता है ॥ ११ ॥

राशिस्थगुरुफलम् ।

सेनानीर्बहुवित्तदारतनयो दाता सुभृत्यः क्षमी
तेजोदारगुणान्वितः सुरगुरौ ख्यातः पुमान् कौजभे ।
कल्पाङ्गः ससुखार्थमित्रतनयस्त्यागी प्रियः शौक्रभे
बौधे भूरिपरिच्छदात्मजसुहृत्साचिव्ययुक्तः सुखी ॥ १२ ॥

मेष-वृश्चिक-वृष-तुला-मिथुन-कन्यास्थ बृहस्पतिफल ।

जिसके जन्मकालिक बृहस्पति मेष या वृश्चिक में स्थित हो तो वह प्राणी सेनापति एवं बहुत धन, स्त्री और सन्तानोंवाला, दाता, सुन्दर सेवकोंवाला, क्षमावान्, तेजस्वी, उदारता से संयुक्त और प्रसिद्ध होता है; वृष या तुला में स्थित हो तो वह प्राणी अंगों से पुष्ट तथा सुख, धन, मित्र और सन्तान इन सबसे संयुक्त, दाता तथा प्रिय होता है और मिथुन या कन्या में स्थित हो तो वह प्राणी बहुत गृहस्थी की वस्तु, सन्तान और मित्रों से युक्त, मन्त्रियों का कार्य करनेवाला तथा सुखी होता है ॥ १२ ॥

चान्द्रे रत्नसुतस्वदारविभवप्रज्ञासुखैरन्वितः
सिंहे स्याद् बलनायकः सुरगुरौ प्रोक्तं च यच्चन्द्रभे ।
स्वर्क्षे माण्डलिको नरेन्द्रसचिवः सेनापतिर्वा धनी
कुम्भे कर्कटवत्फलानि मकरे नीचोऽल्पवित्तोऽसुखी ॥ १३ ॥

इति गुरुफलम् ।

कर्क-सिंह-धन-मीन-कुम्भ-मकरस्थ बृहस्पतिफल ।

कर्क राशि में बृहस्पति स्थित हो तो वह प्राणी रत्न, पुत्र, धन, स्त्री, ऐश्वर्य, बुद्धि और सुख इन सबसे संयुक्त होता है; सिंहराशि में स्थित हो तो वह प्राणी सेना का मालिक और सम्पूर्ण कर्क के फल (रत्न-पुत्र-धन-स्त्री-ऐश्वर्य-बुद्धि-सुख) से संयुक्त

होता है; धन और मीन राशि में स्थित हो तो वह प्राणी जमीदार, राजा का मन्त्री, सेनापति या धनवान् होता है; कुम्भ राशि में स्थित हो तो वह प्राणी पूर्वोक्त कर्क के फल से अर्थात् रत्न-धनादि से संयुक्त होता है और मकर राशि में स्थित हो तो वह प्राणी नीच कर्म करनेवाला तथा थोड़े धनवाला और सुखरहित होता है ।। १३ ।।

राशिस्थ भृगुफलम् ।

परयुवतिरतस्तदर्थवादै-
र्हृतविभवः कुलपांसनः कुजर्क्षे ।
स्वबलमतिधनो नरेन्द्रपूज्यः
स्वजनविभुः प्रथितोऽभयः सिते स्वे ।। १४ ।।

मेष-वृश्चिक-वृष-तुलास्थ शुक्रफल ।

जिसके जन्मकालिक शुक्र मेष और वृश्चिक में स्थित हो तो वह प्राणी परस्त्रियों में रति करनेवाला तथा उन्हीं परस्त्रियों में खर्च करने के कारण निर्धन और कुल में कलंकरूप होता है; वृष तथा तुला में स्थित हो तो वह प्राणी अपने बल से और बुद्धि से धन पैदा करनेवाला, राजाओं से पूज्य, अपने बन्धुओं में प्रधान, प्रसिद्ध और निर्भय होता है ।। १४ ।।

नृपकृत्यकरोऽर्थवान् कलावि-
न्मिथुने षष्ठगतेऽतिनीचकर्मा ।
रविजर्क्षगतेऽमरारिपूज्ये
सुभगः स्त्रीविजितो रतः कुनार्याम् ।। १५ ।।

मिथुन-कन्या-मकर-कुम्भस्थ शुक्रफल ।

मिथुन राशि में शुक्र स्थित हो तो वह प्राणी राजाओं का कार्य करनेवाला, धनवान् और गान इत्यादि कलाओं का जाननेवाला होता है । कन्या में स्थित हो तो वह प्राणी अतिशय नीच

कर्म करनेवाला होता है। मकर और कुम्भ राशि में शुक्र स्थित हो तो वह प्राणी सबका प्रिय, स्त्री के अधीन और निन्दित स्त्री में प्रीति करनेवाला होता है ॥ १५ ॥

द्विभार्य्योऽर्थी भीरुः प्रबलमदशोकश्च शशिभे
हरौ योषाप्तार्थः प्रवरयुवतिर्मन्दतनयः ।
गणैः पूज्यः सस्वस्तुरगसहिते दानवगुरौ
झषे विद्वानाढ्यो नृपजनितपूजोऽतिसुभगः ॥ १६ ॥

इति शुक्रफलम् ।

कर्क-सिंह-धन-मीनस्थ शुक्रफल ।

कर्क राशि में शुक्र स्थित हो तो दो स्त्रियोंवाला, याचना करनेवाला, डरपोक, अभिमानी और बहुत शोकसंयुक्त होता है; सिंह राशि में स्थित हो तो वह प्राणी स्त्री के द्वारा मिले हुए धनवाला, बहुत उत्तम स्त्रीवाला और थोड़ी सन्तानवाला होता है; धन राशि में स्थित हो तो वह प्राणी उत्तम गुणवाला और धनवान् होता है और मीन राशि में स्थित हो तो वह प्राणी विद्वान्, धनवान्, राजाओं से पूजित और सबको प्रिय होता है ॥ १६ ॥

राशिस्थशनिफलम् ।

मूर्खोऽटनः कपटवान्विसुहृद्यमेऽजे
कीटे तु बन्धवधभाक् चपलोऽघृणश्च ।
निर्ह्रीसुखार्थतनयः स्खलितश्च लेख्ये
रक्षापतिर्भवति मुख्यपतिश्च बौधे ॥ १७ ॥

मेष-वृश्चिक-मिथुन-कन्यास्थ शनिफल ।

जिसका जन्मकालिक शनैश्चर मेष में स्थित हो तो वह प्राणी मूर्ख, घूमनेवाला, कपटी और मित्ररहित होता है; वृश्चिक में स्थित हो तो वह प्राणी बन्धन और ताड़नयुक्त, चंचल तथा निर्दयी होता है; मिथुन या कन्या राशि में स्थित हो तो वह प्राणी

लज्जा, सुख, धन और पुत्र इन सबसे विहीन एवं चित्रकारी में मूर्ख, रक्षा करनेवाला तथा प्रधान होता है ।। १७ ।।

वर्ज्यस्त्रीष्टो न बहुविभवो भूरिभार्यो वृषस्थे
ख्यातः स्वोच्चे गणपुरबलग्रामपूज्योऽर्थवांश्च ।
कर्किण्यस्वो विकलदशनो मातृहीनोऽसुतोऽज्ञः
सिंहेऽनार्यो विसुखतनयो विष्टिकृत्सूर्यपुत्रे ।। १८ ।।

वृष-तुला-कर्क-सिंहस्थ शनिफल ।

वृष राशि में शनि स्थित हो तो वह प्राणी अगम्य स्त्रियों का प्रिय, थोड़े ऐश्वर्य वाला तथा बहुत स्त्रियोंवाला होता है; तुला में स्थित हो तो वह प्राणी प्रसिद्ध कीर्तिवाला, समूहों, नगरों, सेनाओं और ग्रामों का पूज्य तथा धनवान् होता है; कर्क में स्थित हो तो वह प्राणी निर्धन, थोड़े दाँतों वाला, मातृहीन, पुत्रहीन तथा मूर्ख होता है और सिंह में स्थित हो तो वह प्राणी मूर्ख, सुखहीन पुत्रहीन और भार ढोनेवाला होता है ।। १८ ।।

स्वन्तः प्रत्ययितो नरेन्द्रभवने सत्पुत्रजायाधनो
जीवक्षेत्रगतेऽर्कजे पुरबलग्रामाग्रनेताऽथवा ।
अन्यस्त्रीधनसंवृतः पुरबलग्रामाग्रणीर्मन्ददृक्
स्वक्षेत्रे मलिनः स्थिरार्थविभवो भोक्ता च जातः पुमान् ।।१९।।

इति शनिफलम् ।

धन-मीन-मकर-कुम्भस्थ शनिफल ।

धन और मीन राशि में शनैश्चर स्थित हो तो वह प्राणी अन्तावस्था में सुखादि प्राप्त होनेवाला, राजाओं के घर में प्रतीति-वाला और सुन्दर पुत्र, स्त्री तथा धन से संयुक्त और नगर, सेना तथा ग्राम इन सबमें प्रधान होता है और मकर तथा कुम्भ में स्थित हो तो वह प्राणी परस्त्रियों और परधन से संयुक्त; नगर, सेना

तथा ग्राम इन सबमें प्रधान, थोड़ी दृष्टिवाला, मलिन, बहुत दिन तक धन, ऐश्वर्य्य रखनेवाला और भोगी होता है ॥ १९ ॥

शिशिरकरसमागमेक्षणानां
सदृशफलं प्रवदन्ति लग्नजातम् ।
फलमधिकमिदं यदत्र भावा-
द्भवनभनाथगुणैर्विचिन्तनीयाः ॥ २० ॥

इति श्रीअवन्तिकाचार्यवराहमिहिरकृते बृहज्जातके
ग्रहराशिशीलाध्यायोऽष्टादशः ॥ १८ ॥

लग्नफल ।

जन्मकाल में साधारण चन्द्रमा अथवा अन्य ग्रह-दृष्ट चन्द्रमा जिस राशि में स्थित हो उस राशि का जो फल है वह (वृत्तातात्र-दृगित्यादि) कहेंगे (चन्द्रे भूपबुधौ इत्यादि) उसी के सदृश फल उस राशि के लग्न में रहने से होता है, यह पण्डित लोग कहते हैं। और चन्द्र राशि से लग्नादि भावों में यही अधिक फल होता है, जो विभावों का फल भाव या भावस्वामी इन दोनों के सबलत्वादि गुण से विचारा जाता है और चन्द्रराशि का वैसा नहीं है। यथा—लग्न बली हो तथा लग्नेश भी बली हो तो शरीरपुष्टि होती है और धनभाव बली हो, उसका स्वामी भी बली हो तो धन की वृद्धि होती है इत्यादि। ऐसेही सब भावों को जानना चाहिए। भाव और भावेश इन दोनों में एक ही बली हो तो न क्षीण, न बहुत पुष्ट शरीरादि कहना चाहिए; परन्तु इसमें भी कुछ विशेष है कि चौथा, आठवाँ तथा बारहवाँ भाव निर्बल हो और इन भावों के स्वामी भी निर्बल हों तो इन भावों का फल अच्छा होता है ॥ २० ॥

आशय यह है कि जिस भाव का फल विचारना हो उस भावके पति का, उसमें स्थित ग्रहों का चन्द्रमा के समागम और दृष्टि का फल देखकर निर्णय करना चाहिए। जैसे लग्न बली है और लग्नेश भी बली है तो शरीर पुष्ट होगा, यदि एक निर्बल और एक

सबल है तो न पुष्ट और न कृश ही होगा। इसी तरह सब भावों का विचार करना चाहिए।

दो० । श्रीवराहकृतजातके, ग्रहभाफलज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत अठरहाँध्याय ।।१८।।

अथ दृष्टिफलाध्याय एकोनविंशः ।

चन्द्रे भूपबुधौ नृपोपमगुणी स्तेनोऽधनश्चाजगे
निःस्वः स्तेननृमान्यभूपधनिनः प्रेष्यः कुजाद्यैर्गवि ।
नृस्थेऽयोव्यवहारिपार्थिवबुधाभीस्तन्तुवायोऽधनः
स्वर्क्षे योद्धकविज्ञभूमिपतयोऽयोजीविदृग्रोगिणौ ।। १ ।।

मेषादिराशिस्थित मंगलादिदृष्ट चन्द्रफल ।

जिसके जन्मकाल में मेषस्थित चन्द्रमा को मंगल देखता हो तो वह राजा, बुध देखता हो तो पण्डित, बृहस्पति देखता हो तो राजा के सदृश, शुक्र देखता हो तो गुणवान्, शनैश्चर देखता हो तो चोर और सूर्य देखता हो तो वह निर्धन होता है। और ऐसे ही वृषस्थित चन्द्रमा को मंगल देखता हो तो वह निर्धन, बुध देखता हो तो चोर, बृहस्पति देखता हो तो मनुष्यों का पूजनीय, शुक्र देखता हो तो राजा, शनैश्चर देखता हो तो धनवान् तथा सूर्य देखता हो तो वह दास होता है। और ऐसे ही मिथुनस्थ चन्द्रमा को मंगल देखता हो तो वह लोहे का व्यापार करने वाला, बुध देखता हो तो राजा, बृहस्पति देखता हो तो पण्डित, शुक्र देखता हो तो निर्भय, शनैश्चर देखता हो तो कपड़ा बुननेवाला और सूर्य देखता हो तो वह निर्धन होता है। और ऐसे ही कर्क राशि में स्थित चन्द्रमा को मंगल देखता हो तो वह युद्ध करने में चतुर, बुध देखता हो तो कवि, बृहस्पति देखता हो तो पण्डित, शुक्र देखता हो तो राजा, शनैश्चर देखता हो तो वह लोहे से जीविका करनेवाला और सूर्य देखता हो तो वह दृग्रोगी होता है ।। १ ।।

ज्योतिर्ज्ञाढ्यनरेन्द्रनापितनृपक्ष्मेशा बुधाद्यैर्हरौ
तद्वद्भूपचमूपनैपुणयुताः षष्ठेऽशुभैस्त्र्याश्रयः ।
जूके भूपसुवर्णकारवणिजः शेषेक्षिते नैकृती
कीटे युग्मपिता नतश्च रजको व्यङ्गोऽधनी भूपतिः ॥ २ ॥

सिंहादिराशिस्थ बुधादिदृष्ट चन्द्रफल ।

सिंह राशि में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो वह ज्योतिष शास्त्र का जाननेवाला, बृहस्पति देखता हो तो धनवान्, शुक्र देखता हो तो राजा, शनैश्चर देखता हो तो नाऊ, सूर्य देखता हो तो राजा और मंगल देखता हो तो वह पृथ्वी का ईश होता है । और ऐसे ही कन्या राशि में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो वह राजा, बृहस्पति देखता हो तो सेनापति, शुक्र देखता हो तो चतुर और शनि, सूर्य, मंगल ये ग्रह देखते हों तो वह स्त्री के आश्रित रहनेवाला होता है । और ऐसे ही तुला राशि में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो वह प्राणी राजा, बृहस्पति देखता हो तो सोनार का काम करनेवाला, शुक्र देखता हो तो बनिये का काम करनेवाला और शनैश्चर, सूर्य, मंगल ये देखते हों तो वह प्राणिघात करनेवाला होता है । और ऐसे ही वृश्चिक राशि में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो वह दो सन्तानों का उत्पन्न करनेवाला, बृहस्पति देखता हो तो वह नम्र, शुक्र देखता हो तो रंगरेज का काम करनेवाला, शनैश्चर देखता हो तो अंगहीन, सूर्य देखता हो तो निर्धन और मङ्गल देखता हो तो वह राजा होता है ॥२॥

ज्ञात्युर्वीशजनाश्रयश्च तुरगे पापैः सदम्भः शठ-
श्चात्युर्वीशनरेन्द्रपण्डितधनी द्रव्योनभूपो मृगे ।
भूपो भूपसमोऽन्यदारनिरतः शेषैश्च कुम्भस्थिते
हास्यज्ञो नृपतिर्बुधश्च झषगे पापश्च पापेक्षिते ॥ ३ ॥

धनादिराशिस्थ बुधादिदृष्ट चन्द्रफल ।

धन राशि में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो वह अपनी जाति का पोषण करनेवाला, बृहस्पति देखता हो तो राजा, शुक्र देखता हो तो बहुत जनों का आश्रय और शनैश्चर, सूर्य, मंगल ये देखते हों तो वह पाखण्डी तथा शठ होता है। और ऐसे ही मकर राशि में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो वह राजाधिराज, बृहस्पति देखता हो तो राजा, शुक्र देखता हो तो पण्डित, शनि देखता हो तो धनवान्, सूर्य देखता हो तो द्रव्यहीन और मंगल देखता हो तो वह राजा होता है। और ऐसे ही कुम्भ राशि में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो वह राजा, बृहस्पति देखता हो तो राजा के सदृश, शुक्र देखता हो तो अन्यों की स्त्रियों में रति करनेवाला और शनि, सूर्य, मंगल ये देखते हों तो वह भी परस्त्रियों में रति करनेवाला होता है। और ऐसे ही मीन राशि में स्थित चन्द्रमा को बुध देखता हो तो वह हास्य का जाननेवाला, बृहस्पति देखता हो तो राजा, शुक्र देखता हो तो पण्डित और शनि, सूर्य, मंगल ये देखते हों तो वह पापी होता है ॥ ३ ॥

होरेशर्क्षदलाश्रितैः शुभकरो दृष्टः शशी तद्गत-
स्त्र्यंशे तत्प्रतिभिः सुहृद्भवनगैर्वा वीक्षितः शस्यते ।
यत्प्रोक्तं प्रतिराशिवीक्षणफलं तद्द्वादशांशे स्मृतं
सूर्याद्यैरवलोकितेऽपि शशिनि ज्ञेयं नवांशेष्वतः ॥ ४ ॥

होरास्थ ग्रहदृष्ट चन्द्रफल ।

जिस होरा में चन्द्रमा स्थित हो उस होरा के स्वामी की अन्य होरा में स्थित सम्पूर्ण ग्रहों करके चन्द्रमा देखा जाता हो तो वह शुभकारक होता है। यथा—मेष राशि के पूर्वार्द्ध में स्थित चन्द्रमा को तुला के पूर्वार्द्ध में स्थित सूर्य देखता हो तो वह शुभकारक है इससे विपरीत अशुभ है। ऐसे ही लग्न का भी शुभाशुभ जानना चाहिए।

द्रेष्काणस्थ ग्रहदृष्ट चन्द्रफल ।

जिस द्रेष्काण में चन्द्रमा स्थित हो उस द्रेष्काण का स्वामी शुभ ग्रह करके देखा जाता हो तो वह शुभकारक होता है । ऐसे ही लग्न का शुभाशुभ जानना चाहिए ।

मेषादिद्वादशांशस्थ चन्द्रोपरि दृष्टिफल ।

मेषादि प्रत्येक राशियों में रहते अन्यग्रहदृष्ट चन्द्रमा का जो (चन्द्रे भूपबुधावित्यादि) दृष्टिफल कहा है वही फल मेषादि द्वादशांशों में चन्द्रमा के रहते अन्यग्रहदृष्ट होने पर कहना चाहिए।

इसके अन्तर मेषादि नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्यादि ग्रहों के देखने का फल कहते हैं ।। ४ ।।

आरक्षिको वधरुचिः कुशलो नियुद्धे
भूपोऽर्थवान् कलहकृत् क्षितिजांशसंस्थे ।।
मूर्खोन्यदारनिरतः सुकविः सितांशे
सत्काव्यकृत्सुखपरोऽन्यकलत्रगश्च ।। ५ ।।

मेषादिनवांशस्थ चन्द्रोपरि दृष्टिफल ।

मेष के नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्य देखता हो तो वह नगर की रक्षा करनेवाला, मंगल देखता हो तो प्राणिघातक, बुध देखता हो तो बाहुयुद्ध में चतुर, बृहस्पति देखता हो तो राजा, शुक्र देखता हो तो धनवान् और शनैश्चर देखता हो तो वह झगड़ा करनेवाला होता है । और वृष तथा तुला के नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्य देखता हो तो वह मूर्ख, मंगल देखता हो तो परस्त्रियों में रति करनेवाला, बुध देखता हो तो उत्तम कवि, बृहस्पति देखता हो सुन्दर काव्य करनेवाला, शुक्र देखता हो तो सुखी और शनैश्चर देखता हो तो अन्य की स्त्रियों में रति करनेवाला होता है ।। ५ ।।

बौधे हि रङ्गचरचौरकवीन्द्रमन्त्री
गेयज्ञशिल्पनिपुणः शशिनि स्थितेंऽशे ।

स्वांशेऽल्पगात्रधनलुब्धतपस्विमुख्यः

स्त्रीपोष्यकृत्यनिरतश्च निरीक्ष्यमाणे ॥ ६ ॥

मिथुन और कन्या के नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्य देखता हो तो पहलवान, मंगल देखता हो तो चोर, बुध देखता हो तो कविश्रेष्ठ, बृहस्पति देखता हो तो मन्त्री, शुक्र देखता हो तो गाना जाननेवाला और शनैश्चर देखता हो तो चित्रकारी करने में निपुण होता है। और कर्क के नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्य देखता हो तो वह कृश देहवाला, मंगल देखता हो तो धन का लोभी, बुध देखता हो तो तपस्वी, बृहस्पति देखता हो तो प्रधान, शुक्र देखता हो तो स्त्रियों से पोषित और शनैश्चर देखता हो तो वह कार्यों में लगा रहनेवाला होता है॥ ६ ॥

सक्रोधो नरपतिसम्मतो निधीशः

सिंहांशे प्रभुरसुतोऽतिहिंस्रकर्मा ।

जीवांशे प्रथितबलो रणोपदेष्टा

हास्यज्ञः सचिवविकामवृद्धशीलः ॥ ७ ॥

सिंह के नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्य देखता हो तो वह क्रोधी, मंगल देखता हो तो राजप्रिय, बुध देखता हो तो गाड़े धन का मालिक, बृहस्पति देखता हो तो प्रभु, शुक्र देखता हो तो पुत्ररहित तथा शनैश्चर देखता हो तो वह बहुत प्राणियों का नाश करनेवाला होता है। धन और मीन के नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्य देखता हो तो वह प्रसिद्ध बली, मंगल देखता हो तो संग्राम का उपदेश करनेवाला, बुध देखता हो तो हास्य रस का जाननेवाला, बृहस्पति देखता हो तो मन्त्री, शुक्र देखता हो तो पुरुषत्वहीन और शनैश्चर देखता हो तो वह वृद्धों के सदृश स्वभाववाला होता है ॥ ८ ॥

अल्पापत्यो दुःखितः सत्यपि स्वे

मानासक्तः कर्मणि स्वेऽनुरक्तः ।

दुष्टस्त्रीष्टः कृपणश्चार्किभांशे
चन्द्रे भानौ तद्वदिन्द्वादिदृष्टे ॥ ८ ॥

मकर तथा कुम्भ के नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्य देखता हो तो वह थोड़े सन्तानवाला, मंगल देखता हो तो धन रहते भी दुःखी, बुध देखता हो तो अभिमानी, बृहस्पति देखता हो तो अपने कुल के योग्य कर्म करनेवाला, शुक्र देखता हो तो दुष्ट स्त्री का प्रिय और शनैश्चर देखता हो तो वह कृपण होता है। और जिस किसी राशि के जिस किसी नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्यादि के देखने का जो फल कहा है वैसे ही सूर्य को चन्द्रमा आदि के देखने से होता है। यथा—मेष, वृश्चिक के नवांश में स्थित सूर्य को चन्द्रमा देखता हो तो आरक्षिक; वैसे ही वृष, तुला के नवांश में मूर्ख; मिथुन, कन्या के नवांश में पहलवान; सिंह के नवांश में क्रोधी; धन, मीन के नवांश में प्रसिद्ध बलवाला; मकर, कुम्भ के नवांश में थोड़े सन्तानवाला और कर्क के नवांश में स्थित सूर्य को चन्द्रमा देखता हो तो हीनांग होता है इत्यादि ॥ ८ ॥

वर्गोत्तमस्वपरगेषु शुभं यदुक्तं
तत्पुष्टमध्यलघुताऽशुभमुत्क्रमेण ।
वीर्यान्वितोंऽशकपतिर्निरुणद्धि पूर्वं
राशीक्षणस्य फलमंशफलं ददाति ॥ ९ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके दृष्टिफलाऽध्याय
एकोनविंशः ॥ १९ ॥

उक्त नवांश का विशेष दृष्टिफल ।

उक्त नवांशों में से वर्गोत्तम में स्थित चन्द्रमा को सूर्यादि ग्रह देखते हों तो उक्त शुभ फल बहुत पुष्ट और आत्मनवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्यादि ग्रह देखते हों तो उक्त शुभ फल समान अर्थात् मध्यम और पर नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्यादि ग्रह

देखते हों तो उक्त शुभ फल लघु होता है। ऐसे ही उक्त अशुभ फल विपरीत होता है अर्थात् पर नवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्यादि ग्रह देखते हों तो उक्त अशुभ फल बहुत पुष्ट और आत्मनवांश में स्थित चन्द्रमा को सूर्यादि ग्रह देखते हों तो उक्त अशुभ फल समान और वर्गोत्तम में स्थित चन्द्रमा को सूर्यादि ग्रह देखते हों तो उक्त अशुभ फल लघु होता है। यदि उक्त नवांश का स्वामी बली हो तो पहिले राशि के दृष्टिफल को रोकता है और नवांश के दृष्टिफल को देता है और यदि नवांश-स्वामी बली न हो तो राशि-दृष्टि तथा नवांश-दृष्टि-फल ये दोनों फल होते हैं। परन्तु सूर्य में यह विचार नहीं है, केवल चन्द्रमा और इन दोनों ही में यह सूक्ष्म विचार है ॥ ९ ॥

दो० श्रीवराहकृतजातके, दृष्टिफलज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, गत उन्नीसाँध्याय ॥ १९ ॥

—::—

अथ भावफलाध्यायो विंशः ।

भावस्थितानां ग्रहाणां फलानि ।

शूरः स्तब्धो विकलनयनो निर्घृणोऽर्के तनुस्थे
मेषे सस्वस्तिमिरनयनः सिंहसंस्थे निशान्धः ।
नीचेऽन्धोऽस्वः शशिगृहगते बुद्बुदाक्षः पतङ्गे
भूरिद्रव्यो नृपहृतधनो वक्त्ररोगी द्वितीये ॥ १ ॥

लग्न तथा द्वितीयस्थ सूर्यफल ।

जिसके जन्मकालिक सूर्य लग्न में स्थित हो तो वह प्राणी शूरवीर, अधिक काल में कार्य करनेवाला, नेत्रहीन और निर्दय होता है। और यदि वही लग्नस्थ सूर्य मेष में स्थित हो तो धनवान् तथा नेत्ररोगी और सिंह में स्थित हो तो रात्र्यन्ध अर्थात् रतौंधीवाला और तुला में स्थित हो तो अन्ध तथा दरिद्र और कर्क में स्थित हो तो फूलीयुक्त नेत्रोंवाला होता है। और

दूसरे स्थान में सूर्य स्थित हो तो बहुत धनवान्, राजा करके ले लिये धनवाला तथा मुखरोगी होता है ।। १ ।।

मतिविक्रमवांस्तृतीयगेऽर्के
विसुखः पीडितमानसश्चतुर्थे ।
असुतो धनवर्जितस्त्रिकोणे
बलवाञ्छत्रुजितश्च शत्रुयाते ।। २ ।।

तृतीयादि स्थानस्थ सूर्यफल ।

जिसके जन्मकालिक सूर्य तीसरे स्थान में स्थित हो तो वह उत्तम बुद्धि और पराक्रमवाला तथा चतुर्थ स्थान में स्थित हो तो सदा दुःखित और मन से पीड़ित रहनेवाला और पाँचवें स्थान में स्थित हो तो सुतरहित तथा धनरहित और छठे स्थान में स्थित हो तो वह बलवान् और शत्रुओं को जीतनेवाला होता है ।। २ ।।

स्त्रीभिर्गतः परिभवं मदगे पतङ्गे
स्वल्पात्मजो निधनगे विकलेक्षणश्च ।
धर्मे सुतार्थसुखभाक् सुखशौर्यभाक् खे
लाभे प्रभूतधनवान् पतितस्तु रिष्फे ।। ३ ।।

इति रविचारः ।

जन्मकालिक सूर्य सातवें स्थान में स्थित हो तो वह स्त्रियों करके अनादर को प्राप्त होता है और आठवें स्थान में स्थित हो तो वह थोड़े सन्तानवाला तथा थोड़ी दृष्टिवाला और नवें स्थान में स्थित हो तो वह पुत्रोंवाला, धनवान् तथा सुखी और दशवें स्थान में स्थित हो तो वह सुखी तथा बली और ग्यारहवें स्थान में स्थित हो तो वह बहुत धनवान् और बारहवें स्थान में स्थित हो तो वह पतित होता है ।। ३ ।।

मूकोन्मत्तजडान्धहीनबधिरप्रेष्याः शशाङ्कोदये
स्वर्क्षाजोच्चगते धनी बहुसुतः सस्वः कुटुम्बी धने ।
हिंस्रो भ्रातृगते सुखे सतनये तत्प्रोक्तभावान्वितो
नैकारिर्मृदुकायवह्निमदनस्तीक्ष्णोऽलसश्चारिगे ॥ ४ ॥

लग्नादिभावस्थ चन्द्रफल ।

जिसके जन्मकालिक चन्द्रमा लग्न में स्थित हो तो वह गूँगा, सिड़ी, जड़, नेत्रहीन, नीच कर्म करनेवाला, बहिर या दास होता है और यदि वही लग्नस्थ चन्द्रमा कर्क में स्थित हो तो वह धनवान्, मेष में स्थित हो तो वह बहुत पुत्रोंवाला और वृष में स्थित हो तो वह धनवान् होता है। चन्द्रमा दूसरे स्थान में स्थित हो तो वह बहुत कुटुम्बवाला, तीसरे स्थान में स्थित हो तो प्राणियों की हिंसा करनेवाला, चौथे स्थान में स्थित हो तो सुखी, पाँचवें स्थान में स्थित हो तो पुत्रवान् तथा छठे स्थान में स्थित हो तो अनेक शत्रुओंवाला, कोमल शरीर, मन्दाग्नि, शीघ्र मैथुन करनेवाला, उग्र स्वभाव और आलसी होता है ॥ ४ ॥

ईर्ष्युस्तीव्रमदो मदे बहुमतिर्व्याध्यर्दितश्चाष्टमे
सौभाग्यात्मजमित्रबन्धुधनभाग्धर्मस्थिते शीतगौ ।
निष्पत्तिं समुपैति धर्मधनधीशौर्यैर्युतः कर्मगे
ख्यातो भावगुणान्वितो भवगते क्षुद्रोऽङ्गहीनो व्यये ॥ ५ ॥

इति चन्द्रचारः ।

जिसके जन्म के समय सातवें स्थान में चन्द्रमा स्थित हो तो वह परसन्तापी तथा अतिकामी और आठवें स्थान में स्थित हो तो चञ्चल बुद्धिवाला तथा व्याधि से सदा पीड़ित और नवें स्थान में स्थित हो तो सौभाग्य, पुत्र, मित्र, बान्धव तथा धन इन सब करके संयुक्त होता है। और दशवें स्थान में स्थित हो तो वह सर्वत्रसिद्धि प्राप्ति करनेवाला तथा धर्म, धन, बुद्धि और पराक्रमसंयुक्त

होता है । और ग्यारहवें स्थान में स्थित हो तो वह प्राणी प्रसिद्ध तथा सर्वत्र लाभ करनेवाला और बारहवें स्थान में चन्द्रमा स्थित हो तो नीच स्वभाववाला तथा अंगहीन होता है ।। ५ ।।

लग्ने कुजे क्षततनुर्धनगे कदन्नो
धर्मेऽघवान् दिनकरप्रतिमोऽन्यसंस्थः ।
विद्वान् धनी प्रखलपण्डितमन्त्र्यशत्रु-
धर्मज्ञविश्रुतगुणः परतोऽर्कवज्ज्ञे ।। ६ ।।

लग्नादिभावस्थ मंगलफल ।

जिसके जन्मकालिक मंगल लग्न में स्थित हो वह घावसंयुक्त शरीर, दूसरे स्थान में स्थित हो तो निन्दित अन्न खानेवाला और नवें स्थान में स्थित हो तो पापी होता है तथा शेष स्थानों में स्थित हो तो सूर्यवत् फल होता है अर्थात् तीसरे में बुद्धि तथा पराक्रम-संयुक्त, चौथे में सुखरहित तथा पीड़ित मन, पाँचवें में पुत्र-धन-रहित, छठें में बलवान् तथा शत्रुओं को जीतनेवाला, सातवें स्थान में स्त्रियों करके अनादृत, आठवें में थोड़े सन्तान-वाला, दशवें स्थान में सुखी तथा पराक्रमी, ग्यारहवें स्थान में बहुत धनवान् और बारहवें स्थान में पतित होता है ।।

लग्नादिभावस्थ बुधफल ।

जिसके जन्मकालिक बुध लग्न में स्थित हो तो वह विद्वान्, दूसरे में स्थित हो तो धनवान्, तीसरे स्थान में स्थित हो तो बहुत खल, चौथे स्थान में स्थित हो तो पण्डित, पाँचवें स्थान में स्थित हो तो मन्त्री, छठे स्थान में स्थित हो तो वह शत्रुरहित, सातवें स्थान में स्थित हो तो वह धर्मज्ञ और आठवें स्थान में स्थित हो तो वह प्रसिद्ध गुणवाला होता है और शेष स्थानों में स्थित हो तो सूर्यवत् फल होता है अर्थात् नवम स्थान में हो तो सुत, धन-सुखवाला, दशम स्थान में हो तो सुख तथा बल से युक्त, ग्यारहवें स्थान में हो तो बहुत धनवान् और बारहवें स्थान में स्थित हो तो वह पतित होता है ।। ६ ।।

विद्वान् सुवाक्यः कृपणः सुखी च
धीमानशत्रुः पितृतोऽधिकश्च ।
नीचस्तपस्वी सधनः सलाभः
खलश्च जीवे क्रमशो विलग्नात् ॥ ७ ॥

इति गुरुचारः ।

लग्नादिभावस्थ गुरुफल ।

जिसके जन्मकालिक बृहस्पति लग्न में स्थित हो वह विद्वान्, दूसरे में सुन्दर वचन बोलनेवाला, तीसरे में कृपण, चौथे में सुखी, पाँचवें में बुद्धिमान्, छठे में शत्रुरहित, सातवें में पिता से अधिक, आठवें में नीचकर्म करनेवाला, नवें स्थान में तपस्वी, दशवें में धनवान्, ग्यारहवें स्थान में लाभवाला और बारहवें स्थान में बृहस्पति हो तो वह खल होता है ॥ ७ ॥

स्मरनिपुणः सुखवांश्च विलग्ने
प्रियकलहोऽस्तगते सुरतेप्सुः ।
तनयगते सुखितो भृगुपुत्रे
गुरुवदतोऽन्यगृहे सधनोऽन्त्ये ॥ ८ ॥

इति शुक्रचारः ।

लग्नादिभावस्थ शुक्रफल ।

जिसके जन्मकालिक शुक्र लग्न में स्थित हो तो वह मैथुन में निपुण और सातवें स्थान में स्थित हो तो वह झगड़ा को प्यार करनेवाला तथा सदा मैथुनाभिलाषी होता है, पाँचवें स्थान में स्थित हो तो वह सुखी होता है, और शेष स्थानों में स्थित हो तो बृहस्पति की तरह उपर्युक्त शुक्र का भी फल होता है। और मीन राशि में कहीं भी शुक्र स्थित हो तो वह धनवान् होता है ॥ ८ ॥

अदृष्टार्थो रोगी मदनवशगोऽत्यन्तमलिनः
शिशुत्वे पीडार्तः सवितृसुतलग्नेत्यलसवाक् ।
गुरुस्वर्क्षोच्चस्थे नृपतिसदृशो ग्रामपुरपः
सुविद्वांश्चार्वङ्गो दिनकरसमोऽन्यत्र कथितः ॥ ९॥

इति शनिचारः ।

लग्नादि भावस्थ शनिफल ।

जिसके जन्मकालिक शनैश्चर लग्न में स्थित हो वह सदा दरिद्री, रोगी, कामाधीन, अत्यन्त मलिन, बाल्यावस्था में व्याधि से पीड़ित तथा अस्पष्ट बोलनेवाला होता है। और यदि वही लग्नस्थ शनैश्चर, धन, मीन, मकर, कुम्भ और तुला इनमें से किसी राशि में स्थित हो तो वह प्राणी राजा के सदृश, गाँव तथा पुरों का मालिक, उत्तम पण्डित और देखने में बहुत सुन्दर अंगोंवाला होता है। और लग्न को छोड़ शेष स्थानों में स्थित हो तो सूर्यवत् फलकारक होता है ॥ ९ ॥

सुहृदरिपरकीयस्वर्क्षतुङ्गस्थितानां
फलमनुपरिचिन्त्यं लग्नदेहादिभावैः ।
समुपचयविपत्ती सौम्यपापेषु सत्यः
कथयति विपरीतं रिष्फषष्ठाष्टमेषु ॥ १० ॥

लग्नादि द्वादशभावस्थ सर्वग्रह-विशेषफल ।

लग्नादि बारह भावों को देहादि मान, उन्हीं के द्वारा सुहृद्, वैरी उदासीन, स्वगृह और उच्च स्थानों में स्थित ग्रहों के फल का विचार करना चाहिए। यह अक्षरार्थ है। परन्तु इसका तात्पर्य यह है कि जो ग्रह अपने मित्र के स्थान में या अपने ही स्थान में अथवा अपने उच्चस्थान में स्थित होकर जिस भाव में स्थित हो उस भाव की वृद्धि करता है और अपने शत्रु के स्थान में या नीच स्थान में स्थित होकर जिस भाव में स्थित हो उस भाव की हानि करता है। यथा—लग्न

में सुहृदादिस्थ ग्रह स्थित हो तो देह की वृद्धि या हानि करता है। इसी तरह दूसरे में धन की, तीसरे में भाइयों की, चौथे में माता तथा सुखादि की, पाँचवें में पुत्रादि की, छठे में शत्रु इत्यादि की, सातवें में स्त्री इत्यादि की, आठवें में मृत्यु रोगादि की, नवें में धर्मादि की, दशवें में पिता इत्यादि की, ग्यारहवें में लाभादि की तथा बारहवें में खर्च इत्यादि की वृद्धि अथवा हानि करता है और परकीय अर्थात् उदासीन स्थान में स्थित होकर जिस भाव में स्थित हो उसकी वृद्धि तथा हानि नहीं करता है। किसी आचार्य* का मत है। परन्तु सत्याचार्य† कहते हैं कि जिस लग्नादि भाव में सौम्यग्रह स्थित हों उस भाव की वृद्धि और जिस लग्नादि भाव में पापग्रह स्थित हों उस भाव की हानि होती है। और छठे, आठवें और बारहवें स्थान में पूर्वोक्त से विपरीत अर्थात् सौम्य ग्रह स्थित हों तो शत्रु, मृत्यु, व्यय इनकी हानि और पापग्रह स्थित हों तो शत्रु, मृत्यु और व्यय की वृद्धि होती है॥ १०॥

उच्चत्रिकोणस्वसुहृच्छत्रुनीचगृहार्कगैः।
शुभं सम्पूर्णपादोनदलपादाल्पनिष्फलम्॥ ११॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके भावफलाध्यायो विंशः॥२०॥

ग्रहकुण्डली-विशेषफल।

ग्रहकुण्डली का फल दो प्रकार का है, शुभ और अशुभ। उसमें से जो ग्रह अपने उच्च स्थान में स्थित होता है वह सम्पूर्ण शुभ फल और जो ग्रह अपने मूल-त्रिकोण में स्थित होता है वह पूर्व से चतुर्थांश कम शुभ फल और जो ग्रह अपने स्थान में स्थित

---

* भगवान् गार्गिः—"नीचर्क्षरिपुगेहस्थो ग्रहो भावविनाशकृत्।
उदासीनगृहे मध्यो मित्रर्क्षस्वत्रिकोणगः॥
स्वोच्चगश्च ग्रहोऽवश्यं भाववृद्धिकरः स्मृतः।"

† सत्याचार्यः—"सौम्याः पुष्टिं पापस्तद्धानिं संश्रिता ग्रहाः कुर्युः।
मर्त्यादिषु निधनेऽन्त्ये षष्ठे च विपर्ययात्फलदाः॥"

होता है वह अर्द्ध शुभ फल और जो ग्रह अपने मित्र के स्थान में स्थित होता है वह चतुर्थांश शुभ फल और जो ग्रह अपने शत्रु के स्थान में स्थित होता है वह अष्ठमांश शुभ फल और जो ग्रह अपने नीच स्थान में होता है अथवा अस्त रहता है वह शून्य ही शुभ फल देता है तथा इससे विपरीत अशुभ फल देता है । यथा–अस्त ग्रह अथवा नीचस्थ ग्रह सम्पूर्ण अशुभ फल और शत्रु के स्थान में स्थित ग्रह पूर्व से चतुर्थांश हीन अशुभ फल और मित्र के स्थान में स्थित ग्रह अर्द्ध अशुभ फल और अपने स्थान में स्थित ग्रह चतुर्थांश अशुभ फल और मूल-त्रिकोणस्थ ग्रह अष्टमांश अशुभ फल और उच्च स्थान में स्थित ग्रह शून्य अशुभ फल को देता है ॥ ११ ॥

दो० । श्री वराहकृतजातके, भावफलज्ञानाय ।
रामरत्न भाषा, विगत बीसवाँध्याय ॥ २० ॥

अथाश्याध्याय एकविंशः ।

कुलसमकुलमुख्यबन्धुपूज्या
धनिसुखिभोगिनृपाः स्वभैकवृद्धया ।
परविभवसुहृत्स्वबन्धुपोष्या
गणपबलेशनृपाश्च मित्रभेषु ॥ १ ॥

स्वगृहस्थ ग्रहैकवृद्धिफल ।

जिसके जन्मकाल में एक ग्रह स्वगृह में स्थित हो तो वह प्राणी अपने कुलवालों के समान, दो ग्रह हों तो अपने कुल में प्रधान, तीन ग्रह हों तो अपने बन्धुओं से पूजनीय, चार ग्रह हों तो धनवान्, पाँच ग्रह हों तो सुखी, छह ग्रह हों तो भोगी तथा राजा के तुल्य और सात ग्रह स्वगृह में स्थित हों तो वह राजा होता है ।

मित्रगृहस्थ ग्रहैकवृद्धिफल ।

जिसके जन्मकाल में एक ग्रह अपने मित्र के स्थान में स्थित हो तो वह अन्य के धन से जीविका करनेवाला, दो ग्रह हों तो

अपने मित्रों से जीविका पानेवाला, तीन ग्रह हों तो अपनी जाति-वालों से या अपने ही से जीविका पानेवाला, चार ग्रह हों तो अपने बन्धुओं से जीविका पानेवाला, पाँच ग्रह हों तो बहुत प्राणियों का स्वामी, छह ग्रह हों तो सेनापति और जो सात ग्रह मित्रगृही हों तो वह राजा होता है ।। १ ।।

जनयति नृपमेकोऽप्युच्चगो मित्रदृष्टः
प्रचुरधनसमेतं मित्रयोगाच्च सिद्धम् ।
विधनविसुखमूढव्याधितो बन्धतप्तो
वधदुरितसमेतः शत्रुनीचर्क्षगेषु ।। २ ।।

अथमित्रदृष्ट एकोच्चस्थ ग्रहफल ।

जिसके जन्मकाल में अपने मित्र से देखा हुआ एक भी ग्रह अपने उच्चस्थान में स्थित हो तो वह राजा होता है और ऐसे ही मित्रसंयुक्त होकर एक भी अपने उच्च स्थान में स्थित हो तो वह बहुत धनवान् सिद्ध तथा सर्वत्र पूजित होता है ।।

नीचादिस्थ ग्रहैकवृद्धिफल ।

जिसके जन्मकाल में अपने नीच या शत्रु के स्थान में एक भी कोई ग्रह स्थित हो तो वह दरिद्री, दो ग्रह हों तो दुःखित, तीन ग्रह हों तो मूढ़, चार ग्रह हों तो व्याधि से पीड़ित, पाँच ग्रह हों तो बन्धन से बहुत दुःखी, छह ग्रह हों तो दुःखी और सात ग्रह अपने नीच या शत्रु के स्थान में स्थित हों तो वह फाँसी आदि दुःख से संयुक्त होता है ।। २ ।।

न कुम्भलग्नं शुभमाह सत्यो
न भागभेदाद्यवना वदन्ति ।
कस्यांशभेदो न तथास्ति राशे-
रतिप्रसङ्गस्त्विवति विष्णुगुप्तः ।। ३ ।।

कुम्भलग्नजातफल ।

जन्मकालिक कुम्भ लग्न शुभ नहीं है, यह सत्याचार्य* कहते हैं। और यवन† कहते हैं कि कुम्भ का द्वादशांश जन्मकाल में शुभ नहीं है और इन्हीं यवनों के मत पर विष्णुगुप्त‡ कहते हैं कि ऐसी कौन राशि है जिसमें कुम्भ का द्वादशांश नहीं है और जो कुम्भ का द्वादशांश निन्दित हो तो सब लग्न का कहा हुआ फल निरर्थक ही हो जायगा, यही मुख्य दोष है। इसलिए सत्याचार्य का कहा हुआ कुम्भ लग्न ही निषिद्ध है किन्तु कुम्भ का द्वादशांश निन्दित नहीं है ।। ३ ।।

यातेष्वसत्स्वसमभेषु दिनेशहोरां
ख्यातो महोद्यमबलार्थयुतोऽतितेजाः ।
चान्द्रीं शुभेषु युजि मार्दवकान्तिसौख्य-
सौभाग्यधीमधुरवाक्ययुतः प्रजातः ।। ४ ।।

होरास्थ ग्रहफल ।

जिसके जन्मकाल में विषमराशि सम्बन्धी सूर्य की होरा में पापग्रह स्थित हों तो वह प्राणी सर्वत्र प्रसिद्ध, बड़ा उद्यमी, बलवान्, धनवान् और अतिशय तेजस्वी होता है। और समराशि-सम्बन्धी चन्द्रमा की होरा में शुभ ग्रह स्थित हों तो वह प्राणी कोमल स्वभाववाला, उत्तम कान्तिवाला, सौख्यवाला, सुन्दर भाग्यवाला, बुद्धिमान् और मीठे वचन बोलनेवाला होता है ।। ४ ।।

तास्वेव होरास्वपरर्क्षगेषु
ज्ञेया नराः पूर्वगुणेषु मध्याः ।

---

* सत्यः—"कुम्भविलग्ने जातो भवति नरो दुःखशोकसंतप्तः ।"

† यवनमतेन श्रुतिकीर्तिनोक्तम्—"सर्वस्मिल्लग्नगते कुम्भद्विरसांशको यदा भवति ।
राशौ न तदा सुखितः परान्नभोजी भवेत्पुरुषः ।"

‡ विष्णुगुप्तः—"कुम्भद्वादशभागो लग्नगतो न प्रशस्यते यवनैः ।
यद्येवं सर्वेषां लग्नगतानामनिष्टफलता स्यात् ।।
घटयोगाद्राशीनां न मतं तत्सर्वशास्त्रकाराणाम् ।
तस्मात्कुम्भविलग्नो जन्मन्यशुभो न तद्भागः ।"

व्यत्यस्तहोराभवनस्थितेषु

मर्त्या भवन्त्युक्तगुणैर्विहीनाः ।। ५ ।।

समराशि-सम्बन्धी सूर्य की होरा में पापग्रह स्थित हों तो वह प्राणी पूर्वोक्त ख्याति आदि मध्यम गुणवाला होता है। और विषम राशि-सम्बन्धी चन्द्रमा की होरा में शुभ ग्रह स्थित हों तो पूर्वोक्त मार्दवादि मध्यम गुणवाला होता है। इससे विपरीत हो तो पूर्वोक्त गुणहीन होता है। यथा—समराशि-सम्बन्धी चन्द्रमा की होरा में पापग्रह स्थित हों तो पूर्वोक्त ख्याति आदि गुणहीन होता है और विषमराशि-सम्बन्धी सूर्य की होरा में शुभ ग्रह स्थित हों तो वह प्राणी पूर्वोक्त मार्दवादि गुणहीन होता है ।। ५ ।।

कल्याणरूपगुणमात्मसुहृद्दृकाणे

चन्द्रोऽन्यगस्तदधिनाथगुणं करोति ।

व्यालोद्यतायुधचतुश्चरणाण्डजेषु

तीक्ष्णोऽतिहिंस्रगुरुतल्परतोऽटनश्च ।। ६ ।।

द्रेष्काणस्थ चन्द्रफल ।

जन्मकालिक चन्द्रमा अपने अथवा मित्र के द्रेष्काण में स्थित हो तो उत्पन्न हुए प्राणी को उत्तम रूप तथा गुणवाला करता है। और जो अन्यत्र स्थित हो तो उस द्रेष्काण के स्वामी को गुणवाला करता है अर्थात् उस द्रेष्काण का स्वामी चन्द्रमा का मध्यम हो तो मध्यम रूप गुणवाला अथवा चन्द्रमा का शत्रु हो तो रूप गुण-हीन करता है। और यदि चन्द्रमा व्यालनामक द्रेष्काण में स्थित हो तो तत्काल में उत्पन्न हुआ प्राणी अति तीक्ष्ण स्वभाववाला होता है। और उद्यतायुधनामक द्रेष्काण में स्थित हो तो बहुत प्राणियों का नाश करनेवाला होता है। और चतुष्पदनामक द्रेष्काण में स्थित हो तो गुरुस्त्रीगमन करनेवाला होता है तथा पक्षिद्रेष्काण में स्थित हो तो बहुत घूमनेवाला होता है।। ६ ।।

स्तेनो भोक्ता पण्डिताढ्यो नरेन्द्रः
क्लीबःशूरो विष्टिकृद्दासवृत्तिः ।
पापो हिंस्त्रोऽभीश्च वर्गोत्तमांशे-
ष्वेषामीशा राशिवद्द्वादशांशैः ॥ ७ ॥

मेषादिनवांशजातस्वरूप ।

मेष राशि को छोड़, अन्यत्र मेष के नवांश में उत्पन्न प्राणी चोर और वृष राशि को छोड़ अन्यत्र वृष को नवांश में उत्पन्न प्राणी भोगी, मिथुन के नवांश में पण्डित, कर्क के नवांश में धनवान्, सिंह के नवांश में राजा, कन्या के नवांश में हिजरा, तुला के नवांश में शूर, वृश्चिक के नवांश में भार-वहन करनेवाला, धन के नवांश में दासवृत्ति करनेवाला, मकर के नवांश में पापी, कुम्भ के नवांश में प्राणघात करनेवाला और ऐसे ही मीन राशि को छोड़ कर मीन के नवांश में निर्भय होता है तथा इन्हीं मेषादि राशियों के वर्गोत्तमांश में जिसका जन्म हो वह उक्त वस्तुओं का स्वामी होता है । यथा—मेष राशि लग्न में हो और मेष ही का नवांश हो तो तत्काल में उत्पन्न प्राणी चोरों का स्वामी और वृष राशि लग्न में हो और वृष ही का नवांश हो तो भोगियों का स्वामी तथा मिथुन राशि लग्न में हो और मिथुन ही का नवांश हो तो पण्डितों का स्वामी होता है । इसी तरह कर्कादिकों को जानना चाहिए। और जो फल चन्द्रमा की राशि का कहा गया है वही द्वादशांश का भी फल कहना चाहिए ॥ ७ ॥

जायान्वितो बलविभूषणसत्त्वयुक्त-
स्तेजोऽतिसाहसयुतश्च कुजे स्वभागे ।
रोगी मृतस्वयुवतिर्विषमोऽन्यदारो
दुःखी परिच्छदयुतो मलिनोऽर्कपुत्रे ॥ ८ ॥

त्रिशांशफल ।

जिसके जन्मकाल में मङ्गल अपने त्रिशांश में स्थित हो तो वह

प्राणी स्त्री, बल, विभूषण और धैर्य से संयुक्त तथा तेजस्वी और साहसी होता है। और शनैश्चर अपने त्रिशांश में स्थित हो तो वह रोगी, मृतभार्य, क्रूरस्वभाव, अन्य की स्त्रियों में गमन करनेवाला, दुःखी, घर-परिवारसंयुक्त तथा मलिन रहनेवाला होता है ॥ ८ ॥

स्वांशे गुरौ धनयशः सुखबुद्धियुक्ता-
स्तेजस्विपूज्यनिरुगुद्यमभोगवन्तः ।
मेधाकलाकपटकाव्यविवादशिल्प-
शास्त्रार्थसाहसयुताः शशिजेऽतिमान्याः ॥ ९ ॥

बृहस्पति अपने त्रिशांश के स्थित हो तो वह धनवान्, यशस्वी, सुखी, बुद्धिमान्, तेजस्वी, पूजा के योग्य, नीरोग, उद्यमी तथा भोगी होता है और बुध अपने त्रिशांश में स्थित हो तो बुद्धिमान्, गाना बजाना आदि जाननेवाला, कपटी, कवि, विवादी, थवई का काम करनेवाला, शास्त्र जाननेवाला, धनवान्, साहसी और लोगों का मान्य होता है ॥ ९ ॥

स्वे त्रिशांशे बहुसुतसुखारोग्यभाग्यार्थरूपः
शुक्रे तीक्ष्णः सुललिततनुः सुप्रकीर्णेन्द्रियश्च ।
शूरस्तब्धौ विषमवधकौ सद्गुणाढ्यौ सुखिज्ञौ
चार्वङ्गेष्टौ रविशशियुतेष्वारपूर्वांशकेषु ॥ १० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके आश्रयाध्याय एकविंशः॥२१॥

शुक्र अपने त्रिशांश में स्थित हो तो वह बहुत पुत्रोंवाला, आरोग्य, भाग्यवाला, धनवान्, रूपवान्, तीक्ष्ण वभास्ववाला, उत्तम देहवाला तथा बहुत स्त्रियों में गमन करनेवाला होता है। और मंगल के त्रिशांश में सूर्य स्थित हो तो वह शूरवीर तथा चन्द्रमा स्थित हो तो स्तब्ध अर्थात् कार्य करने में शिथिल होता है। और शनैश्चर, के त्रिशांश में सूर्य स्थित हो तो विषम स्वभाववाला तथा चन्द्रमा

स्थित हो तो प्राणिघाती होता है। और बृहस्पति के त्रिंशांश में सूर्य स्थित हो तो सुन्दर गुणोंवाला तथा चन्द्रमा स्थित हो तो धनवान् होता है। और बुध के त्रिंशांश में सूर्य स्थित हो तो सुखी तथा चन्द्रमा स्थित हो तो पण्डित होता है। और शुक्र के त्रिंशांश में सूर्य स्थित हो तो सुन्दर अंगोंवाला तथा चन्द्रमा स्थित हो तो सबको प्रिय होता है ॥ १० ॥

दो० । श्रीवराहकृतजातके, आश्रययोगफलाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत इकीसाँध्याय ॥ २१ ॥

अथ प्रकीर्णकाध्यायो द्वाविंशः ।

स्वर्क्षतुङ्गमूलत्रिकोणगाः कण्टकेषु यावन्त आश्रिताः ।
सर्व एव तेऽन्योन्यकारकाः कर्मगस्तु तेषां विशेषतः ॥ १ ॥

कारकसंज्ञकग्रह ।

जो ग्रह स्वस्थान, स्वोच्च तथा स्वमूल त्रिकोण में स्थित होकर लग्नादि केन्द्र में स्थित हो और ऐसे ही स्वस्थानादि में स्थित अन्य ग्रह भी केन्द्र में स्थित हो, तो वे दोनो परस्पर कारकसंज्ञक होते हैं। इसी रीति से जितने ग्रह स्थित हों वे सब परस्पर कारक-संज्ञक होते हैं। परन्तु इनमें यह विशेष है कि जो ग्रह जिसके दशम स्थान में स्थित हो, वह उसकी अपेक्षा विशेष अर्थात् बलकारक होता है। (यह*कारक-संज्ञा यात्रा में उपयोगिनी होती है) ॥ १ ॥

कर्कटोदयगते यथोडुपे स्वोच्चगाः कुजयमार्कसूरयः ।
कारका निगदिताः परस्परं लग्नगस्य सकलोऽम्बरांबुगः ॥ २ ॥

उक्तार्थोदाहरण ।

यथा—कर्क जन्मलग्न चंद्रसंयुक्त है और मङ्गल, शनैश्चर, सूर्य

---

* यथा—"रिक्तोपहतदशायां जन्मोदयनाथशत्रुपाके च ।
स्वदशेशकारकदशासंश्रयणीयो नरेन्द्रपतिः ॥"

और बृहस्पति ये चारों ग्रह अपने उच्च स्थानों में स्थित हैं तो ये परस्पर कारकसंज्ञक हुए ।

कारकोदाहरण कुण्डली

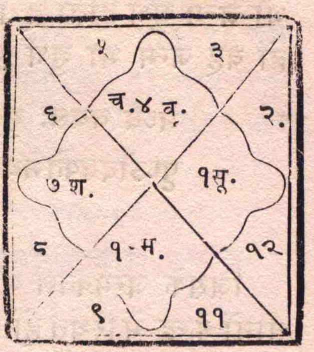

इस उदाहरण के कहने से यह जानना चाहिए कि लग्नादि केन्द्रों को छोड़कर स्वस्थान-स्वोच्चादि में स्थित होकर परस्पर केन्द्र में भी स्थित हों, तो वे ग्रह कारकसंज्ञक नहीं होते हैं और जन्मलग्नस्थ ग्रह से दशवें तथा चौथे स्थान में स्थित ग्रह स्वस्थान या स्वोच्चादि-रहित होकर भी लग्नस्थग्रह के कारक होते हैं । परन्तु लग्नस्थ ग्रह उनकी अपेक्षा कारकसंज्ञक नहीं होता है ।। २ ।।

स्वत्रिकोणोच्चगो हेतुरन्योन्यं यदि कर्मगः ।
सुहृत्सद्‌गुणसम्पन्नः कारकश्चापि स स्मृतः ।। ३ ।।

कारकान्तर ।

लग्नादि केन्द्रों को छोड़, अन्यत्र स्वस्थान या स्वमूलत्रिकोण अथवा स्वोच्चस्थान में ग्रह कारकसंज्ञक होता है, यदि इससे दशवें स्थान में मित्रभूत या स्वोच्चादिस्थित कोई ग्रह स्थित हो और जो कि दशवें स्थान में है वह भी स्वोच्चादि में स्थित हो तो कारकसंज्ञक होता है । और कोई (सुहृत्सद्‌गुणसम्पन्नः) इसका अधिमित्र अर्थ करते हैं अर्थात् स्वोच्चादिस्थ ग्रह के दशवें स्थान में स्वोच्चादिस्थ ग्रह का अधिमित्र ग्रह स्थित हो तो स्वोच्चादिस्थ ग्रह कारकसंज्ञक होता है और वह दशमस्थ अधिमित्र भी कारकसंज्ञक होता है।।३।।

शुभं वर्गोत्तमे जन्म वेशिस्थाने च सद्‌ग्रहे ।
अशून्येषु च केन्द्रेषु कारकाख्यग्रहेषु च ।। ४ ।।

कारकफल ।

जो वर्गोत्तम लग्न के नवांश में जन्म हो तो वह शुभ होता है । और जन्मकाल में सूर्य जिस राशि में स्थित हो, उससे दूसरी

राशि में जो शुभग्रह स्थित हों तो वह भी जन्म शुभ होता है। और जिस जन्मकाल में लग्नादि सब केन्द्रस्थान ग्रहों करके अशून्य हों अर्थात् संयुक्त हों, विशेष करके शुभग्रहों*से युक्त हों तो भी जन्म शुभ होता है। और जिस जन्मकाल में कारकसंज्ञक ग्रह हों वह जन्म भी शुभ होता है ॥ ४ ॥

मध्ये वयसः सुखप्रदाः केन्द्रस्था गुरुजन्म†लग्नपाः ।
पृष्ठोदयकोभयर्क्षगास्त्वन्त्यान्तः प्रथमेषु पाकदाः ॥ ५ ॥

यौवनसुखयोग ।

जिसके जन्मकाल में बृहस्पति, जन्मराशीश तथा जन्मलग्नेश ये तीनों केन्द्र में स्थित हों तो वह प्राणी युवावस्था में सुखी होता है ॥

दशाफलज्ञान ।

दशाप्रवेशकाल में दशापति पृष्ठोदय अर्थात् मेष, वृष, धन और मकर इन राशियों में स्थित हो तो दशा के अन्तिम तृतीयांशकाल में और उभयोदय अर्थात् मीनराशि में स्थित हो तो दशा के मध्य तृतीयांशकाल में और शीर्षोदय अर्थात् मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुम्भ इनमें स्थित हो तो प्रथम तृतीयांशकाल में फलों का देनेवाला होता है ॥ ५ ॥

दिनकररुधिरौ प्रवेशकाले
गुरुभृगुजौ भवनस्य मध्ययातौ ।
रविसुतशशिनौ विनिर्गमस्थौ
शशितनयः फलदस्तु सर्वकालम् ॥ ६ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके प्रकीर्णकाध्यायो द्वाविंशः ॥ २२ ॥

---

*यथा—"एकस्मिन्नपि केन्द्रे यदि सौम्यो न ग्रहोऽस्ति यात्रायाम् ।
जन्मन्यथवा कर्मणि न तच्छ भं प्राहुराचार्याः ॥"

† यवनेश्वरः—"जन्माधिपो लग्नपतिश्च येषां चतुष्टये स्याद्बलवान् गुरुर्वा ।
चतुर्षु होरादिषु, संगतः स्याच्चतुर्वयःकालफलप्रदः स्यात् ।"

अष्टकवर्गफल का ज्ञान ।

गोचरमार्ग से चलते हुए सूर्य और मंगल जिस राशि में आकर जिस शुभ या अशुभ अष्टवर्ग फल को देते हों तो उस फल को उस राशि के प्रथम तृतीयभाग में रहते हैं । और बृहस्पति या शुक्र हों तो मध्यम तृतीयभाग में रहते देते हैं। शनैश्चर या चन्द्रमा हों तो अंतिम तृतीयभाग में रहते देते हैं और बुध हो तो सर्वदा फल देता है ॥ ६ ॥

दो० श्रीवराहकृतजातके, फलप्रकीर्णज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत बाइसाँध्याय ॥ २२ ॥

—:०:—

अथानिष्टाध्यायस्त्रयोविंशः ।

लग्नात्पुत्रकलत्रभे शुभपतिप्राप्तेऽथवालोकिते
चन्द्राद्वा यदि संपदस्तिहि तयोर्ज्ञेयोऽन्यथासम्भवः ।
पाथोनोदयगे रवौ रविसुतो मीनस्थितो दारहा
पुत्रस्थानगतश्च पुत्रमरणं पुत्रोऽवनेर्यच्छति ॥ १ ॥

जिसके जन्मकाल में लग्न या चन्द्रमा से पाँचवाँ स्थान शुभग्रह या अपने स्वामी करके युत अथवा दृष्ट हो तो उसके पुत्रों की सम्पत्ति* होती है और इससे विपरीत अर्थात् युत अथवा दृष्ट न हो तो पुत्रों की प्राप्ति नहीं होती है। और ऐसे ही लग्न तथा चन्द्रमा से सातवाँ स्थान शुभग्रह या अपने स्वामी करके युत अथवा दृष्ट हो तो स्त्री की प्राप्ति† होती है, अन्यथा नहीं । यदि कन्याराशि लग्न

---

* सारावल्याम्—"शुभभवनमथ शुभयुतं शुभदृष्टं वा सुतर्क्षमिह येषाम् ।
तेषां प्रभवः पुंसां भवत्यवश्यं न विपरीतम् ॥"

† केचिद्विशेषं वर्णयन्ति—"शुक्रेन्दुजीवशशिजैः सकलैस्त्रिभिश्च
द्वाभ्यां कलत्रभवने च तथैककेन ।
एषां गृहेऽपि च गतेऽथ विलोकिते वा
सन्ति स्त्रियो भवनवर्गखगस्वभावाः ॥"

में हो तथा उसी में सूर्य स्थित हो और मीन राशि में शनैश्चर हो तो वह स्त्रियों का मारक होता है और ऐसे ही लग्नस्थ कन्या राशि में सूर्य और पंचमस्थ मकरराशि में मंगल हो तो वह पुत्रों का मारक होता है ॥ १ ॥

उग्रग्रहैः* सितचतुरस्रसंस्थितै-
र्मध्यस्थिते भृगुतनयेऽथवोग्रयोः ।
सौम्यग्रहैरसहितसंनिरीक्षिते
जायावधो दहननिपातपाशजः ॥ २ ॥

त्रिप्रकारकस्त्रीमरणयोग ।

जिसके जन्मकाल में शुक्र के स्थान से चौथे और आठवें स्थान में उग्रग्रह अर्थात् सूर्य, मंगल और शनैश्चर स्थित हों तो उसकी स्त्री अग्नि में जलकर मर जाती है और दो पापग्रहों के मध्य में शुक्र स्थित हों तो उसकी स्त्री कहीं ऊँचे से गिरकर मर जाती है और शुभग्रहों में से किसी करके युत अथवा दृष्ट शुक्र न हो तो उसकी स्त्री आप ही फाँसी देकर मर जाती है ॥ २ ॥

लग्नाद्व्ययारिगतयोः शशितिग्मरश्म्योः
पत्न्या सहैकनयनस्य वदन्ति जन्म ।
† द्यूनस्थयोर्नवमपञ्चमसंस्थयोर्वा
शुक्रार्कयोर्विकलदारमुशन्ति जातम् ॥ ३ ॥

---

* भगवान् गार्गिः—"चतुर्थाष्टमगैः शुक्रात्सौराराकैर्हुताशनात् ।
तेषां द्वयोस्तु मध्यस्थे तथा शुक्रे निपातजः ॥
शुक्रे सद्योगदृग्घीने पाशाद्भार्यावधो भवेत् ।"

† भगवान् गार्गिः—"पञ्चमे नवमे द्यूने समेतौ सितभास्करौ ।
यस्य स्यातां भवेदभार्या तस्यैकाङ्गविवर्जिता ॥"

अथ पुरुषस्त्रीकाण-हीनाङ्गयोग ।

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा और सूर्य लग्न से बारहवें तथा छठे स्थान में स्थित हों अर्थात् इन दोनों में से कोई छठे और कोई बारहवें स्थान में स्थित हो तो वह अपनी स्त्री के सहित काना होता है अर्थात् वे स्त्री पुरुष दोनों काने होते हैं और शुक्र तथा सूर्य ये दोनों मिले हुए लग्न से सातवें, नवें अथवा पाँचवें स्थान में स्थित हों तो वह अंगों करके हीन स्त्रीवाला होता है ।। ३ ।।

कोणोदये भृगुतनयेऽस्तचक्रसन्धौ
बन्ध्यापतिर्यदि न सुतर्क्षमिष्टयुक्तम् ।
पापग्रहैर्व्ययमदलग्नराशिसंस्थैः
क्षीणे शशिन्यसुतकलत्रजन्मधीस्थे ।। ४ ।।

बन्ध्यापतियोग ।

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर लग्न में स्थित हो और शुक्र लग्न से सातवें स्थान में रहते हुए कर्क, वृश्चिक और मीन इनके अन्तिम नवांश में स्थित हो और यदि लग्न से पाँचवाँ स्थान शुभग्रहयुक्त न हो तो वह प्राणी बन्ध्या स्त्री का स्वामी होता है अर्थात् उसकी विवाहिता स्त्री के लड़का नहीं होता है ।।

अपुत्रकलत्रयोग ।

जिसके जन्मकाल में पापग्रह बारहवें, सातवें या लग्न में स्थित हों और क्षीण चन्द्रमा लग्न से पाँचवें स्थान में स्थित हो तो वह प्राणी पुत्र तथा स्त्रीरहित होता है ।। ४ ।।

असितकुजयोर्वर्गेऽस्तस्थे सिते तदवेक्षिते
परयुवतिगस्तौ चेत्सेन्दुस्त्रिया सह पुंश्चलः ।
भृगुजशशिनोरस्तेऽभार्यो नरो विसुतोऽपि वा
परिणततनू नृस्त्र्योर्दृष्टौ शुभैः प्रमदापती ।।५।।

परस्त्रीगमनयोग ।

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर तथा मंगल के नवांशादि वर्ग में स्थित होकर शुक्र लग्न से सातवें स्थान में स्थित हो और शनैश्चर तथा मंगल इनमें से किसी करके दृष्ट हो तो वह प्राणी परस्त्रियों में गमन करनेवाला होता है। और यदि शनैश्चर तथा मंगल के वर्ग में स्थित शुक्र सातवें स्थान में स्थित हो और शनैश्चर तथा मंगल इनमें से किसी करके दृष्ट हों और शनि, मंगल एकत्र रहकर चन्द्र-संयुक्त हों तो वह प्राणी स्त्रीसहित पुँश्चल अर्थात् पुरुष परस्त्रीगामी और उसकी स्त्री परपुरुषगामिनी होती है।

अभार्यासुतयोग ।

जिसके जन्मकाल में कहीं भी एकत्र स्थित शुक्र तथा चन्द्रमा से सातवें स्थान में शनैश्चर या मंगल हों तो वह स्त्रीहीन या पुत्रहीन होता है ॥

वृद्धस्त्रीपुरुषयोग ।

जिसके जन्मकाल में कहीं एकत्र स्थित पुरुषसंज्ञक और स्त्री संज्ञक ग्रहों से सातवें स्थान में शुभग्रहों करके दृष्ट शनैश्चर और मंगल हों तो वह वृद्धावस्था में वृद्धा स्त्री को प्राप्त होता है ॥ ५॥

वंशच्छेत्ता खमदसुखगैश्चन्द्रदैत्येज्यपापैः
शिल्पी त्र्यंशे शशिसुतयुते केन्द्रसंस्थार्किदृष्टे ।
दास्यां जातो दितिसुतगुरौ रिष्कगे सौरभागे
नीचोऽर्केन्द्वोर्मदनगतयोर्दृष्टयोः सूर्यजेन ॥ ६॥

वंशच्छेदयोग ।

जिसके जन्मकाल में दशवें, सातवें और चौथे इन स्थानों में क्रम से चन्द्रमा और शुक्र तथा सूर्य, मंगल और शनैश्चर ये ग्रह स्थित हों अर्थात् दशवें में चन्द्रमा, सातवें में शुक्र तथा चौथे में सूर्य, मंगल और शनैश्चर हों तो वह वंश का नाशक होता है।

शिल्पीयोग।

जिसके जन्मकाल में जिस राशिसम्बन्धी द्रेष्काण में बुध स्थित हो वह राशि केन्द्र में स्थित शनैश्चर करके दृष्ट हो तो वह शिल्पी (चित्र-कर्म आदि से जीविका करनेवाला) होता है।

दासीजातज्ञान।

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर के नवांश में स्थित होकर शुक्र लग्न से बारहवें स्थान में स्थित हो तो वह दासी का पुत्र होता है।

नीचकर्मकृद्योग।

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर करके दृष्ट सूर्य और चन्द्रमा ये दोनों लग्न से सातवें स्थान में स्थित हों तो वह नीच कर्म करनेवाला होता है ॥ ६ ॥

पापालोकितयोः सितावनिजयोरस्तस्थयोर्वातरुक
चन्द्रे कर्कटवृश्चिकांशकगते पापैर्युते गुह्यरुक्।
श्वित्री रिष्फधनस्थयोरशुभयोश्चन्द्रोदयेऽस्ते रवौ
चन्द्रे खेऽवनिजेऽस्तगे च विकलो यद्यर्कजो वेशिगः ॥ ७ ॥

वातरोगयोग।

जिसके जन्मकाल में पापग्रहों करके दृष्ट शुक्र और मंगल लग्न से सातवें स्थान में स्थित हों तो वह वातरोगी होता है और कोई वार्द्धरुक् अर्थात् बढ़े हुए अण्डकोशवाला कहते हैं।

गुह्यरोगयोग।

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा वृश्चिक या कर्क के नवांश में स्थित होकर पापग्रहों से युक्त हो तो वह गुप्तरोगी होता है।

श्वित्रीयोग।

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर और मंगल ये दोनों बारहवें या दूसरे स्थान में स्थित हों और चन्द्रमा लग्न में स्थित हो तथा सातवें स्थान में सूर्य स्थित हो तो वह श्वित्री अर्थात् सफेद कोढ़वाला होता है।

हीनांगयोग ।

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा दशवें, मंगल सातवें और शनैश्चर सूर्य से दूसरे स्थान में स्थित हो तो वह हीनांग होता है ।। ७ ।।

अन्तः शशिन्यशुभयोर्मृगगे पतङ्गे
श्वासक्षयप्लिहकविद्रधिगुल्मभाजः ।
शोषी परस्परगृहांशगयो रवीन्द्वोः
क्षेत्रेऽथवा युगपदेकगयोः कृशो वा ।। ८ ।।

श्वासक्षयादिरोगयोग ।

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर और मंगल इन दोनों के बीच में चन्द्रमा स्थित हो और मकर में सूर्य स्थित हो तो वह कास-श्वास, क्षयी, पिलही, विद्रधि और गुल्म इन रोगों से संयुक्त होता है । विद्रधि एक प्रकार के चौड़े तथा लम्बे फोड़े का नाम है और गुल्म रुधिर की गाँठका नाम है । यदि सूर्य और चन्द्रमा ये परस्पर गृह तथा नवांश में स्थित हों अर्थात् सूर्य के स्थान या नवांश में चन्द्रमा स्थित हो और चन्द्रमा के स्थान या नवांश में सूर्य स्थित हो तो वह क्षयीरोग संयुक्त होता है अथवा एक काल में एक स्थान में अर्थात् सिंह ही में या कर्क ही में दोनों सूर्य और चन्द्रमा स्थित हों तो वह क्षयीयुत अथवा कृश शरीरवाला होता है ।। ८ ।।

चन्द्रेऽशिवमध्यझषकर्किमृगाजभागे
कुष्ठी समन्दरुधिरे तदवेक्षिते वा ।
यातैस्त्रिकोणमलिकर्किवृषैर्मृगे च
कुष्ठी च पापसहितैरवलोकितैर्वा ।। ९ ।।

कुष्ठयोग ।

जिसके जन्मकाल में धनराशि के पाँचवें नवांश में स्थित चन्द्रमा, शनैश्चर और मंगल इन दोनों से अथवा एक से संयुक्त हो या दृष्ट हो तो वह कुष्ठी होता है अथवा किसी राशि में मीन, कर्क, मकर और

मेष इनके नवांशों में कहीं स्थित होकर चन्द्रमा, शनैश्चर या मंगल से युत अथवा दृष्ट हो तो भी कुष्ठी होता है। यदि यही चन्द्रमा शुभग्रह दृष्ट हो तो कुष्ठी नहीं, किंतु *कण्डू रोगवाला होता है और यदि वृश्चिक, कर्क, वृष और मकर इन राशियों में से कोई पाँचवें या नवें स्थान में स्थित हो और वह पापग्रहों से युत अथवा दृष्ट हो तो भी वह कुष्ठी होता है ॥ ९ ॥

निधनारिधनव्ययस्थिता
रविचन्द्रारयमा यथा तथा ।
बलवद्ग्रहदोषकारणै-
र्मनुजानां जनयन्त्यनेत्रताम् ॥ १० ॥

अन्धयोग ।

जिसके जन्मकाल में सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल और शनैश्चर ये जिस किसी तरह आठवें, छठे, दूसरे और बारहवें इन स्थानों में स्थित हों तो उनमें जो ग्रह बली हो उसका जो कुछ वात, पित्त, कफादि दोष कहा है उसी दोष से वह प्राणी अन्धा होता है ॥ १० ॥

नवमायतृतीयधीयुता न च सौम्यैरशुभा निरीक्षिताः ।
नियमाच्छ्रवणोपघातदा रदवैकृत्यकराश्च सप्तमे ॥ ११ ॥

बधिरयोग ।

जिसके जन्मकाल में पापग्रह नवें, ग्यारहवें, तीसरे और पाँचवें इन स्थानों में स्थित हों और शुभग्रह करके दृष्ट न हों तो इनमें बली ग्रह के कहे हुए वात, पित्त, कफादि दोष से वह बहिर होता है और वे ही अशुभग्रह अर्थात् सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और शनैश्चर ये ग्रह लग्न से सातवें स्थान में स्थित हों तो दाँतों में विकार करनेवाले होते हैं ॥ ११ ॥

उदयत्युडुपेऽसुरास्यगे सपिशाचोऽशुभयोस्त्रिकोणयोः ।
सोपप्लवमण्डले रवावुदयस्थे नयनापवर्जितः ॥ १२ ॥

---

* यवनाचार्यः—"मीनांशके मेषमृगांशके वा
चन्द्रः स्थितोऽत्रैव हि पापदृष्टः ।
किलासकुष्ठादिविनष्टदेह-
मिष्टेक्षितः कण्डुविकारिणं च ॥"

पिशाचयोग ।

जिसके जन्मकाल में राहुग्रस्त चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और लग्न से नवें और पाँचवें स्थान में शनैश्चर और मंगल ये स्थित हों तो वह प्राणी पिशाची होती है अर्थात् पिशाच उसका इष्टदेव होता है।

अन्धयोग ।

और ऐसे ही राहुग्रस्त सूर्य लग्न में स्थित हो और लग्न से नवें तथा पाँचवें स्थान में शनैश्चर और मंगल ये दोनों स्थित हों तो वह प्राणी अन्धा होता है।। १२ ।।

संस्पृष्टः पवनेन मन्दगयुते द्यूने विलग्ने गुरौ
सोन्मादोऽवनिजे स्थितेऽस्तभवने जीवे विलग्नाश्रिते ।
तद्वत्सूर्यसुतोदयेऽवनिसुते धर्मात्मजद्यूनगे
जातो वा ससहस्ररश्मितनये क्षीणे व्यये शीतगौ ।। १३ ।।

वातरोगियोग ।

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर सातवें तथा बृहस्पति लग्न में स्थित हो तो वह वातरोगी होता है ।।

उन्मादयोग ।

जिसके जन्मकाल में मंगल सातवें स्थान में और बृहस्पति लग्न में स्थित हो तो वह प्राणी विक्षिप्तचित्त होता है । अथवा शनैश्चर लग्न में और मंगल नवें, पाँचवें तथा सातवें इन स्थानों में कहीं स्थित हो तो भी विक्षिप्तचित्त होता है । अथवा शनैश्चरयुक्त क्षीण चन्द्रमा लग्न से बारहवें स्थान में स्थित हो तो भी विक्षिप्तचित्त होता है ।। १३ ।।

राश्यंशपोषणकरशीतकरामरेज्यै-
र्नीचाधिपांशकगतैररिभागगैर्वा ।
एभ्योऽल्पमध्यबहुभिः क्रमशः प्रसूता
ज्ञेयाः स्युरभ्युपगमक्रयगर्भदासाः ।। १४ ।।

दासयोग।

जिसके जन्मकाल में राश्यंशप अर्थात् चन्द्रमा जिस नवांश में वर्तमान हो उसका स्वामी, सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति ये ग्रह अपने नीच राशि के स्वामी के नवांश में अथवा अपने शत्रु के नवांश में स्थित हों तो वह दास होता है। परन्तु यहाँ यह भेद है कि उक्त चारों ग्रहों में से एक ऐसा हो तो जीविका करने के लिए दास और दो ऐसे हों तो हाथ बिका हुआ दास और बहुत अर्थात् चारों ऐसे हों तो गर्भदास अर्थात् दास ही का पुत्र होकर दास होता है ॥ १४ ॥

विकृतदशनः पापैर्दृष्टे वृषाजहयोदये
खलतिरशुभक्षेत्रे लग्ने हये वृषभेऽपि वा।
नवमसुतगे पापैर्दृष्टे रवावदृढेक्षणो
दिनकरसुते नैकव्याधिः कुजे विकलः पुमान् ॥ १५ ॥

जिसके जन्मकाल में वृष, मेष और धन इनमें से कोई लग्न में हो और पापग्रहों करके दृष्ट हो तो उसके दाँत अच्छे नहीं होते हैं ॥

खल्वाटयोग।

और मेष, सिंह, वृश्चिक, मकर, कुम्भ, वृष और धन इन राशियों में से कोई लग्न में हो और पापग्रहों करके दृष्ट हो तो वह खलति (खल्वाट) अर्थात् चंदुले मुण्डवाला होता है ॥

अदृढेक्षणयोग।

लग्न से नवें या पाँचवें स्थान में पापग्रह-दृष्ट सूर्य स्थित हो तो वह दृढ़ नेत्रोंवाला नहीं होता है।

अनेकव्याधियोग।

लग्न से नवें अथवा पाँचवें स्थान में पापग्रह-दृष्ट शनैश्चर स्थित हो तो वह अनेक व्याधियों से संयुक्त होता है ॥

हीनाङ्गयोग।

लग्न से नवें और पाँचवें स्थान में पापग्रह-दृष्ट मंगल स्थित हो तो वह हीनांग होता है ॥ १५ ॥

व्ययसुतधनधर्मगैरसौम्यै-

र्भवनसमाननिबन्धनं विकल्प्यम् ।

भुजगनिगडपाशभृद्दृकाणै-

र्बलवदसौम्यनिरीक्षितैश्च तद्वत् ॥ १६ ॥

बन्धनयोग ।

जिसके जन्मकाल में बारहवें, पाँचवें, दूसरे और नवें इन स्थानों में पापग्रह स्थित हों तो वह प्राणी बाँधा जाता है, परन्तु वह बन्धन राशिबोधक-पदवाच्य प्राणी के बन्धन के सदृश होता है अर्थात् मेष, बृष, धन ये लग्न में स्थित हों तो रस्सी से बन्धन और मिथुन, कन्या, तुला, कुम्भ ये लग्न में स्थित हों तो बेड़ी इत्यादि से बन्धन और कर्क, मकर, मीन ये लग्न में स्थित हों तो गढ़ी इत्यादि में घिरे रहना और वृश्चिक राशि लग्न में स्थित हो तो किसी गड़हे इत्यादि में घिरे रहना होता है। और यदि जन्मकालिक द्रेष्काण सर्प, निगड़संज्ञक अथवा पाशभृत्संज्ञक हो और (प्रथमपञ्चनवानाम्) इस रीति से जिस राशिसंबन्धी हो और वह राशि बली होकर किसी पापग्रह से दृष्ट न हो तो उस राशि के तुल्य बन्धन होता है ॥ १६ ॥

परुषवचनोऽपस्मारार्तः क्षयी च निशापतौ

सरवितनये वक्रालोकं गते परिवेषगे ।

रवियमकुजैः सौम्यादृष्टैर्नभस्तलमाश्रितै-

र्भृतकमनुजः पूर्वोद्दिष्टैर्वराधममध्यमाः ॥ १७ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातकेऽनिष्टाध्यायस्त्रयोविंशः ॥२३॥

परुषवचनादियोग ।

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा शनैश्चर युक्त होकर मंगल से दृष्ट हो

और परिवेष की प्राप्त हो तो वह प्राणी निष्ठुर वचन बोलनेवाला, अपस्मारी और क्षयी होता है अर्थात् जन्मकालिक चन्द्रमा शनैश्चर-युक्त हो तो निष्ठुर वचन बोलनेवाला, मङ्गल से दृष्ट हो तो अपस्मारी और वही परिवेष को भी प्राप्त हो तो क्षयी होता है ।।

भृतकयोग ।

जिसके जन्मकालिक सूर्य, शनैश्चर और मंगल ये शुभ ग्रहों करके दृष्ट न हों और लग्न से दशवें स्थान में स्थित हों तो वह प्राणी दास होता है परन्तु इन उक्त तीनों में से जिसके जन्मकाल में एक ही ऐसा हो वह दासों में श्रेष्ठ और जिसके दो ऐसे हों वह मध्यम और जिसके तीनों ऐसे हों वह अधम होता है ।। १७ ।।

दो० श्रीवराहकृत जातके, जन्य रिष्टज्ञानाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत तेइसाँध्याय ।। २३ ।।

अथ स्त्रीजातकाध्यायश्चतुर्विंशः ।

यद्यत्फलं नरभवेऽक्षममङ्गनानां
तत्तद्वदेत्पतिषु वा सकलं विधेयम् ।
तासां तु भर्तृमरणं निधने वपुस्तु
लग्नेन्दुगं शुभगतास्तमये पतिश्च ।। १ ।।

स्त्रीजातकफल ।

जो जो फल पुरुष के जन्मकाल में कहे गये हैं वे सब फल स्त्रियों के भी जन्मकाल में कहना चाहिए । परन्तु वहाँ यह विशेष है कि उन फलों में से जो स्त्रियों में न घटते हों वे सब उस स्त्री के पति को कहना चाहिए जैसे किसी स्त्री के राजयोग है तो वह योग उसके पतिको कहना चाहिए और स्त्रियों के जन्मकालिक आठवें स्थान से उनके स्वामी के मरण का विचार और लग्न तथा चन्द्रमा से उनके देह का विचार और सातवें स्थान से उनके पति तथा सौभाग्य का विचार करना चाहिए ।।१।।

युग्मेषु लग्नशशिनोः प्रकृतिस्थिता स्त्री
सच्छीलभूषणयुता शुभदृष्टयोश्च ।
ओजस्थयोश्च मनुजाकृतिशीलयुक्ता
पापा च पापयुतवीक्षितयोर्गुणोना ॥ २ ॥

स्त्रीस्वभावज्ञान

जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न तथा चन्द्रमा ये दोनों सब राशियों में स्थित हों तो वह स्त्रियों के आकार तथा स्वभाववाली होती है और वही लग्न तथा चन्द्रमा शुभग्रहों से दृष्ट हों तो वह उत्तम शील तथा भूषणों से संयुक्त होती है । यदि वही लग्न और चन्द्रमा विषम राशियों में स्थित हों तो वह पुरुष के आकार तथा स्वभाववाली होती है, यदि वही लग्न तथा चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त या दृष्ट हों तो वह पाप करनेवाली एवं उत्तम गुणों से हीन होती है ॥ २ ॥

कन्यैव दुष्टा व्रजतीह दास्यं
साध्वी समाया कुचरित्रयुक्ता ।
भूम्यात्मजर्क्षे क्रमशोंऽशकेषु
वक्रार्किजीवेन्दुजभार्गवानाम् ॥ ३ ॥

त्रिशांशफल ।

जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न तथा चन्द्रमा मेष या वृश्चिक इन राशियों में से किसी में स्थित हों और उसी काल में मङ्गल का त्रिशांश हो तो वह कन्या ही दुष्टा अर्थात् विना विवाह के ही पुरुष-संयोग से दूषित हो जाती है, और शनैश्चर का त्रिशांश हो तो दास्यभाव को प्राप्त होती है, और बृहस्पति का त्रिशांश हो तो वह साधु शीलवाली होती है, और बुध का त्रिशांश हो तो वह मायाविनी होती है और शुक्र का त्रिशांश हो तो निन्दित कर्म करनेवाली होती है ॥ ३ ॥

दुष्टा पुनर्भूः सगुणा कलाज्ञा
ख्याता गुणैश्चासुरपूजितर्क्षे ।
स्यात् कापटी क्लीबसमा सती च
बौधे गुणाढ्या प्रविकीर्णकामा ॥ ४ ॥

जिस स्त्री के जन्मकाल में लग्न तथा चन्द्रमा वृष या तुला इन दोनों राशियों में से किसी में स्थित हों और उसी काल में मङ्गल का त्रिशांश हो तो वह दुष्ट स्वभाववाली होती है, और शनैश्चर का त्रिशांश हो तो वह विवाह के अनन्तर दूसरे की स्त्री होती है, और बृहस्पति का त्रिशांश हो तो वह गुणवती होती है, और बुध का त्रिशांश हो तो वह गीत-वाद्यादि कलाओं की जाननेवाली होती है, और शुक्र का त्रिशांश हो तो वह गुणों करके बहुत प्रसिद्ध होती है, और ऐसे ही लग्न तथा चन्द्रमा मिथुन या कन्या इन दोनों राशियों में से किसी में स्थित हों और उसी काल में मंगल का त्रिशांश हो तो वह कापटी अर्थात् कपट करनेवाली होती है, और शनैश्चर का त्रिशांश हो तो वह नपुंसक के समान होती है, और बृहस्पति का त्रिशांश हो तो वह पतिव्रता होती है, और बुध का त्रिशांश हो तो वह बहुत गुणसंयुक्त होती है, और शुक्र का त्रिशांश हो तो वह काम से विक्षिप्ता अर्थात् बहुत पुरुषों से भोग करनेवाली होती है ॥ ४॥

स्वच्छन्दा पतिघातिनी बहुगुणा शिल्पिन्यसाध्वीन्दुभे
नाचारा कुलटार्कभे नृपवधूः पुंश्चेष्टितागम्यगा ।
जैवे नैकगुणाल्परत्यतिगुणा विज्ञानयुक्ताऽसती
दासी नीचरतार्किभे पतिरता दुष्टाऽप्रजा स्वांशकैः ॥ ५ ॥

लग्न तथा चन्द्रमा कर्क में स्थित हों और उसी काल में मंगल का त्रिशांश हो तो वह स्वच्छंदा अर्थात् अपने मन की होती है, और शनैश्चर का त्रिशांश हो तो वह पति को मारनेवाली

होती है, और बृहस्पति का त्रिशांश हो तो वह बहुत गुणोंवाली होती है, और बुध का त्रिशांश हो तो वह चित्रादि खींचने तथा लौकिक कार्य करने में निपुणा होती है, और शुक्र का त्रिशांश हो तो वह दुष्ट स्वभाववाली होती है । इसी प्रकार लग्न तथा चन्द्रमा सिंह में स्थित हों और उसी काल में मंगल का त्रिशांश हो तो वह पुरुषों का-सा आचार करनेवाली होती है, और शनैश्चर का त्रिशांश हो तो वह परपुरुष-गामिनी होती है, एवं बृहस्पति का त्रिशांश हो तो वह राजा की स्त्री होती है, और बुध का त्रिशांश हो तो वह पुरुषों के-से स्वभाववाली होती है, तथा शुक्र का त्रिशांश हो तो वह जिन पुरुषों से किसी तरह भोग नहीं करना चाहिए उन पुरुषों के साथ भोग करनेवाली होती है । ऐसे ही लग्न तथा चन्द्रमा धन या मीन इन दोनों राशियों में से किसी में स्थित हों और उसी काल में मंगल का त्रिशांश हो तो वह अनेक गुणोंवाली होती है, और शनैश्चर का त्रिशांश हो तो वह शीघ्र ही रति करनेवाली होती है, एवं बृहस्पति का त्रिशांश हो तो वह बहुत गुणोंवाली होती है । तथा बुध का त्रिशांश हो तो वह विशेष ज्ञानवाली होती है, और शुक्र का त्रिशांश हो तो वह परपुरुष-गामिनी, दुष्टा होती है । ऐसे ही लग्न तथा चन्द्रमा मकर या कुम्भ इन दोनों राशियों में से किसी में स्थित हों और उसी काल में मंगल का त्रिशांश हो तो वह दासी होती है, और शनैश्चर का त्रिशांश हो तो वह नीच पुरुष से फँसी होती है, और बृहस्पति का त्रिशांश हो तो वह पतिभक्ता होती है एवं बुध का त्रिशांश हो तो वह दुष्टा होती है, और शुक्र का त्रिशांश हो तो वह बन्ध्या होती है ॥ ५ ॥

शशिलग्नसमायुक्तैः फलं त्रिंशांशकैरिदम् ।
बलाबलविकल्पेन तयोरुक्तं विचिन्तयेत् ॥ ६ ॥

लग्न तथा चन्द्रमा का फल-विभाग ।

लग्न तथा चन्द्रमा इन दोनों करके संयुक्त त्रिशांश का जो फल कहा है उसको उन दोनों के बलाबल के विवेक से विचारना चाहिए

अर्थात् जब अन्य राशि या अन्य त्रिशांश में लग्न हो और अन्य राशि व अन्य त्रिशांश में चंद्रमा स्थित हो तब इन दोनों में जो बली हो उसी का पूर्वोक्त फल कहना चाहिए और जो निर्बल हो उसके फल को नहीं कहना चाहिए ॥ ६ ॥

दृक्संस्थावसितसितौ परस्परांशे
शौक्रे वा यदि घटराशिसम्भवोंऽशः ।
स्त्रीभिः स्त्रीमदनविषानलं प्रदीप्तं
संशान्ति नयति नराकृतिस्थिताभिः ॥ ७ ॥

स्त्री-स्त्रीमैथुन-योग-द्वय ।

जिस स्त्री के जन्मकाल में शुक्र या शनैश्चर ये दोनों परस्पर नवांश में स्थित हों अर्थात् शुक्र के नवांश में शनैश्चर स्थित हो और शनैश्चर के नवांश में शुक्र स्थित हो तथा शुक्र को शनैश्चर देखता हो या शनैश्चर को शुक्र देखता हो अथवा वृष या तुला इन दोनों में से कोई लग्न में स्थित हो और उसमें कुम्भ के नवांश का उदय हो तो वह स्त्री अन्य किसी पुरुषाकार स्त्री के साथ, बनाये हुए चर्मादि के लिंग से, कामाग्नि की ज्वाला को शान्त करती है ॥७॥

शून्ये कापुरुषोऽबलेऽस्तभवने सौम्यग्रहावीक्षिते
क्लीबोऽस्ते बुधमन्दयोश्चरगृहे नित्यं प्रवासान्वितः ।
उत्सृष्टा तरणौ कुजे तु विधवा बाल्येऽस्तराशिस्थिते
कन्यैवाशुभवीक्षितेऽर्कतनये द्यूने जरां गच्छति ॥ ८ ॥

कापुरुषादि पतियोग ।

जिस स्त्री के जन्मकालिक लग्न से या चंद्रमा से सातवें स्थान में कोई ग्रह स्थित न हो अथवा बलरहित हो या शुभग्रहों की दृष्टि उस पर न हो तो उस स्त्री का पति कापुरुष अर्थात् निरुद्यमादि दोष-संयुक्त होता है। और यदि उसी सातवें स्थान में अथवा शनैश्चर स्थित हो तो उसका पति क्लीब अर्थात् हिजरा होता है। यदि उसी

सातवें स्थान में चर-राशि हो तो उसका पति नित्य ही परदेश में वास करनेवाला होता है और यदि उसी सातवें स्थान में सूर्य स्थित हो तो वह पति से त्यागी हुई होती है और मंगल स्थित हो तो वह बाल्यावस्था में विधवा अर्थात् राँड़ होती है। एवं उसी सातवें स्थान में पापग्रहदृष्ट शनैश्चर स्थित हो तो वह कन्या ही वृद्ध हो जाती है अर्थात् उसका विवाह नहीं होता है ॥ ८॥

आग्नेयैर्विधवास्तराशिसहितैर्मिश्रैः पुनर्भूर्भवेत्
क्रूरे हीनबलेऽस्तगे स्वपतिना सौम्येक्षिते प्रोज्झिता ।
अन्योन्यांशगयोः सितावनिजयोरन्यप्रसक्ताङ्गना
द्यूने वा यदि शीतरश्मिसहितौ भर्तुस्तदानुज्ञया ॥ ९ ॥

यदि उसी सातवें स्थान में बहुत से पापग्रह स्थित हों तो वह स्त्री अवश्य ही विधवा होती है और यदि शुभ अथवा अशुभ मिले हुए ग्रह स्थित हों तो वह विवाहित पति को छोड़, फिर दूसरे पति को स्वीकार करती है, और यदि उसी सातवें स्थान में कोई एक क्रूर ग्रह बलरहित होकर स्थित हो और शुभग्रह दृष्ट हो तो वह स्त्री अपने पति करके त्यक्ता होती है, और यदि किसी स्थान में शुक्र या मङ्गल ये दोनों परस्पर अर्थात् शुक्र के नवांश में मंगल और मंगल के नवांश में शुक्र स्थित हो तो वह स्त्री परपुरुषों से सम्भोग करनेवाली होती है और यदि उसी पूर्वोक्त सातवें स्थान में चंद्रमायुक्त मंगल या शनैश्चर ये दोनों स्थित हों तो अपने स्वामी ही की आज्ञा से परपुरुष-रता होती है ॥ ९ ॥

सौरारर्क्षे लग्नगे सेन्दुशुक्रे
मात्रा सार्द्धं बन्धकी पापदृष्टे ।
कौजेऽस्तांशे सौरिणा व्याधियोनि-
श्चारुश्रोणी वल्लभा सद्ग्रहांशे ॥ १० ॥

बन्धकी-सरोगभगा-पतिप्रिया-योग ।

जिस स्त्री के जन्मकाल में मेष, वृश्चिक, मकर और कुम्भ इन राशियों में से कोई लग्न में स्थित हो और वहीं पापग्रहदृष्ट शुक्र या चन्द्रमा ये स्थित हों तो वह स्त्री अपनी माता के सहित पर-पुरुषों के साथ भोग करनेवाली होती है और जिस स्त्री के जन्मकालिक लग्न से सातवें स्थान में मंगल के नवांश का उदय हो और उसे शनैश्चर देखता हो तो उस स्त्री के भग में रोग होता है, और यदि उसी सातवें स्थान में शुभग्रह के नवांश का उदय हो तो वह स्त्री सुन्दर भगवाली और अपने स्वामी की अतिप्यारी होती है ।। १० ।।

वृद्धो मूर्खः सूर्यजर्क्षांशके वा
स्त्रीलोलः स्यात् क्रोधनश्चावनेये ।
शौक्रे कान्तोऽतीवसौभाग्ययुक्तो
विद्वान् भर्ता नैपुणश्चैव बौधे ।। ११ ।।

वृद्धपत्यादियोग ।

जिसके जन्मकालिक लग्न से सातवें स्थान में मकर या कुम्भ राशि हो अथवा शनैश्चर का नवांश हो तो उसका स्वामी वृद्ध तथा मूर्ख होता है। और उसी सातवें स्थान में मेष या वृश्चिक राशि हो अथवा मंगल का नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी परस्त्रियों की इच्छा करनेवाला तथा क्रोधी होता है । और उसी सातवें स्थान में वृष या तुला राशि हो अथवा शुक्र का नवांश हो तो उस स्त्री का पति अति सुन्दर एवं सबको प्रिय होता है । और उसी सातवें स्थान में मिथुन या कन्या राशि हो अथवा बुध का नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी विद्वान् तथा सब कार्यों में चतुर होता है ।।११।।

मदनवशगतो मृदुश्च चान्द्रे
त्रिदशगुरौ गुणवाञ्जितेन्द्रियश्च ।

अतिमृदुरतिकर्मकृच्च सौर्ये
भवति गृहेऽस्तमयस्थितेंऽशके वा ॥ १२ ॥

उसी सातवें स्थान में कर्क राशि या चन्द्रमा का नवांश हो तो उसका स्वामी अति कामी तथा कोमल स्वभाववाला होता है। और उसी सातवें स्थान में धन या मीन राशि हो अथवा बृहस्पति का नवांश हो तो स्त्री का स्वामी गुणी एवं जितेन्द्रिय होता है और उसी सातवें स्थान में सिंह राशि स्थित हो अथवा सूर्य का नवांश हो तो उस स्त्री का स्वामी अति कोमल स्वभाववाला या बहुत कार्य करनेवाला होता है ॥ १२ ॥

ईर्ष्यान्विता सुखपरा शशिशुक्रलग्ने
ज्ञेन्द्वोः कलासु निपुणा सुखिता गुणाढ्या ॥
शुक्रज्ञयोस्तु सुभगा रुचिरा कलाज्ञा
त्रिष्वप्यनेकवसुसौख्यगुणा शुभेषु ॥ १३ ॥

लग्नस्थग्रह फल ।

जिस स्त्री के जन्मकालिक लग्न में चंद्रमा और शुक्र ये दोनों स्थित हों तो वह स्त्री परसन्ताप करनेवाली तथा सदा सुख-संयुक्ता होती है। बुध तथा चन्द्रमा ये दोनों स्थित हों तो वह स्त्री गीत-वाद्यादि में बहुत चतुर, गुणसंयुक्ता तथा सुखवाली होती है। शुक्र और बुध ये दोनों स्थित हों तो वह स्त्री अति सुन्दर, सबकी प्यारी और गीतवाद्यादि जाननेवाली होती है। यदि उसी लग्न में बुध तथा बृहस्पति और शुक्र ये तीनों शुभ ग्रह स्थित हों तो वह स्त्री अनेक प्रकार के धन, सौख्य और गुणों से संयुक्ता होती है ॥ १३ ॥

क्रूरेऽष्टमे विधवता निधनेश्वरोंऽशे
यस्य स्थितो वयसि तस्य समे प्रदिष्टा ।
सत्स्वर्थगेषु मरणं स्वयमेव तस्याः
कन्यालिगोहरिषु चाल्पसुतत्वमिन्दौ ॥ १४ ॥

वैधव्यादियोग।

जिस स्त्री के जन्मकालिक लग्न से आठवें स्थान में क्रूर ग्रह स्थित हो और उस आठवें स्थान का स्वामी जिस ग्रह के नवांश में स्थित हो उस ग्रह की दशा अथवा अन्तर्दशा में वह स्त्री विधवा होती है और यदि लग्न से आठवें स्थान में क्रूरग्रह स्थित हो और दूसरे स्थान में कोई शुभग्रह स्थित हो तो स्वामी से पहिले उस स्त्री ही का मरण होता है। और जिस स्त्री के जन्मकाल में कन्या, वृश्चिक, वृष या सिंह इन राशियों में से किसी राशि में चन्द्रमा स्थित हो तो उस स्त्री के पुत्र थोड़े होते हैं ॥ १४ ॥

सौरे मध्यबले बलेन रहितैः शीतांशुशुक्रेन्दुजैः
शेषैर्वीर्यसमन्वितैः पुरुषिणी यद्योजराश्युद्गमः।
जीवारास्फुजिदैन्दवेषु बलिषु प्राग्लग्नराशौ समे
विख्याता भुवि नैकशास्त्रकुशला स्त्रीब्रह्मवादिन्यपि ॥१५॥

पुरुषिणीयोग।

जिस स्त्री के जन्म-काल में मध्यबली शनैश्चर हो और चन्द्रमा, शुक्र, बुध ये ग्रह बलरहित हों और सूर्य, मंगल तथा बृहस्पति ये ग्रह बली हों तथा विषम राशि लग्न में स्थित हो तो वह स्त्री पुरुषिणी अर्थात् बहुत पुरुषगामिनी होती है॥

ब्रह्मवादिनीयोग।

जिस स्त्री के जन्म-काल में बृहस्पति, मंगल, शुक्र और बुध ये सब ग्रह बली हों और समराशि लग्न में स्थित हो तो वह स्त्री पृथ्वी में प्रसिद्ध, अनेक-शास्त्रों में निपुण (अनेक शास्त्रों के आशय जानने में दक्षा) तथा मोक्षशास्त्र को अच्छी तरह से जाननेवाली होती है ॥ १५ ॥

पापेऽस्ते नवमगतग्रहस्य तुल्यां
प्रव्रज्यां युवतिरुपैत्यसंशयेन।

उद्वाहे वरणविधौ प्रदानकाले
पृच्छायामपि सकलं विधेयमेतत् ॥ १६ ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके स्त्रीजातकाध्याय-श्चतुर्विंशः ॥ २४ ॥

स्त्री-प्रव्रज्यायोग ।

जिस स्त्री के जन्म-काल में लग्न से सातवें स्थान में पापग्रह स्थित हो तब नवें स्थान में जो ग्रह हो उसी के तुल्य, पूर्वोक्त प्रव्रज्याध्याय में कथित के अनुसार, निःसदेह वह स्त्री संन्यास को प्राप्त होती है। इस स्त्रीजातक-प्रकरण में जितने योग कहे गये हैं उन सबको स्त्रियों के विवाहकाल में, कन्यावरणकाल में, कन्यादान में और प्रश्नकाल में भी विचारना चाहिए ॥ १६ ॥

दो० । श्रीवराहकृतजातके, नारिजन्मफलदाय ।
रामरत्नकृतभाषा, विगत चौबिसाँध्याय ॥ २४ ॥

अथ निर्याणाध्यायः पञ्चविंशः ।

मृत्युर्मृत्युगृहे क्षणेन बलिभिस्तद्धातुकोपोद्भव-
स्तत्संयुक्तभगात्रजो बहुभवो वीर्यान्वितैर्भूरिभिः ।
अग्न्यम्बवायुधजो ज्वरामयकृतस्तृट्क्षुत्कृतश्चाष्टमे
सूर्याद्यैर्निधने चरादिषु परस्वाध्वप्रदेशेष्वपि ॥ १ ॥

निर्याणाध्यायस्थ मृत्यु का विचार ।

जिसके जन्मकाल में लग्न से आठवें स्थान में कोई ग्रह नहीं स्थित हो और उस भाव को जो बलवान् ग्रह देखता हो उसके पूर्वोक्त कफ, वात और पित्तादि धातु के कोप से उस प्राणी का मरण होता है। अथवा उसी आठवें स्थान में स्थित राशि कालांग चक्र के जिस अंग में स्थित हो उस अंग में जो ग्रह स्थित हो उसके पूर्वोक्त कफ, वात और पित्तादि धातु के कोप से उस प्राणी का मरण होता है। और यदि ऐसे ग्रह बहुत हों तो उनमें जो बली हो उसके पूर्वोक्त

धातु-प्रकोप से और यदि बली भी बहुत हों तो उन सबके पूर्वोक्त धातु-प्रकोप से अर्थात् सन्निपातादि रोग से उस प्राणी का मरण होता है। और यदि लग्न से आठवें स्थान में सूर्य स्थित हो तो अग्नि से, चंद्रमा स्थित हो तो जल से, मंगल स्थित हो तो हथियार से, बुध स्थित हो तो ज्वर से, बृहस्पति स्थित हो तो अज्ञात रोग से, शुक्र स्थित हो तो प्यास से और शनैश्चर स्थित हो तो भूख से मरण होता है। और यदि ये मरणकारक ग्रह बली हों तो शुभकर्म से मरणकारक होते हैं ॥

मरण-प्रदेश का ज्ञान ।

जिसके जन्मकालिक लग्न से आठवें स्थान में चर राशि स्थित हो वह प्राणी परदेश में और स्थिरराशि स्थित हो तो वह स्वदेश में और द्विस्वभावराशि स्थित हो तो वह मार्ग में मरता है ॥१॥

शैलाग्राभिहतस्य सूर्यकुजयोर्मृत्युः खबन्धुस्थयोः
कूपे मन्दशशांकभूमितनयैर्बन्ध्वस्तकर्मस्थितैः ॥
कन्यायां स्वजनाद्धिमोष्णकरयोः पापग्रहैर्दृष्टयोः
स्यातां यद्युभयोदयेऽर्कशशिनौ तोये तदा मज्जितः ॥ २ ॥

अन्य प्रकार से मृत्यु का ज्ञान ।

जिसके जन्मकाल में लग्न से चौथे स्थान में अथवा दशवें स्थान में सूर्य और मंगल ये दोनों स्थित हों तो पत्थर के प्रहार से उसकी मृत्यु होती है। शनैश्चर, चंद्रमा और मंगल ये क्रम से चौथे, सातवें और दशवें स्थान में स्थित हों अर्थात् शनैश्चर चौथे, चंद्रमा सातवें और मंगल दशवें स्थान में स्थित हो तो वह प्राणी कुएँ में गिरकर मरता है। और जिसके जन्मकाल में सूर्य और चन्द्रमा ये दोनों कन्या राशि में स्थित होकर पापग्रहों करके दृष्ट हों तो वह प्राणी किसी अपने ही जन से मारा जाता है। जिसके जन्मकाल में द्विस्वभावराशि लग्न में स्थित हो और उसी में यदि सूर्य और चंद्रमा ये दोनों ग्रह स्थित हों तो वह प्राणी जल में डूबकर मरता है ॥२॥

मन्दे कर्कटगे जलोदरकृतो मृत्युर्मृगाङ्के मृगे
शस्त्राग्निप्रभवः शशिन्यशुभयोर्मध्ये कुजर्क्षे स्थिते ।
कन्यायां रुधिरोत्थशोषजनितस्तद्वत्स्थिते शीतगौ
सौरर्क्षे यदि तद्वदेव हिमगौ रज्ज्वग्निपातैः कृतः ॥ ३ ॥

अन्य मृत्युयोग ।

जिसके जन्मकाल में शनैश्चर कर्क राशि में हो और चन्द्रमा मकर राशि में स्थित हो तो उस प्राणी की मृत्यु जलोदर रोग से होती है । और मेष तथा वृश्चिक में स्थित चन्द्रमा दो पापग्र हों के बीच में हो तो उस प्राणी की मृत्यु हथियार अथवा अग्नि से होती है। और कन्या में स्थित चन्द्रमा दो पापग्रहों के बीच में हों तो रक्त के विकार से अथवा शोषरोग से उस प्राणी की मृत्यु होती है। और यदि मकर तथा कुम्भ में स्थित चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य में स्थित हो तो वह प्राणी रस्सी से अथवा अग्नि से अथवा कहीं ऊँचे से गिरकर मरता है ॥ ३ ॥

बन्धाद्धीनवमस्थयोरशुभयोः सौम्यग्रहादृष्टयो-
र्द्रेष्काणैश्च ससर्पपाशनिगडैश्छिद्रस्थितैर्बन्धनात् ।
कन्यायामशुभान्वितेऽस्तमयगे चन्द्रे सिते मेषगे
सूर्ये लग्नगते च विद्धि मरणं स्त्रीहेतुकं मन्दिरे ॥ ४ ॥

अन्य मृत्यु-योग ।

जिसके जन्मकाल में दो पापग्रह पाँचवें और नवें स्थान में स्थित हों अर्थात् एक पाँचवें स्थान में और एक नवें स्थान में स्थित हो और उन दोनों को कोई शुभग्रह न देखता हो तो वह प्राणी बन्धन से मरता है । और जिसके जन्मकालिक लग्न से आठवें स्थान में स्थित राशि में यदि पाश, सर्प और निगड संज्ञक द्रेष्काण हों तो भी वह बन्धन से मरता है । भुजगपाश द्रेष्काण कर्क का द्वितीय और तृतीय, वृश्चिक का प्रथम और द्वितीय तथा

मीन का अन्त्य द्रेष्काण तथा निगड द्रेष्काण मकर का आद्य द्रेष्काण होता है जिसके जन्मकालिक लग्न से सातवें स्थान में कन्या राशि में पापग्रह युक्त चंद्रमा स्थित हो तथा शुक्र मेष में और सूर्य लग्न में स्थित हो तो अपने ही घर में स्त्री के द्वारा उसकी मृत्यु होती है।।४।।

शूलोद्भिन्नतनुः सुखेऽवनिसुते सूर्येऽपि वा खे यमे
सप्रक्षीणहिमांशुभिश्च युगपत्पापैस्त्रिकोणाद्यगैः ।
बन्धुस्थे च रवौ वियत्यवनिजे क्षीणेन्दुसंवीक्षिते
काष्ठेनाभिहतः प्रयाति मरणं सूर्यात्मजेनेक्षिते ।। ५ ।।

अन्य मृत्यु-योग ।

जिसके जन्मकालिक लग्न से चौथे स्थान में मंगल अथवा सूर्य स्थित हो और दशवें स्थान में शनैश्चर स्थित हो तो वह प्राणी शूल से छिदकर मरता है। और जिसके जन्मकाल में क्षीण चंद्रमा के सहित पापग्रह पाँचवें, नवें और लग्न इन्हीं तीनों ही स्थानों में स्थित हों तो भी वह प्राणी शूल से छिदकर मरता है। और जिसके जन्मलग्न से चौथे स्थान में सूर्य तथा दशवें स्थान में मंगल हो और क्षीण चंद्रमा करके दृष्ट हो तो भी वह प्राणी शूल से छिदकर मरता है। और जिसके जन्मलग्न से चौथे स्थान में सूर्य या दशवें स्थान में मंगल हो और उसे शनैश्चर देखता हो तो वह प्राणी काष्ठ से मारा हुआ मरता है।। ५ ।।

रन्ध्रास्पदाङ्गहिबुकैर्लगुडाहताङ्गः
प्रक्षीणचन्द्ररुधिरार्किदिनेशयुक्तैः ।
तैरेव कर्मनवमोदयपुत्रसंस्थै-
र्धूमाग्निबन्धनशरीरनिकुट्टनान्तः ।। ६ ।।

अन्य मृत्यु-योग ।

जिसके जन्मकाल में क्षीण चंद्रमा आठवें स्थान में, मंगल दशवें स्थान में, शनैश्चर लग्न में और सूर्य चौथे स्थान में स्थित हो तो

वह प्राणी लाठी से मारा हुआ मरता है और जो ये ही सब ग्रह क्रम से दशवें, नवें, लग्न और पाँचवें में स्थित हों अर्थात् क्षीण चन्द्रमा दशवें स्थान में, मंगल नवें स्थान में, शनैश्चर लग्न में तथा सूर्य पाँचवें स्थान में स्थित हो तो वह प्राणी धुआँ, अग्नि, बन्धन और देह का किसी वस्तु से कूटना इत्यादि किसी एक से मरता है ।। ६ ।।

बन्धवस्तकर्मसहितैः कुजसूर्यमन्दै-
र्निर्याणमायुधशिखिक्षितिपालकोपैः ।
सौरेन्दुभूमितनयैश्च सुखास्पदस्थै-
र्ज्ञेयः क्षतकृमिकृतश्च शरीरपातः ।। ७ ।।

अन्य मृत्यु-योग ।

जिसके जन्मकाल में लग्न से चौथे स्थान में मंगल, सातवें स्थान में सूर्य और दशवें स्थान में शनैश्चर स्थित हो तो वह प्राणी हथियार, अग्नि और राजकोप इत्यादि किसी एक से मरता है और जिसके जन्मलग्न से दूसरे स्थान में शनैश्चर, चौथे स्थान में चन्द्रमा और दशवें स्थान में मंगल स्थित हो तो वह प्राणी घाव में कीड़े पड़ने से मरता हैं ।। ७ ।।

खस्थेऽर्केऽवनिजे रसातलगते यानप्रपाताद्वधो
यन्त्रोत्पीडनजः कुजेऽस्तमयगे सौरेन्द्विनाभ्युद्गमे ।
विण्मध्ये रुधिरार्किशीतकिरणैर्जूकाजसौरर्क्षगै-
र्यातैर्वा गलितेन्दुसूर्यरुधिरैर्व्योमास्तबन्धवाह्वयान् ।। ८ ।।

अन्य मृत्यु-योग ।

जिसके जन्मकाल में लग्न से दशवें स्थान में सूर्य, चौथे स्थान में मंगल हो तो वह प्राणी वाहन से गिरकर मरता है और जिसके जन्म लग्न से सातवें स्थान में मङ्गल और लग्न में शनैश्चर, चंद्रमा और सूर्य ये तीनों ग्रह स्थित हों तो वह प्राणी किसी यन्त्र में कचरकर मरता है । और जिसके जन्मकाल में मङ्गल, शनैश्चर और चन्द्रमा

ये क्रम से तुला, मेष और मकर या कुम्भ इनमें स्थित हों अर्थात् तुला में मंगल, मेष में शनैश्चर और मकर अथवा कुम्भ में चन्द्रमा स्थित हो तो वह प्राणी विष्ठा में गिरकर मरता है। और जिसके जन्मलग्न से दशवें स्थान में क्षीण चन्द्रमा, सातवें स्थान में सूर्य और चौथे स्थान में मंगल स्थित हो तो वह प्राणी भी विष्ठा में गिरकर मरता है ॥ ८ ॥

वीर्यान्वितवक्रवीक्षिते क्षीणेन्दौ निधनस्थितेऽर्कजे ।
गुह्योद्भवरोगपीडया मृत्युः स्यात्कृमिशस्त्रदाहजः ॥ ९ ॥

अन्य मृत्यु-योग ।

जिसके जन्मकाल में क्षीण चन्द्रमा मंगल से दृष्ट हो तथा लग्न से आठवें स्थान में शनैश्चर स्थित हो तो वह प्राणी गुदा में उत्पन्न हुए बवासीर, भगन्दर आदि रोग की पीड़ा से, कीड़े पड़ने से, हथियार से या अग्नि में जलने से मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

अस्ते रवौ सरुधिरे निधनेऽर्कपुत्रे
क्षीणे रसातलगते हिमगौ खगान्तः ।
लग्नात्मजाष्टमतपःस्विनभौममन्द-
चन्द्रैस्तु शैलशिखराशनिकुड्यपातैः ॥ १० ॥

अन्य-मृत्यु-योग ।

जिसके जन्मकाल में मंगलयुत सूर्य सातवें स्थान में शनैश्चर आठवें स्थान में और क्षीण चन्द्रमा चौथे स्थान में स्थित हो तो उस प्राणी की मृत्यु पक्षी करके होती है। और जिसके जन्म-काल में सूर्य लग्न में, मंगल पाँचवें स्थान में, शनैश्चर आठवें स्थान में और चंद्रमा नवें स्थान में स्थित हो तो वह प्राणी पहाड़ पर से गिरकर या वज्र पात से अथवा किसी दीवार आदि के गिरने से मरता है ॥ १० ॥

द्वाविंशः कथितस्तु कारणं द्रेष्काणो निधनस्य सूरिभिः ।
तस्याधिपतिर्भवोऽपि वा निर्याणं स्वगुणैः प्रयच्छति ॥ ११ ॥

मृत्युयोगान्तर।

जिसके जन्मकाल में कोई भी पूर्वोक्त मरणयोग न हो तो उस प्राणी का पण्डितों ने जन्मकालिक द्रेष्काण से बाईसवाँ द्रेष्काण मृत्यु का कारण कहा है परन्तु वह साक्षात् मरणप्रद नहीं है, किंतु उसके स्वामी के जो (अग्न्यम्ब्वायुध) इत्यादि गुण कहे हैं उन्हीं के द्वारा मरण का कारण कहा है। अथवा वह बाईसवाँ द्रेष्काण जिस राशि में स्थित हो उस राशि का स्वामी अपने गुणों से मृत्यु का देनेवाला होता है। इन दोनों में जो बलवान् हो वही मरण का हेतु होता है ॥ ११ ॥

होरानवांशकपयुक्तसमानभूमौ
योगेक्षणादिभिरतः परिकल्प्यमेतत्।
मोहस्तु मृत्युसमयेऽनुदितांशतुल्यः
स्वेशेक्षिते द्विगुणितस्त्रिगुणः शुभैश्च ॥ १२ ॥

मरण-भूमि का ज्ञान

जन्मकालिक लग्न में जिस नवांश का उदय हो उस नवांश का स्वामी जिस राशि में स्थित हो उस राशि के तुल्य स्थान में मरण कहना चाहिए। यथा—नवांश का स्वामी मेष राशि में स्थित हो तो भेड़ी, बकरियों के रहने के योग्य स्थान में; वृष राशि में स्थित हो तो गौ, भैंस आदि के रहने के योग्य स्थान में; मिथुन राशि में स्थित हो तो घर में, कर्क राशि में स्थित हो तो कुवाँ, ताल आदि में; सिंह राशि में स्थित हो तो वन में; कन्या राशि में स्थित हो तो कुवाँ, ताल आदि में; तुला राशि में स्थित हो तो बाजार में; वृश्चिक राशि में स्थित हो तो कहीं कोठरी, कन्दरादि में; धन राशि में स्थित हो तो घोड़ों के रहने के योग्य स्थान में; मकर राशि में स्थित हो तो रेती इत्यादि में; और कुम्भ राशि में स्थित हो तो घर में और मीन राशि में स्थित हो तो रेती इत्यादि में मरण कहना चाहिए। जिन प्राणियों के मरने का स्थान पूर्व कहा है उनका मरण उन्हीं स्थानों में कहना चाहिए और यदि लग्नस्थ नवांशपति के आश्रित

राशि में कोई अन्य ग्रह भी स्थित हो तो उसकी भूमि में तथा वही लग्नस्थ नवांशाधिप जिसको देखता हो तो उसकी भी भूमि में मरण कहना चाहिए। और (योगेक्षणादिभिः) इसमें आदि पद का यह अर्थ है कि वही लग्नस्थ नवांशाधिप जिसके नवांश में स्थित हो उसकी भूमि में भी मरण कहना चाहिए और ऐसे ही मरणकालिक सुख दुःखादि भी चिन्तनीय हैं। जहाँ कई ग्रहों की भूमि का योग हो, वहाँ जो बलवान् ग्रह हो उसकी भूमि में मृत्यु कहना चाहिए ॥

मरणकालिक मोह-काल का ज्ञान।

जन्मकालिक लग्न के भुक्त नवांशों को छोड़ जितने भोगने के लिये बाकी हों, उन बाकी दुष्टग्रह-पीड़ित नवांशों के तुल्य काल अर्थात् जितने काल में उन बाकी नवांशों को लग्न भोगे उतने काल मरणसमय में प्राणी को मोह अर्थात् मूर्च्छा होती है। और वह लग्न राशि यदि अपने स्वामी करके दृष्ट हो तो उक्त काल से दुगुने काल तक और यदि शुभ ग्रह करके दृष्ट हो तो पूर्वोक्त काल से तिगुने काल तक मोह कहना चाहिए और यदि अपना स्वामी और शुभग्रह इन दोनों से दृष्ट हो तो छहगुने काल तक मोह कहना चाहिए ॥१२॥

दहनजलविमिश्रैर्भस्मसंक्लेदशोषै-
र्निधनभवनसंस्थैर्व्यालवर्गैर्विडम्बः।
इति शवपरिणामश्चिन्तनीयो यथोक्तः
पृथुविर चितशास्त्राद्गत्यनूकादि चिन्त्यम् ॥१३॥

मृतशरीर-परिणाम ज्ञान।

जिसके जन्म-लग्न से आठवें स्थान में जो द्रेष्काण उदय को प्राप्त हो उसी के द्वारा लाश के रूपान्तर का विचार करना चाहिए अर्थात् वही बाईसवाँ द्रेष्काण यदि अग्निसंज्ञक हो तो उस प्राणी की लाश जलाई जाती है और यदि जलसंज्ञक हो तो वह जल में प्रवाहित की जाती है और यदि मिश्रसंज्ञक हो तो वह सूख जाती है और यदि सर्पसंज्ञक द्रेष्काण हो तो वह विष्ठा हो जाती है अर्थात् काक-गृद्धादिकों करके भक्षण की जाती है। पापग्रहों के द्रेष्काणों की अग्निसंज्ञा, शुभग्रहों के द्रेष्काणों की जलसंज्ञा, पापग्रह का द्रेष्काण

शुभग्रह युत हो अथवा शुभग्रह का द्रेष्काण पापग्रह युत हो तो उसकी मिश्रसंज्ञा होती है । और कर्कराशि* के पहिले तथा दूसरे, वृश्चिकराशि के पहिले और दूसरे तथा मीन के तीसरे द्रेष्काण की सर्पसंज्ञा होती है । इस कही हुई रीति से मृतशरीर के रूपान्तर का विचार करना चाहिए और मरे हुए प्राणी की कैसी गति होगी तथा वह प्राणी किस लोक से आया, वहाँ वह कैसा रहा और वह जन्मान्तर में कौन तथा कैसा था इन सबका विचार महात्माओं के बनाये हुए बड़े बड़े ज्योतिष के शास्त्रों से करना चाहिए ॥१३॥

गुरुरुडुपतिशुक्रौ सूर्यभौमौ यमज्ञौ
विबुधपितृतिरश्चो नारकीयांश्च कुर्युः ।
दिनकरशशिवीर्याधिष्ठितात्त्र्यंशनाथात्
प्रवरसमनिकृष्टास्तुङ्गह्रासादनूके ॥ १४ ॥

त्यक्तलोकज्ञान ।

बृहस्पति, चन्द्रमा और शुक्र, सूर्य तथा मंगल, शनैश्चर और बुध ये ग्रह प्राणी को क्रम से देवलोक, पितृलोक, तिर्यग्लोक और नरक इनसे आया हुआ बताते हैं । परन्तु उनकी यह रीति है कि जन्मकाल में सूर्य तथा चन्द्रमा इन दोनों में से बली ग्रह जिस द्रेष्काण में स्थित हो उस द्रेष्काण का स्वामी यदि बृहस्पति हो तो प्राणी को देवलोक से आया हुआ और यदि चन्द्रमा तथा शुक्र इनमें कोई हो तो प्राणी को पितृलोक से आया हुआ और यदि सूर्य

---

* उक्तंच—"शशिगृहपूर्वापरगः कीटस्य च मीनपश्चिमोपगतः ।
निधने यस्य भवन्ति द्रेष्काणास्तस्य च मृतस्य ॥
भुञ्जन्ति वायसाद्याः प्राणिसमूहा न चास्ति सन्देहः ।
पापग्रहद्रेष्काणो यस्याष्टमराशिसंस्थितो भवति ॥
दहनं प्राप्नोति नरो मृतमात्रो निश्चयात्प्रवदेत् ।"
एवं सौम्यद्रेष्काणो जलमध्ये क्षिप्यते नरोऽत्रमृतः ॥
सौम्यद्रेष्काणः पापैः पापद्रेष्काणोऽपि सौम्ययुक्तः ।
यस्याष्टमभवनगतः शोषं प्राप्नोति सोऽपि मृतः ॥"

तथा मंगल इनमें से कोई हो तो प्राणी को तिर्यग्लोक से आया हुआ और यदि शनैश्चर तथा बुध इनमें से कोई हो तो प्राणी को नरकलोक से आया हुआ बताते हैं ।।

उक्त लोकों में भी श्रेष्ठादि-ज्ञान

यदि प्राणियों को उक्त लोकों से आये हुए बतानेवाले ग्रह अपने उच्चस्थानों में स्थित हों तो उन प्राणियों को पूर्वजन्म के उक्त लोक में श्रेष्ठ जानना चाहिए और यदि वे ही ग्रह अपने उच्च-नीच के मध्य में स्थित हों तो उन प्राणियों को वहाँ मध्यम जानना चाहिए और यदि वे ही ग्रह अपने नीचस्थानों में स्थित हों तो उन प्राणियों को वहाँ नीच जानना चाहिए ।। १४ ।।

गतिरपि रिपुरन्ध्रत्र्यंशपोऽस्तस्थितो वा
गुरुरथ रिपुकेन्द्रच्छिद्रगः स्वोच्चसंस्थः ।
उदयति भवनेऽन्त्ये सौम्यभागे च मोक्षो
भवति यदि बलेन प्रोज्झितास्तत्र शेषाः ।। १५ ।।

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके निर्याणाध्यायः पञ्चविंशः ।। २५ ।।

मृतप्राणि-गम्य-लोक-ज्ञान ।

जन्मकाल में लग्न से छठा, सातवाँ और आठवाँ ये तीनों स्थान शून्य हों तो छठे और आठवें इन दोनों स्थानों में जिन द्रेष्काणों का उदय हो उन दोनों द्रेष्काणों के स्वामियों में जो बलवान हो उसी का पूर्वोक्त लोकरूप गति प्राणी की होती है । अथवा लग्न से छठे, सातवें और आठवें इनमें से किसी एक स्थान में जो ग्रह स्थित हो उस ग्रह का पूर्वोक्त लोकरूप गति प्राणी की होती है । अथवा लग्न से छः, सातवें और आठवें इन तीनों में या दो में ग्रह स्थित हों तो उन से जिस स्थान में दो या दो से अधिक ग्रह स्थित हों उन ग्रहों में जो बलवान् हो उसका पूर्वोक्त देवादिलोकरूप गति प्राणी की होती है

अर्थात् उसका जो लोक पूर्व में कहा है उस लोक में प्राणी का गमन होता है । और यदि तीनों स्थानों में बराबर ग्रह स्थित हों तो उनमें जो बलवान् हो उसके पूर्वोक्त देवादिलोक में प्राणी का गमन होता है ।

मोक्ष के दो योग ।

जिसके जन्मकाल में लग्न से छठे, केन्द्र अथवा आठवें स्थान में उच्चस्थ होकर बृहस्पति स्थित हो तो वह प्राणी मुक्त होता है और यदि मीनराशि* लग्न में स्थित हो और बृहस्पति को छोड़ शेष सब ग्रह बलरहित हों तो भी वह मुक्त होता है ॥ १५ ॥

दो० । श्रीवराहकृतजातके, कहि निर्याणनिकाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत पचीसाँध्याय ॥ २५ ॥

अथ नष्टजातकाध्यायः षड्विंशः ।

आधानजन्मापरिबोधकाले
सम्पृच्छतो जन्म वदेद्विलग्नात् ।
पूर्वापरार्धे भवनस्य विन्द्या-
द्भानावुदग्दक्षिणगे प्रसूतिम् ॥ १ ॥

नष्टजातकान्तर्गत जन्म-समय का ज्ञान ।

यदि किसी को अपना गर्भाधान-काल या जन्मकाल न ज्ञात हो तो उसे उचित है कि किसी उत्तम पंडित से पूछे । तब पण्डित को उचित है कि उस पूछनेवाले से प्रश्नकालिक लग्न द्वारा जन्मकाल कहे । परन्तु उसमें यह विशेष है कि यदि प्रश्नकालिक लग्न के पंद्रह अंश से कम अंश व्यतीत हुए हों तो उत्तरायण सूर्य में और पंद्रह से अधिक अंश व्यतीत हुए हों तो दक्षिणायन सूर्य में जन्म कहे ॥ १ ॥

---

* स्वल्पजातके—"षष्टाष्टमकण्टकगो गुरुश्चेद्भवति मीनलग्ने वा ।
शेषैः खगैर्जन्मनि मरणे वा मोक्षगतिमाहुः ॥"

वर्षज्ञान ।

लग्नत्रिकोणेषु गुरुस्त्रिभागै-
र्विकल्प्य वर्षाणि वयोऽनुमानात् ।
ग्रीष्मोऽर्कलग्ने कथितास्तु शेषै-
रन्यायनर्त्तावृतुरर्कचारात् ॥ २ ॥

प्रश्नकालिक लग्न के उदित द्रेष्काणों के क्रम से लग्न, पाँचवें और नवें इन स्थानों में बृहस्पति की स्थिति जानना चाहिए अर्थात् प्रश्नकालिक लग्न में यदि प्रथम द्रेष्काण का उदय हो तो लग्न ही की राशि में बृहस्पति के रहते जन्म कहना चाहिए और यदि दूसरे द्रेष्काण का उदय हो तो प्रश्नकालिक पाँचवें स्थान की राशि में बृहस्पति के रहते जन्म कहना चाहिए और यदि तीसरे द्रेष्काण का उदय हो तो नवें स्थान की राशि में बृहस्पति के रहते जन्म कहना चाहिए। यद्यपि कोई कहते हैं कि प्रश्नकालिक लग्न के पहिले द्रेष्काण का उदय हो तो प्रश्नकालिक लग्नराशि से जितनी संख्यावाली राशि में बृहस्पति स्थित हो उतने वर्ष प्रश्न करनेवाले के कहना चाहिए और जो दूसरे द्रेष्काण का उदय हो तो प्रश्नकालिक लग्न से पाँचवें स्थान की राशि से जितने संख्या-वाली राशि में बृहस्पति स्थित हो उतने वर्ष प्रश्न करनेवाले के कहना चाहिए और यदि तीसरे द्रेष्काण का उदय हो तो प्रश्न-कालिक लग्न से नवें स्थान की राशि से जितनी संख्यावाली राशि में बृहस्पति स्थित हो उतने वर्ष प्रश्न करनेवाले के कहना चाहिए। परन्तु सबका इष्ट पहिला* ही अर्थ है। और कोई इस पर विशेष भी कहते हैं कि यदि प्रश्नकालिक लग्न में प्रथम द्वादशांश का उदय हो तो लग्न में बृहस्पति के रहते जन्म कहना चाहिए और दूसरे द्वादशांश का उदय हो तो लग्न से दूसरे स्थान में बृहस्पति के रहते जन्म कहना चाहिए और तीसरे द्रेष्काण का

---

*यवनेश्वरः—"द्रेष्काणलग्नक्रमतस्तु राशौ गुरुर्विलग्नादित्रिकोगगोऽभूत् ।
समुद्गते तद्भवनक्रमेण स्वावारभादब्दगतिं प्रगण्यात् ।"

उदय हो तो लग्न से तीसरे स्थान में बृहस्पति के रहते जन्म कहना चाहिए इसी तरह चतुर्थादि द्रेष्काणों के उदय रहते चतुर्थादि स्थानों में बृहस्पति के रहते जन्म कहना चाहिए । इस रीति से जन्मकालिक बृहस्पति का स्थान जानकर प्रश्नकर्ता की अवस्था के अनुसार अनुमान करके वर्षों की कल्पना करना चाहिए अर्थात् उक्त रीति से जाने हुए जन्मकालिक बृहस्पति के स्थान से प्रश्नकालिक बृहस्पति के स्थान तक गिनने पर जो संख्या हो उसको प्रश्नकालिक संवत्सर में घटा देवे तो जन्मकालिक संवत्सर स्पष्ट होगा । और यदि प्रश्नकर्ता की अवस्था का सम्भव बारह वर्ष से अधिकका हो तो उक्त संख्या में बारह जोड़कर प्रश्नकालिक संवत्सर में घटावे तो जन्मकालिक संवत्सर स्पष्ट होगा । और यदि प्रश्नकर्ता की अवस्था का सम्भव चौबीस वर्ष से भी अधिक का हो तो उक्त संख्या में चौबीस जोड़कर उक्त संवत्सर में घटावे तो उक्त संवत्सर स्पष्ट होगा । ऐसे ही एकसौ बीस के भीतर प्रश्न करनेवाले की जितनी अवस्था का सम्भव हो उतनी ही बार उक्त संख्या में बारह जोड़कर उसको उक्त संवत्सर में घटाने से जन्मकालिक संवत्सर स्पष्ट होता है । और ऐसे ही यदि एक सौ बीस वर्ष किसी के बीत गये हों तो उसका नष्ट जन्मपत्र नहीं बन सकता है ।।

जन्मकालिक ऋतु का ज्ञान ।

प्रश्नकालिक लग्न में सूर्य अथवा सूर्य का द्रेष्काण हो तो जन्म काल में ग्रीष्मऋतु कहना चाहिए और शेष अर्थात् चंद्रादि ग्रहों तथा चंद्रादि के द्रेष्काणों के रहते पूर्व द्रेष्काण पर से कहे हुए ऋतु कहना चाहिए । यथा—प्रश्नकालिक लग्न में यदि चंद्रमा अथवा चंद्रमा का द्रेष्काण हो तो वर्षाऋतु, मंगल अथवा मंगल का द्रेष्काण हो तो ग्रीष्म ऋतु, बुध अथवा बुध का द्रेष्काण हो तो शरद्ऋतु, बृहस्पति अथवा बृहस्पति का द्रेष्काण हो तो हेमन्तऋतु, शुक्र अथवा शुक्र का द्रेष्काण हो तो वसन्त ऋतु, शनैश्चर अथवा शनैश्चर का द्रेष्काण हो तो शिशिरऋतु कहना चाहिए और बहुत ग्रह हों तो उनमें बलवान् ग्रह की

उक्त ऋतु और कोई ग्रह न हो तो द्रेष्काणोक्त ऋतु कहना चाहिए। यदि उक्त रीति से अयन तथा ऋतु भिन्न-भिन्न ज्ञात हों तो अर्कचार अर्थात् सौरमान ही से ऋतुओं का प्रमाण जानना चाहिए। यथा—उत्तरायण में हेमन्त का ज्ञान हो तो वृश्चिक के आदि से धन के अन्त तक सूर्य के रहते हेमन्तऋतु जानना चाहिए और दक्षिणायन में शिशिर का ज्ञान हो तो मकर के आदि से कुम्भ के अन्त तक सूर्य के रहते शिशिरऋतु जानना चाहिए। ऐसे ही सब ऋतुओं को जानना चाहिए ॥ २ ॥

चन्द्रज्ञजीवाः परिवर्तनीयाः
शुक्रारमन्दैरयने विलोमे।
द्रेष्काणभागे प्रथमे तु पूर्वो
मासोऽनुपाताच्च तिथिर्विकल्प्यः ॥ ३ ॥

ऋतु और अयन का विपरीत होने पर ऋतु का ज्ञान।

यदि ऋतुओं के विपरीत अयन हो और अयन के विपरीत ऋतु हो तो वहाँ चन्द्रमा, बुध और बृहस्पति इनको शुक्र, मंगल और शनैश्चर इन ग्रहों के साथ बदल देना चाहिए अर्थात् वर्षा, शरद् और हेमन्त इन ऋतुओं के स्थान में क्रम से वसन्त, ग्रीष्म और शिशिर इन ऋतुओं को कहना चाहिए और वसन्त, ग्रीष्म और शिशिर इनके स्थान में वर्षा, शरद् तथा हेमन्त इन ऋतुओं को कहना चाहिए। यथा—उक्त रीति से उत्तरायण ज्ञात हो और उसमें वर्षाऋतु का ज्ञान हो तो वहाँ वर्षा के स्थान में वसन्तऋतु जानना चाहिए। यदि दक्षिणायन में वसन्त का ज्ञान हो तो वहाँ वसन्त के स्थान में वर्षाऋतु जानना चाहिए। यदि उत्तरायण में शरद्ऋतु का ज्ञान हो तो वहाँ शरद्ऋतु के स्थान में ग्रीष्म ऋतु जानना चाहिए। यदि दक्षिणायन में ग्रीष्मऋतु का ज्ञान हो तो वहाँ ग्रीष्म के स्थान में शरद् जानना चाहिए। यदि उत्तरायण में हेमन्त का ज्ञान हो तो वहाँ हेमन्त के स्थान में शिशिर ऋतु

जानना चाहिए और यदि दक्षिणायन में शिशिरऋतु का ज्ञान हो तो वहाँ शिशिरऋतु के स्थान में हेमन्तऋतु जानना चाहिए।

मास-ज्ञान ।

प्रश्नकालिक लग्न में जो द्रेष्काण वर्तमान हो उसका यदि पूर्वार्ध हो तो उक्त रीति से जाने हुए ऋतु का पहिला मास और यदि उत्तरार्ध हो तो दूसरा मास जानना चाहिए ।

तिथि-ज्ञान ।

उसी द्रेष्काण तथा मास से त्रैराशिक के हिसाब से तिथि जानना चाहिए । यहाँ त्रैराशिक की यह रीति है कि छः सौ कलाओं का एक द्रेष्काण होता है और उसके आधे तीन सौ होते हैं । अब अनुपात करना चाहिए कि यदि प्रश्नकालिक लग्न-सम्बन्धी वर्तमान द्रेष्काण की तीन सौ कलाएँ व्यतीत होती हैं तो एक महीना अर्थात् तीस दिन व्यतीत होते हैं और उसी द्रेष्काण की इष्टकलाएँ व्यतीत हो गई हों तो कितने दिन होंगे ? फिर इष्टलाओं को तीस दिनों से गुणकर, उनमें तीन सौ का भाग देने से जो कुछ लब्ध हों उतने ही सूर्य के अंश ज्ञात वर्ष और मास में जिस तिथि को मिलें वही प्रश्न करनेवाले की जन्म तिथि होगी ।। ३ ।।

अत्रापि होरापटवो द्विजेन्द्राः
सूर्यांशतुल्यां तिथिमुद्दिशन्ति ।
रात्रिद्विसंज्ञेषु विलोमजन्म
भागैश्च वेलाः क्रमशो विकल्प्याः ।। ४ ।।

चान्द्र-तिथि ज्ञान ।

इस चान्द्रतिथि के जानने में भी होरा-शास्त्र के जाननेवाले ब्राह्मण लोग सूर्यांश के तुल्य ही तिथि कहते हैं अर्थात् प्रश्नकालिक सूर्य * के जितने अंश भुक्त हुए हों, उक्त रीति से जाने हुए महीने में

* मणित्थः—"पृच्छाकाले रविणा यावन्तोऽशाः स्फुटेन संभुक्ताः ।
राशेस्तास्तिथयः स्युः शुक्लादाबर्कमासस्य ।।"

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर उतनी ही गत तिथियाँ होती हैं। परन्तु यहाँ यह क्रम है कि मकर मास ज्ञात हो तो चान्द्र माघ मास और कुम्भ मास ज्ञात हो तो चान्द्र फाल्गुन मास जानना चाहिए। इसी प्रकार सब मासों को जानना चाहिए।

दिवा-रात्रि जन्म-ज्ञान।

(गोऽजाश्विकर्किमिथुनाः) यहाँ दिन-रात्रिसंज्ञक लग्न कहे हैं। उनमें से यदि प्रश्नकालिक लग्न दिनसंज्ञक हो तो रात्रि में जन्म और यदि रात्रिसंज्ञक हो तो दिन में जन्म कहना चाहिए।

जन्म-वेला-ज्ञान।

प्रश्नकालिक लग्न के भुक्त भागों के क्रम से वेला जानना चाहिए। अर्थात् जिस दिन या रात्रि में इष्ट-काल जानना है उस दिन या रात्रि का सूर्य तो पहिले ही ज्ञात हो जायगा। उसी से सिद्धान्तादि की उक्त रीति द्वारा अथवा तिथिपत्र द्वारा दिनमान या रात्रिमान जानकर, यदि दिन में जन्म ज्ञात हो तो दिनमान से और रात्रि में जन्म ज्ञात हो तो रात्रिमान से प्रश्नकालिक लग्न के स्वदेशीय भुक्त पलों को गुणकर उसमें उसी लग्न के स्वदेशीय मान का भाग देने पर जो लब्ध हो वही वेला अर्थात् इष्ट दण्डादि जानना चाहिए॥४॥

लक्ष्मणपुर (लखनऊ) के पलात्मक लग्न।

लग्न	मे.	वृ.	मि.	क.	सिंह	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
पल	२१७	२५०	३०३	३४३	३४८	३३९	३३९	३४८	३४३	३०३	२५०	२१७

केचिच्छशाङ्काध्युषितान्नवांशा-
च्छुक्लान्त्यसंज्ञं कथयन्ति मासम्।
लग्नत्रिकोणोत्तमवीर्ययुक्तं
सम्प्रोच्यतेऽङ्गालभनादिभिर्वा॥ ५॥

मतान्तर से मासज्ञान।

कोई आचार्य कहते हैं कि प्रश्नकालिक चन्द्रमा जिस नवांश में

स्थित हो तो उस नवांशकाल में जिस नक्षत्र का सम्भव हो, उस नक्षत्र के नाम से जो महीना प्रसिद्ध है वही जन्म-मास होता है। यथा–कृत्तिका नक्षत्र संयुक्त पूर्णमासी जिसमें हो वह कार्त्तिक कहा जाता है। यदि प्रश्नकाल में मेष राशि के अंतिम नवांश में चन्द्रमा स्थित हो तो यही कार्त्तिक जन्ममास होगा। यथार्थ में तो इसका यह अभिप्राय है कि यदि प्रश्नकालिक चन्द्रमा वृषराशि के सातवें नवांशपर्यंत किसी नवांश में स्थित हो तो कार्त्तिक, वृष राशि के सातवें से ऊपर मिथुन राशि के छठे नवांशपर्यंत में कहीं स्थित हो तो अगहन, मिथुन राशि के छठे से ऊपर कर्क राशि के पाँचवें नवांश-पर्यंत में कहीं स्थित हो तो पौष, कर्क राशि के पाँचवें नवांश से ऊपर सिंह राशि के चौथे नवांशपर्यंत किसी नवांश में स्थित हो तो माघ, सिंह राशि के चौथे नवांश से ऊपर कन्या राशि के सातवें नवांश-पर्यंत किसी के नवांश में स्थित हो तो फाल्गुन, कन्या राशि के सातवें नवांश के ऊपर तुला राशि के छठे नवांशपर्यंत किसी नवांश में स्थित हो तो चैत्र, तुला राशि के छठे नवांश से ऊपर वृश्चिक राशि के पाँचवें नवांशपर्यंत किसी नवांश में स्थित हो तो वैशाख, वृश्चिक राशि के पाँचवें नवांश से ऊपर धन राशि के चौथे नवांश-पर्यंत किसी नवांश में स्थित हो तो ज्येष्ठ, धनराशि चौथे नवांश से ऊपर मकर राशि के तीसरे नवांशपर्यंत किसी नवांश में स्थित हो तो आषाढ़, मकर राशि के तीसरे नवांश से ऊपर कुम्भ राशि के दूसरे नवांशपर्यंत किसी में स्थित हो तो श्रावण, कुम्भ राशि के दूसरे नवांश से ऊपर मीन राशि के पाँचवें नवांशपर्यंत किसी नवांश में स्थित हो तो भाद्रपद, मीन राशि के पाँचवें नवांश से ऊपर मेष राशि के आठवें नवांशपर्यंत किसी नवांश में स्थित हो तो आश्विन और मेषराशि के आठवें नवांश से ऊपर हो तो कार्त्तिक मास जन्ममास जानना चाहिए। क्योंकि यह नियम है कि जिस नवांश में कृत्तिका-रोहिणी हो वह कार्त्तिक, जिसमें मृगशिरा-आर्द्रा हो वह मार्ग, जिसमें पुनर्वसु-पुष्य हो वह पौष, जिसमें आश्लेषा-मघा हो वह माघ, जिसमें पूर्वाफाल्गुनी-उत्तराफाल्गुनी-हस्त हों वह फाल्गुन, जिसमें चित्रा-स्वाती वह चैत्र, विशाखा-अनुराधा हो

वह वैशाख, जिसमें ज्येष्ठा-मूल हो वह ज्येष्ठ, जिसमें पूर्वाषाढ़-उत्तराषाढ़ हो वह आषाढ़, जिसमें श्रवण-धनिष्ठा हो वह श्रावण, जिसमें शतभिष-पूर्वाभाद्रपद-उत्तराभाद्रपद हो वह भाद्रपद और जिसमें रेवती-अश्विनी-भरणी हो वह आश्विन कहा जाता है। यहाँ कृष्णपक्षान्त* तथा शुक्लपक्षादि मास का ग्रहण जानना चाहिए।

जन्म-राशिज्ञान

लग्न, नवम और पञ्चम इन तीनों स्थानों में स्थित राशियों में से जो राशि उत्तम बलसंयुक्त हो वही जन्मराशि अर्थात् उसी में चन्द्रमा के रहते जन्म कहना चाहिए। अथवा प्रश्नकर्ता के अंग-स्पर्श करने से अर्थात् जिस तरह कालनराकार चक्र में राशियों का न्यास किया है उसी तरह प्रश्नकर्ता के सब अंगों में राशियों की कल्पना करके जिस अंग पर हस्तादि रख के प्रश्नकर्ता प्रश्न करे उस अंग में कल्पित राशि ही जन्मराशि अर्थात् उसी में चन्द्रमा के रहते जन्म कहना चाहिए ॥ ५ ॥

यावान् गतः शीतकरो विलग्ना-
च्चन्द्राद्वदेत्तावति जन्मराशिः ।
मीनोदये मीनयुगं प्रदिष्टं
भक्ष्याहृताकाररुतैश्च चिन्त्यम् ॥ ६ ॥

प्रकारान्तर से जन्म-राशिज्ञान ।

प्रश्नकाल में चन्द्रमा प्रश्नलग्न से जितनी संख्यावाले स्थान पर स्थित हो उस चन्द्रमा से उतनी ही संख्यावाले स्थान में जो राशि हो वही जन्मराशि अर्थात् उसी में चन्द्रमा के रहते जन्म कहना चाहिए। यदि प्रश्नकाल में मीनराशि लग्नस्थ हो तो उसे ही

---

* यवनेश्वरः—"मासे तु शुक्लप्रतिपत्प्रवृत्ते
पूर्वे शशी मध्यबलो दशाहे ।"

तथा च—"यद्राशिसंज्ञे शीतांशुः प्रश्नकाले नवांशके ।
स्थितस्तद्राशिगः पूर्णो यस्मिन् भवति चन्द्रमाः ॥
जन्ममासः स निर्दिष्टः पुरुषस्य तु पृच्छतः ।
कृष्णपक्षान्तिको मासो ज्ञेयोऽत्र तु विपश्चिता ॥"

जन्मराशि कहना चाहिए । यदि इन कहे हुए अनेक प्रकारों से अनेक जन्मराशियों का ज्ञान हो तो वहाँ भक्ष्य, आहृत, आकार और रुत अर्थात् उस समय आई हुई खाने की वस्तुओं के आकार से या अन्य पशु पक्षी दिखाई दे उसके आकार से अथवा वहाँ उस समय जैसा शब्द होता हो उसी के सदृश जन्मराशि कहना चाहिए। यथा—बकरी इत्यादि देखने अथवा उसके शब्दादि सुनने से मेष इत्यादि जन्मराशि कहना चाहिए ॥ ६ ॥

होरानवांशप्रतिमं विलग्नं
लग्नाद्रविर्यावति च दृकाणे ।
तस्माद्वदेत्तावति वा विलग्नं
प्रष्टुः प्रसूताविति शास्त्रमाह ॥ ७ ॥

जन्म-लग्न-ज्ञान ।

प्रश्नकालिक लग्न में जो नवांश* वर्त्तमान हो, उस नवांश की जो राशि हो वही जन्मलग्न जानना चाहिए। अथवा प्रश्नलग्न में जो द्रेष्काण वर्त्तमान हो उस द्रेष्काण से जितनी संख्या वाले द्रेष्काण में सूर्य स्थित हो, प्रश्नलग्न से उतनी ही संख्यावाली राशि को जन्मलग्न कहना चाहिए । यदि उक्त द्रेष्काण-संख्या बारह से अधिक हो तो उसमें बारह का भाग देकर जो शेष रहे उसी से लग्न जानना चाहिए ॥ ७ ॥

जन्मादिशेल्लग्नगवीर्यगे वा
छायाङ्गुलघ्नोऽर्कहतेऽवशिष्टम् ।
आसीनसुप्तोत्थिततिष्ठताभं
जायासुखाज्ञोदयगं प्रदिष्टम् ॥ ८ ॥

---

* उक्तं च—"पृच्छालग्ननवांशस्य यो राशिः संज्ञया समः ॥
तस्मिंल्लग्नगते राशौ वक्तव्यं जन्म पृच्छतः ॥
यावत्संख्यो गतो लग्नाद् द्रेष्काणो दिनकृत्ततः ।
तावत्संख्ये लग्नराशौ प्रष्टुर्जन्म विनिर्दिशेत् ॥

प्रकारान्तर से जन्म-लग्न-ज्ञान ।

यदि प्रश्नलग्न में कोई ग्रह स्थित हो तो वहाँ जन्मलग्न जानने की यह रीति है कि उस लग्नस्थ ग्रह को स्पष्ट करके कला-समूह बनावे । फिर तत्काल में बारह अंगुल की लकड़ी समभूमि में खड़ी करके उसकी छाया नापकर जितने अंगुल छाया हो उन अंगुलों से उक्त ग्रह के कला-समूह को गुण देवे । फिर उस गुणे हुए अङ्क में बारह का भाग देवे, जो शेष रहे मेषादि गणना से उसे ही जन्मलग्न कहे । यदि प्रश्नलग्न में बहुत ग्रह हों और वे सम बलवाले हों तो उन सबके कला-समूह करके पूर्व क्रिया करे। अथवा उनमें जो बली हो उसी को कला-समूह बनाकर पूर्व क्रिया करे, तो जन्मलग्न का ज्ञान होगा ॥

प्रकारान्तर से जन्म-लग्न-ज्ञान ।

प्रश्नकर्त्ता यदि बैठा हुआ प्रश्न करे तो प्रश्नकालिक लग्न से सातवें स्थान में स्थित राशि जन्मलग्न, यदि शय्या पर लेटा हुआ प्रश्न करे तो उक्त लग्न से चौथे स्थान में स्थित राशि जन्मलग्न, यदि उठा हुआ प्रश्न करे तो उक्त लग्न से दशवें स्थान में स्थित राशि जन्मलग्न और यदि आसन से उठता हुआ प्रश्न करे तो उक्त लग्न में स्थित* राशि ही को जन्मलग्न कहना चाहिए॥८॥

गोसिंहौ जितुमाष्टमौ क्रियतुले कन्यामृगौ च क्रमात्
संवर्ग्या दशकाष्टसप्तविषयैः शेषाः स्वसंख्यागुणाः ।
जीवारास्फुजिदैन्दवाः प्रथमवच्छेषा ग्रहाः सौम्यव-
द्राशीनां नियतो विधिर्ग्रहयुतैः कार्याश्च तद्वद्गुणाः ॥ ९ ॥

प्रकारान्तर से नष्ट-जातक की विधि ।

वृष और सिंह का गुणक दश, मिथुन और सिंह का गुणक आठ, मेष और तुला का गुणक सात, कन्या और मकर का गुणक

* उक्तं च—"उत्तिष्ठतो विलग्नात् प्रष्टुः सुप्तस्य बन्धुलग्नाच्च ।
उपविष्टस्यास्तमये व्रजतो मेषूरणस्थानात् ॥"

पाँच और शेष राशियों का राशिसंख्या के तुल्य ही गुणक होता है। अर्थात् कर्क का गुणक चार, धन का गुणक नव, कुम्भ का गुणक ग्यारह और मीन का गुणक बारह होता है ॥

राशि-गुणक चक्र ।

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	राशि
७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	२१	गुणक

इसी प्रकार बृहस्पति का गुणक दश, मंगल का गुणक आठ, शुक्र का गुणक सात, बुध का गुणक पाँच और शेष ग्रहों का बुध के सदृश अर्थात् सूर्य, चन्द्रमा और शनैश्चर का गुणक पाँच होता है ॥

ग्रह-गुणक चक्र ।

सू०	च०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्रह
५	५	८	५	१०	७	५	गुणक

इन गुणकों का प्रयोजन यह है कि प्रश्नकाल में जो लग्न हो उसको कलारूप करके उस कला-समूह को लग्नस्थ-राशि के गुणक से गुणे । यदि लग्न में कोई ग्रह स्थित हो तो उस ग्रह के गुणक से भी पूर्व गुणे हुए अंक को गुणे और यदि बहुत ग्रह लग्न में स्थित हों तो प्रत्येक ग्रहों के गुणकों से पूर्व गुणे हुए अंक को गुणे । फिर वारंवार गुणे हुए उस अंक को किसी एकान्त स्थान में स्थापित करे ॥ ९ ॥

सप्ताहतं त्रिघनभाजितशेषमृक्षं
दत्त्वाऽथवा नव विशोध्य न वाथबाऽस्मात् ।
एवं कलत्रसहजातमजशत्रुभेभ्यः
प्रष्टुर्वदेदुदयराशिवशेन तेषाम् ॥ १० ॥

नक्षत्र-ज्ञान ।

तदनन्तर उस एकान्त स्थापित अंक को सात से गुणकर उसमें यदि लग्नस्थ प्रथम द्रेष्काण का उदय हो तो नव जोड़ देवे और दूसरे द्रेष्काण का उदय हो तो कुछ न जोड़े और न कुछ घटावे और तीसरे द्रेष्काण का उदय हो तो नव घटावे। फिर सत्ताइस का

भाग देवे जो लब्ध हो उसका त्याग करे और जो शेष रहे उसको ही अश्विन्यादि नक्षत्रों की गणना करके प्रश्नकर्त्ता का जन्मनक्षत्र कहे। और कोई कहते हैं कि लग्न में स्थित चर राशि हो तो उस राशि ही को उसके गुणक से गुणकर उसमें नव जोड़कर, द्विस्वभाव राशि हो तो नव घटाकर और स्थिर राशि हो तो बिना घटाये बढ़ाये ही उसमें सत्ताइस का भाग देने पर जो शेष रहे उसे ही अश्विन्यादि नक्षत्रों की गणना करके जन्मनक्षत्र कहे। इसी प्रकार यदि प्रश्नकर्त्ता अपनी स्त्री इत्यादि का जन्मनक्षत्र पूछे तो उन्हीं की राशियों से अर्थात् प्रश्नकालिक लग्न में छः जोड़ के पूर्वोक्त क्रिया करके स्त्री का जन्मनक्षत्र कहे और भाई का नक्षत्र पूछे तो प्रश्नलग्न में दो जोड़कर, पुत्र का जन्मनक्षत्र पूछे तो प्रश्नलग्न में चार जोड़कर तथा शत्रु का जन्मनक्षत्र पूछे तो प्रश्नलग्न में पाँच जोड़कर पूर्वोक्त क्रिया करके सबका जन्मनक्षत्र कहे ।। १० ।।

वर्षर्तुमासतिथयो द्युनिशं ह्युडूनि
वेलोदयर्क्षनवभागविकल्पनाः स्युः ।
भूयो दशादिगुणिताः स्वविकल्पभक्ता
र्षादयो नवकदानविशोधनाभ्याम् ।। ११ ।।

वर्षादि-ज्ञानोपाय ।

वर्ष, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, दिन, रात्रि, नक्षत्र, बेला, लग्न और नवांश इत्यादि भेदों को जानना चाहिए। उनकी यह रीति है कि पूर्वोक्त एकान्त स्थापित अंक को चार जगहों में स्थापित करके एक स्थान में दश से गुणे, दूसरे स्थान में आठ से गुणे, तीसरे स्थान में सात से गुणे और चौथे स्थान में पाँच से गुणे और उसमें उक्त रीति से नव घटाकर अथवा बढ़ाकर अपने भाजकों का भाग देने से वर्षादि ज्ञात होते हैं ।। ११ ।।

विज्ञेया दशकेष्वब्दा ऋतुमासास्तथैव च ।
अष्टकेष्वपि मासार्द्धास्तिथयश्च तथा स्मृताः ।। १२ ।।

दश से गुणे हुए उस एकान्त स्थापित अंक में एकसौ बीस का भाग देने पर जो शेष रहें वे प्रश्नकर्त्ता के गत वर्ष होते हैं। अर्थात् उस शेषांक को वर्त्तमान संवत्सर में घटा देवे तो जन्मसंवत्सर निश्चित हो जाता है। फिर उसी दश से गुणे हुए एकान्त स्थापित अंक में छः का भाग देने पर जो शेष रहे वही शिशिरादि गणना से जन्मऋतु होती है। यथा—एक शेष हो तो शिशिर, दो शेष हों तो वसन्त, तीन शेष हों तो ग्रीष्म, चार शेष हों तो वर्षा, पाँच शेष हों तो शरद् और शून्य शेष हो तो हेमन्त जन्म-ऋतु होती है। और उसी दश से गुणे हुए एकान्त स्थापित अंक में दो का भाग देने पर एक शेष रहे तो उक्त ऋतु में प्रथम मास और शून्य शेष रहे तो दूसरा मास जन्म का मास जानना चाहिए और आठ से गुणे हुए उस एकान्त स्थापित अंक में दो का भाग देने पर एक शेष रहे तो शुक्लपक्ष और शून्य शेष रहे तो कृष्णपक्ष जन्म का पक्ष जानना चाहिए। और उसी आठ से गुणे हुए एकान्त स्थापित अंक में पन्द्रह का भाग देने पर जो अंक शेष रहे वह जन्मतिथि जानना चाहिए ॥ १२ ॥

दिवारात्रिप्रसूतिं च नक्षत्रानयनं तथा ।
सप्तकेष्वपि वर्गेषु नित्यमेवोपलक्षयेत् ॥ १३ ॥

सात से गुणे हुए उस एकान्त स्थापित अंक में दो का भाग देने पर जो एक शेष रहे तो दिन में जन्म और शून्य शेष रहे तो रात्रि में जन्म कहना चाहिए। और उसी सात से गुणे हुए एकान्त स्थापित अंक में सत्ताइस का भाग देने पर जो शेष रहे उसे अश्विन्यादि गणना से जन्मनक्षत्र कहना चाहिए ॥ १३ ॥

वेलामथ विलग्नं च होरामंशकमेव च ।
पञ्चकेषु विजानीयान्नष्टजातकसिद्धये ॥ १४ ॥

और पाँच से गुणे हुए उस एकान्त स्थापित अंक में यदि दिन में जन्म ज्ञात हो तो दिनमान का और यदि रात्रि में जन्म ज्ञात हो तो रात्रिमान का भाग देने पर जो शेष रहे उतने ही दण्ड

दिन या रात्रि व्यतीत होने पर जन्म जानना चाहिए फिर इसी इष्टकाल से लग्न साधन करके पूर्वजातक के सदृश होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश और त्रिशांश साधन करके फलादि निर्देश करे परन्तु इन चारों स्थानों में पूर्वोक्त रीति से नव का जोड़ना, घटाना आदि करके तभी यह क्रिया करना चाहिए। इस रीति से नष्टजातक का साधन करे ॥ १४ ॥

संस्कारनाममात्रा द्विगुणा छायाङ्गुलैः समायुक्ताः ।
शेषात्त्रिनवकभक्तान्नक्षत्रं तद्धनिष्ठादि ॥ १५ ॥

प्रकारान्तर से जन्म-नक्षत्र-ज्ञान ।

प्रश्नकर्त्ता के नामकरण संस्कारकालिकनाम की जितनी मात्राएँ हों उनको द्विगुण करके उनमें बारह अंगुल की लकड़ी की छाया जितने अंगुल की हो, उतने अंक जोड़ देवे। फिर उनमें सत्ताइस का भाग देने पर जो शेष रहे उसे धनिष्ठादि नक्षत्र-गणना से जन्मनक्षत्र जानना चाहिए ॥ १५ ॥

द्वित्रिचतुर्दशदशतिथिसप्तत्रिगुणा नवाष्ट चैन्द्राद्याः ।
पञ्चदशघ्नास्तद्दिङ्मुखान्विता भं धनिष्ठादि ॥ १६ ॥

प्रकारान्तर से जन्म नक्षत्र-ज्ञान ।

पूर्वादि दिशाओं में क्रम से दो, तीन, चौदह, दश, पन्द्रह, इक्कीस, नव और आठ इन अंकों की कल्पना करे अर्थात् पूर्व में दो, आग्नेय में तीन, दक्षिण में चौदह, नैर्ऋत्य में दश, पश्चिम में पन्द्रह, वायव्य में इक्कीस, उत्तर में नव और ईशान में आठ। फिर प्रश्नकर्त्ता जिस दशा के सम्मुख मुख करके प्रश्न करे उस दिशा के अंक को पन्द्रह से गुण कर जो संख्या हो उसमें प्रश्नकर्त्ता के सम्मुख स्थित मनुष्यों की संख्या को जोड़े। फिर उसमें सत्ताइस का भाग देवे, जो शेष रहे उसको धनिष्ठादि नक्षत्रों की गणना से जन्मनक्षत्र जानना चाहिए अर्थात् एक बचे तो धनिष्ठा, दो बचे तो शतभिषा इत्यादि ॥ १६ ॥

इति नष्टजातकमिदं बहुप्रकारं मया विनिर्दिष्टम् ।
ग्राह्यमतः सच्छिष्यैः परीक्ष्य यत्नाद्यदा भवति ।। १७ ।।

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके नष्टजातकाध्यायः षड्विंशः ।। २६ ।।

नष्टजातकोपसंहार ।

श्रीवराहमिहिरजी कहते हैं कि इस प्रकार मैंने बहुत प्रकार से नष्टजातक कहा परन्तु सज्जन शिष्यों को उचित है कि यत्नपूर्वक परीक्षा करके इन प्रकारों में से जो प्रकार घटता हो उसे ग्रहण करें ।। १७ ।।

दो० श्रीवराहकृतजातके, नष्टजातकाध्याय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत छबीसांध्याय ।। २६ ।।

अथ द्रेष्काणाध्यायः सप्तविंशः ।

कटयां सितवस्त्रवेष्टितः कृष्णः शक्त इवाभिरक्षितुम् ।
रौद्रः परशुं समुद्यतं धत्ते रक्तविलोचनः पुमान् ।। १ ।।

मेष के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप ।

कमर में श्वेत वस्त्र लपेटे हुए, कृष्ण वर्ण, रक्षा करने में समर्थ-सा तथा देखने में भयानक, उद्यत, परशु को धारण किए हुए, लाल नेत्रोंवाला तथा पुरुषसंज्ञक मेष का प्रथम द्रेष्काण होता है।। १।।

रक्तांबरा भूषणभक्ष्यचिंता
कुंभाकृतिर्वाजिमुखी तृषार्ता ।
एकेन पादेन च मेषमध्ये
द्रेष्काणरूपं यवनोपदिष्टम् ।। २ ।।

मेष के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप ।

लाल वस्त्र, आभूषण और भोजन की वस्तु इनमें चित्त को लगानेवाली, घड़े के सदृश आकृतिवाली, घोड़े के मुख के सदृश मुखवाली, प्यास से क्लेशित, एक चरणवाली स्त्री के समान मेष के

दूसरे द्रेष्काण का रूप यवनों ने कहा है। और कोई इसे स्त्री द्रेष्काण या चतुष्पद द्रेष्काण अथवा खगमुख द्रेष्काण तथा अर्कसक्त भी कहते हैं ।। २ ।।

क्रूरः कलाज्ञः कपिलः क्रियार्थी
भग्नव्रतोऽभ्युद्यतदण्डहस्तः ।
रक्तानि वस्त्राणि बिभर्ति चण्डो
मेषे तृतीयः कथितस्त्रिभागः ।। ३ ।।

मेष के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

क्रूर स्वभाव, कलाओं का जाननेवाला, कपिल वर्ण, क्रिया करनेवाला, नियम तोड़नेवाला, हाथ में दण्ड धारणकरनेवाला, लालवस्त्र धारणकरनेवाला तथा क्रोधी मेष का तीसरा द्रेष्काण होता है। इसे कोई नर द्रेष्काण या सायुध द्रेष्काण तथा जीवसक्त भी कहते हैं ।। ३ ।।

कुञ्चितलूनकचा घटदेहा
दग्धपटा तृषिताशनचित्ता ।
आभरणान्यभिवाञ्छति नारी
रूपमिदं वृषभे प्रथमस्य ।। ४ ।।

वृषराशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप ।

कुंचित और कतरे हुए बालोंवाली, घड़े के समान देहवाली, जले हुए वस्त्रोंवाली, प्यास से पीड़ित, भोजन में लगे चित्तवाली, आभूषणों की इच्छा करती हुई स्त्री के समान वृषराशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप है। इसे कोई स्त्री द्रेष्काण या साग्निक अथवा शुक्रसक्त भी कहते हैं ।। ४ ।।

क्षेत्रधान्यगृहधेनुकलाज्ञो
लाङ्गले सशकटे कुशलश्च ।
स्कन्धमुद्वहति गोपतितुल्यं
क्षुत्परोऽजवदनो मलवासाः ।। ५ ।।

वृषराशि के द्वितीय द्रेष्काण का स्वरूप ।

खेत, धान्य, गृह, गौ, गाना और बजाना इत्यादि का जाननेवाला, हल तथा गाड़ी के जोतने तथा बनाने में चतुर, बैल के समान काँधवाला, भूख से पीड़ित और बकरे के समान मुखवाला तथा मैले वस्त्रोंवाला वृषराशि का दूसरा द्रेष्काण होता है। इसे कोई नर द्रेष्काण या चतुष्पाद द्रेष्काण अथवा बुधसक्त भी कहते हैं ।। ५ ।।

द्विपसमकायः पाण्डुरदंष्ट्रः
शरभसमाङ्घ्रिः पिङ्गलमूर्तिः ।
अविमृगलोभव्याकुलचित्तो
वृषभवनस्य प्रान्तगतोऽयम् ।। ६ ।।

वृषराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

हाथी के समान देह, पीली दाढ़, शरभ के समान पाद, पीतवर्ण और भेड़ या हरिण के लोभ से व्याकुल चित्तवाला वृषराशि का तीसरा द्रेष्काण होता है। इसे कोई नर द्रेष्काण या चतुष्पाद द्रेष्काण अथवा शनैश्चरसक्त भी कहते हैं ।। ६ ।।

सूच्याश्रयं समभिवाञ्छति कर्म नारी
रूपान्विताभरणकार्यकृतादरा च ।
हीनप्रजोच्छ्रितभुजर्तुमती त्रिभाग-
माद्यं तृतीयभवनस्य वदन्ति तज्ज्ञाः ।। ७ ।।

मिथुनराशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप ।

सुई के काम की इच्छा करती हुई, उत्तम रूपवाली, गहना पहिरने इत्यादि में आदर करनेवाली, सन्तानरहित और बाहु उठाये रजस्वला स्त्री के समान पण्डित लोग मिथुन के पहिले द्रेष्काण को कहते हैं। और यह स्त्री द्रेष्काण तथा बुधसक्त भी कहा जाता है ।। ७ ।।

उद्यानसंस्थः कवची धनुष्मा-
ञ्छूरोऽस्त्रधारी गरुडाननश्च ।

क्रीडात्मजालङ्करणार्थचिन्तां

करोति मध्ये मिथुनस्य राशेः ॥ ८ ॥

मिथुनराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

बाग में रहनेवाला और कवच, धनुष और अस्त्रधारण करनेवाला शूरवीर, गरुड़ के समान मुखवाला और क्रीड़ा, सन्तान, आभूषण और इन सबकी चिन्ताकरनेवाला मिथुन का दूसरा द्रेष्काण होता है। यह नर द्रेष्काण, सायुध, खग द्रेष्काण तथा शुक्रसक्त भी कहा जाता है ॥ ८ ॥

भूषितो वरुणवद्बहुरत्नो

बद्धतूणकवचः सधनुष्कः ।

नृत्यवादितकलासु च विद्वान्

काव्यकृन्मिथुनराश्यवसाने ॥ ९ ॥

मिथुनराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

सब भूषणों से भूषित, समुद्र के समान बहुत रत्नसंयुक्त तथा कवच, तूणीर और धनुष इनका धारणकरनेवाला, नाचना-बजाना इत्यादि कलाओं का जाननेवाला और काव्य करनेवाला मिथुनराशि का तीसरा द्रेष्काण होता है। यह नर द्रेष्काण, सायुध तथा शनैश्चरसक्त भी कहा जाता है ॥ ९ ॥

पत्रमूलफलभृद्द्विपकायः

कानने मलयगः शरभाङ्घ्रिः ।

क्रोडतुल्यवदनो हयकण्ठः

कर्कटे प्रथमरूपमुशन्ति ॥ १० ॥

कर्कराशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप ।

पत्ते, जड़ों और फलों का धारण करनेवाला, हाथी के समान देहवाला, मलयाचल के वन में रहनेवाला, शरभ के समान पैरवाला, शूकर के समान मुखवाला और घोड़े के कण्ठ के सदृश कण्ठवाला कर्कराशि का प्रथम द्रेष्काण होता है। यह चतुष्पद तथा चन्द्रसक्त भी कहा जाता है ॥ १० ॥

पद्मार्चिता मूर्द्धनि भोगियुक्ता

स्त्री कर्कशाऽरण्यगता विरौति ।

शाखां पलाशस्य समाश्रिता च

मध्ये स्थिता कर्कटकस्य राशेः ॥ ११ ॥

कर्कराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

शिर में कमल के फलों से शोभित, सर्प को लिये हुए, कठिन यौवन से युक्त, ढाक की डाल पकड़े हुए, वन में रोती हुई स्त्री के समान कर्क का दूसरा द्रेष्काण होता है । यह स्त्रीद्रेष्काण व्याल-द्रेष्काण तथा मङ्गलसक्त भी कहा जाता है ।। ११ ।।

भार्याभरणार्थमर्णवं नौस्थो गच्छति सर्पवेष्टितः ।

हेमैश्च युतो विभूषणैश्चिपिटास्योऽन्त्यगतश्च कर्कटे ॥ १२ ॥

कर्कराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

नौका पर चढ़ा हुआ, स्त्री के आभूषणों को लाने के लिये समुद्र में जाता हुआ, सर्प को देह में लपेटे हुए और सुवर्ण के आभूषणों से भूषित, चपटे मुखवाले मनुष्य के सदृश कर्क का तीसरा द्रेष्काण होता है। यह नरद्रेष्काण, व्यालद्रेष्काण तथा जीवसक्त भी कहा जाता है ॥ १२ ॥

शाल्मलेरुपरि गृध्रजम्बुकौ

श्वा नरश्च मलिनाम्बरान्वितः ।

रौति मातृपितृविप्रयोजितः

सिंहरूपमिदमाद्यमुच्यते ॥ १३ ॥

सिंहराशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप ।

सेमर के वृक्ष के ऊपर गृध्र और श्रृगाल ये दोनों स्थित हों और कुत्ता तथा मैले वस्त्र पहिरे माता-पिता से रहित, रोता हुआ

मनुष्य-सा सिंहराशि के प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप होता है। इसे कोई नरद्रेष्काण, चतुष्पदद्रेष्काण, खगद्रेष्काण और अर्कसक्त भी कहते हैं ॥ १३ ॥

हयाकृतिः पाण्डुरमाल्यशेखरो
बिभर्ति कृष्णाजिनकम्बलं नरः ।
दुरासदः सिंह इवात्तकार्मुको
नताग्रनासो मृगराजमध्यमः ॥ १४ ॥

सिंहराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

घोड़े की-सी आकृतिवाला, थोड़े पीले फूलों की माला को पहिने और मृगचर्म तथा कम्बल धारण किये हुए, सिंह के समान निःशङ्क, धनुष को धारण किये हुए और आगे को कुछ झुकी हुई नाकवाला, मनुष्यरूप, सिंह का दूसरा द्रेष्काण होता है। यह नरद्रेष्काण, चतुष्पदद्रेष्काण, सायुध तथा जीवसक्त भी कहा जाता है ॥ १४ ॥

ऋक्षाननो वानरतुल्यचेष्टो
बिभर्ति दण्डं फलमामिषं च ।
कूर्ची मनुष्यः कुटिलैश्च केशै-
र्मृगेश्वरस्यान्त्यगतस्त्रिभागः ॥ १५ ॥

सिंहराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

ऋक्ष का-सा मुख, वानर के समान व्यापार करनेवाला, एक हाथ में दण्ड लिये और अन्य में फल तथा मांस धारण करता हुआ, बड़ी दाढ़ी, मूँछ और कुटिल केशों को धारण किये हुए मनुष्य के समान सिंहराशि का तीसरा द्रेष्काण होता है। यह नरद्रेष्काण, चतुष्पद द्रेष्काण, सायुध तथा भौमसक्त भी कहा जाता है ॥ १५ ॥

पुष्पप्रपूर्णेन घटेन कन्या
मलप्रदिग्धाम्बरसंवृताङ्गी।
वस्त्रार्थसंयोगमभीप्समाना
गुरोः कुलं वाञ्छति कन्यकाद्यः ॥ १६ ॥

कन्याराशि में प्रथम द्रेष्काण का स्वरूप।

फलों से भरा हुआ घड़ा लिये, मैले वस्त्र पहिने, वस्त्र तथा धन मिलने की इच्छा करती हुई और अपने गुरु के कुल को जाती हुई कन्या के समान कन्या राशि का पहिला द्रेष्काण होता है। इसे स्त्री-द्रेष्काण तथा बुधसक्त भी कहते हैं॥ १६॥

पुरुषः प्रगृहीतलेखनिः श्यामो वस्त्रशिरा व्ययायकृत्।
विपुलं च बिभर्त्ति कार्मुकं रोमव्याप्ततनुश्च मध्यमः ॥ १७ ॥

कन्याराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप।

एक हाथ में कलम लिये हुए, श्यामवर्ण, पगड़ी बाँधे, खर्च और आमद करनेवाला, बड़ा भारी धनुष धारण किये तथा सम्पूर्ण देह में रोमवाले पुरुष के समान कन्याराशि का दूसरा द्रेष्काण होता है। इसे कोई नरद्रेष्काण, सायुध तथा शनैश्चरसक्त भी कहते हैं॥ १७॥

गौरी सुधौताग्रदुकूलगुप्ता
समुच्छ्रिता कुम्भकटच्छुहस्ता।
देवालयं स्त्री प्रयता प्रवृत्ता
वदन्ति कन्यान्त्यगतस्त्रिभागः ॥ १८ ॥

कन्याराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप।

गौरवर्ण, सुन्दर किनारी वाले वस्त्रों को ओढ़े लम्बीदेह, एक हाथ में घड़ा तथा दूसरे हाथ में करछुल लिये, देवता के स्थान को जाने के लिए तैयार, युवती स्त्री के समान कन्याराशि का तीसरा

द्रेष्काण होता है। इसे कोई स्त्रीद्रेष्काण तथा शुक्रसक्त भी कहते हैं ॥ १८ ॥

वीथ्यन्तरापणगतः पुरुषस्तुलावा-
नुन्मानमानकुशलः प्रतिमानहस्तः ।
भाण्डं विचिन्तयति तस्य च मूलयमेत-
द्रूपं वदन्ति यवनाः प्रथमं तुलायाः ॥ १९ ॥

तुलाराशि के पहिले द्रेष्काण का स्वरूप ।

मार्ग में दुकान पर बैठा, तराजू तथा तौलने के बाँट हाथ में लिये, नापने-जोखने में बड़ा चतुर, इस बर्तन का यह मोल, इस बर्तन का यह मोल ऐसा विचारता हुआ पुरुष जैसा होता है, वैसा ही तुला राशि का पहिला द्रेष्काण होता है। यह नरद्रेष्काण तथा शुक्रसक्त भी कहा जाता है ॥ १९ ॥

कलशं परिगृह्य विनिष्पतितुं
समभीप्सति गृध्रमुखः पुरुषः ।
क्षुधितस्तृषितश्च कलत्रसुतान्
मनसैति तुलाधरमध्यगतः ॥ २० ॥

तुलाराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

भूख तथा प्यास से व्याकुल होकर घड़ा हाथ में लिये हुए तथा मन से अपने स्त्री-पुत्रों का स्मरण करते हुए और कहीं गिरने की इच्छा करते हुए गृध्रपक्षी के तुल्य मुखवाले पुरुष के समान तुला राशि का दूसरा द्रेष्काण होता है। यह नरद्रेष्काण, खगद्रेष्काण तथा शनैश्चरसक्त भी कहा जाता है ॥ २० ॥

बिभीषयंस्तिष्ठति रत्नचित्रितो
वने मृगान् काञ्चनतूणवर्मभृत् ॥

फलामिषं वानररूपभृन्नर-
स्तुलावसाने यवनैरुदाहृतः ॥ २१ ॥

तुलाराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

मणियों करके भूषित तथा सुवर्ण का तूणीर, कवच और धनुष धारण किये, फल तथा मांस को भी लिये, वन में हरिणादि जीवों को डरवाते हुए, वानर के समान रूप धारण किये हुए मनुष्य के समान तुलाराशि का तीसरा द्रेष्काण होता है, ऐसा यवनों ने कहा है । यह चतुष्पद द्रेष्काण तथा बुधसक्त भी कहा जाता है ॥ २१ ॥

वस्त्रैर्विहीनाभरणैश्च नारी
महासमुद्रात्समुपैति कूलम् ।
स्थानच्युता सर्पनिबद्धपादा
मनोरमा वृश्चिकराशिपूर्वः ॥ २२ ॥

वृश्चिकराशि के पहिले द्रेष्काण का स्वरूप ।

वस्त्र तथा आभूषणों से हीन, महासागर से किनारे को आती हुई, स्थान-भ्रष्ट, साँप पैर में लपेटे तथा मन को आनन्दयुत करती हुई स्त्री के समान वृश्चिक राशि का प्रथम द्रेष्काण होता है। यह स्त्रीद्रेष्काण, सर्पद्रेष्काण तथा मंगलसक्त भी कहा जाता है ॥ २२ ॥

स्थानसुखान्यभिवाञ्छतिनारी
भर्तृकृते भुजगावृतदेहा ।
कच्छपकुम्भसमानशरीरा
वृश्चिकमध्यमरूपमुशन्ति ॥ २३ ॥

वृश्चिकराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

स्वामी के लिये स्थान तथा सुख की इच्छा करती हुई, सर्प को देह में लपेटे, कछुवा तथा घड़े के समान शरीरवाली स्त्री के समान वृश्चिकराशि का दूसरा द्रेष्काण होता है । यह स्त्री द्रेष्काण, सर्पद्रेष्काण तथा जीवसक्त भी कहा जाता है ॥ २३ ॥

पृथुलचिपिटकूर्मतुल्यवक्त्रः
श्वमृगवराहश्रृगालभीतिकारी ।
अवति च मलयाकरप्रदेशं
मृगपतिरन्त्यगतश्च वृश्चिकस्य ।। २४ ।।

वृश्चिकराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

चौड़े तथा चपटे कछुए के समान मुखवाला और कुत्ता, हरिण, शूकर तथा श्रृगाल इन जीवों को डरवानेवाला तथा मलयपर्वत पर किसी स्थान की रक्षा करता हुआ सिंह जैसा हो, वैसा वृश्चिकराशि का तीसरा द्रेष्काण होता है। यह कूर्मानन, सिंह द्रेष्काण, चतुष्पदद्रेष्काण तथा चन्द्रसक्त भी कहा जाता है ।। २४ ।।

मनुष्यवक्त्रोऽश्वसमानकायो
धनुर्विगृह्यायतमाश्रमस्थः ।
ऋतूपयोज्यानि तपस्विनश्च
रक्षत्यथाद्यो धनुषस्त्रिभागः ।। २५ ।।

मनुष्य के समान मुख, घोड़े के समान देह तथा बड़ा धनुष धारण करके अपने स्थान ही में स्थित होकर यज्ञ की सामग्री और तपस्वियों की रक्षा करनेवाला जैसा प्राणी होता है वैसा ही धनराशि का पहिला द्रेष्काण होता है। यह अश्वमुख, नरद्रेष्काण, चतुष्पद द्रेष्काण, सायुध द्रेष्काण तथा जीवसक्त भी कहा जाता है ।। २५ ।।

धनराशि के पहिले द्रेष्काण का स्वरूप ।

मनोरमा चम्पकहेमवर्णा
भद्रासने तिष्ठति मध्यरूपा ।
समुद्ररत्नानि विघट्टयन्ती
मध्यत्रिभागो धनुषः प्रदिष्टः ।। २६ ।।

धनराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

चम्पा के फूल और सुवर्ण के समान वर्णवाली, मन को आनन्द देनेवाली, मध्यम रूपवाली (अर्थात् न तो अत्यन्त सुन्दर ही रूप है, न बहुत कुरूप ही है), सुन्दर आसन पर बैठी हुई, समुद्र के रत्नों को बनाती हुई स्त्री के समान धनराशि का दूसरा द्रेष्काण होता है। इसी को कोई स्त्रीद्रेष्काण तथा मंगलसक्त भी कहते हैं ॥ २६ ॥

कूर्ची नरो हाटकचम्पकाभो
वरासने दण्डधरो निषण्णः ।
कौशेयकान्युद्वहतेऽजिनं च
तृतीयरूपं नवमस्य राशेः ॥ २७ ॥

धनराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

सुन्दर दाढ़ी-मूंछवाले, सुवर्ण तथा चम्पा के फूल के समान कान्तिवाले, उत्तम आसन पर बैठे हुए, दण्ड धारण किये हुए, रेशमी कपड़े पहने हुए और मृगचर्म लिये हुए मनुष्य के समान धनराशि का तीसरा द्रेष्काण होता है। इसी को नरद्रेष्काण, सायुध तथा अर्कसक्त भी कहते हैं ॥ २७ ॥

रोमचितो मकरोपमदंष्ट्रः
शूकरकायसमानशरीरः ।
योक्त्रकजालकबन्धनधारी
रौद्रमुखो मकरप्रथमस्तु ॥ २८ ॥

मकरराशि के पहिले द्रेष्काण का स्वरूप ।

रोमसंयुत, शूकर के समान देह, मकर की-सी दाढ़ें और पशुओं के जोड़ने की रस्सी, पक्षियों के फँसाने का जाल तथा मनुष्यों के बाँधने के लिये बेड़ी इत्यादि धारण करता हुआ और बड़ा भयानक मुखवाला मनुष्य जैसा होता है वैसा ही मकरराशि

का पहिला द्रेष्काण होता है। इसी को पुरुषद्रेष्काण, निगड़द्रेष्काण, चतुष्पदद्रेष्काण तथा शनैश्चरसक्त भी कहते हैं ॥ २८ ॥

कलास्वभिज्ञाब्जदलायताक्षी
श्यामा विचित्राणि च मार्गमाणा।
विभूषणालङ्कृतलोहकर्णा
योषा प्रदिष्टा मकरस्य मध्ये ॥ २९ ॥

मकरराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप।

कला-कौशल में चतुर, कमलदल के समान बड़े नेत्रवाली, श्यामवर्णा, अनेक प्रकार की वस्तुओं को ढूँढ़ती हुई, आभूषणों से भूषित और लोहे के आभूषण कान में पहिने हुए स्त्री के समान मकरराशि का दूसरा द्रेष्काण होता है। इसी को स्त्रीद्रेष्काण तथा शुक्रसक्त भी कहते हैं ॥ २९ ॥

किन्नरोपमतनुः सकम्बल-
स्तूणचापकवचैः समन्वितः।
कुम्भमुद्वहति रत्नचित्रितं
स्कन्धगं मकरराशिपश्चिमः ॥ ३० ॥

मकरराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप।

किन्नरों के सदृश देहवाले (अर्थात् घोड़े के समान मुख और मनुष्य की-सी देहवाले), कम्बल धारण किये तथा तूणीर, धनुष और कवच को धारण किये और रत्नों से भूषित काँधे पर घड़ा धरे हुए प्राणी के समान मकरराशि का तीसरा द्रेष्काण होता है। इसी को पुरुषद्रेष्काण, सायुध तथा बुधसक्त भी कहते हैं ॥ ३० ॥

स्नेहमद्यजलभोजनागम-
व्याकुलीकृतमनाः सकम्बलः।
कोशकारवसनोऽजिनान्वितो
गृध्रतुल्यवदनो घटादिगः ॥ ३१ ॥

कुम्भराशि के पहिले द्रेष्काण का स्वरूप।

तेल, घी, मदिरा, जल और भोजन की सामग्री की आमद से विकल चित्तवाले, कम्बल और मृगचर्म तथा पट्टवस्त्र धारण किये और गृध्र के समान मुखवाले प्राणी के समान कुम्भराशि का पहिला द्रेष्काण होता है। और इसी को नरद्रेष्काण, खग तथा शनैश्चरसक्त भी कहते हैं ॥ ३१ ॥

दग्धे शकटे सशाल्मले लोहान्याहरतेऽङ्गना वने।
मलिनेन पटेन संवृता भाण्डैर्मूर्ध्नि गतैश्च मध्यमः ॥ ३२ ॥

कुम्भराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप।

अग्नि से जली गाड़ी पर सवार, सेमर के वृक्ष को लिये, वन में लोहे को बटोरती हुई, मैले वस्त्र पहिने और शिर पर बरतन धरे घूमती हुई स्त्री के समान कुम्भराशि का दूसरा द्रेष्काण होता है। इसी को स्त्री द्रेष्काण, साग्निक तथा बुधसक्त भी कहते हैं ॥३२॥

श्यामः सरोमश्रवणः किरीटी
त्वक्पत्रनिर्यासफलैर्बिभर्त्ति।
भाण्डानि लोहव्यतिमिश्रितानि
सञ्चारयत्यन्तगतो घटस्य ॥ ३३ ॥

कुम्भराशि क तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप।

श्यामवर्ण, रोमयुक्त कानों वाला, मुकुट धारण किये और छाल, पत्ते, गोंद तथा दल इन सबसे भरे हुए लोह से युक्त बरतनों को इधर-उधर उठाते-धरते प्राणी के तुल्य कुम्भराशि का तीसरा द्रेष्काण होता है। इसी को नरद्रेष्काण और शुक्रसक्त भी कहते हैं ॥ ३३ ॥

स्रुग्भाण्डमुक्तामणिशंखमिश्रै-
र्व्याक्षिप्तहस्तः सविभूषणश्च।
भार्याविभूषार्थमपां निधानं
नावा प्लवत्यादिगतो झषस्य ॥ ३४ ॥

मीनराशि के पहिले द्रेष्काण का स्वरूप ।

स्रुक् आदि यज्ञ के बरतन, मोती, मणि और शंख इन सब वस्तुओं को हाथ में लिये, आभूषणों से युक्त और स्त्री के आभरण लाने के लिये नाव इत्यादि पर सवार होकर समुद्रपार जाते हुए पुरुष के समान मीनराशि का पहिला द्रेष्काण होता है। इसी को नरद्रेष्काण तथा जीवसक्त भी कहते हैं ।। ३४ ।।

अत्युच्छ्रितध्वजपताकमुपैति पोतं
कूलं प्रयाति जलधेः परिवारयुक्ता ।
वर्णेन चम्पकमुखा प्रमदा त्रिभागो
मीनस्य चैष कथितो मुनिभिर्द्वितीयः ।। ३५ ।।

मीनराशि के दूसरे द्रेष्काण का स्वरूप ।

बड़े ऊँचे ध्वजा पताकावाले नाव पर सवार होकर परिवार सहित समुद्र के दूसरे किनारे को जाती हुई और चम्पा के फूल के समान मुखवाली स्त्री के समान मीनराशि का दूसरा द्रेष्काण होता है। इसी को स्त्री द्रेष्काण तथा चन्द्रसक्त भी कहते हैं ।। ३५ ।।

श्वभ्रान्तिके सर्पनिवेष्टिताङ्गो
वस्त्रैर्विहीनः पुरुषस्त्वटव्याम् ।
चौरानलव्याकुलितान्तरात्मा
विक्रोशतेऽन्त्योपगतो झषस्य ।। ३६ ।।

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके द्रेष्काणाध्यायः सप्तविंशः ।। २७ ।।

मीनराशि के तीसरे द्रेष्काण का स्वरूप

वन में किसी खात (गड्ढे) के समीप में वस्त्रों से हीन, देह में सर्प लपेटे हुए और चोर तथा अग्नि से व्याकुल होकर रोते

हुए पुरुष के समान मीन का तीसरा द्रेष्काण होता है और इसी को सर्पद्रेष्काण तथा मङ्गलसक्त भी कहते हैं ।

इन सब द्रेष्काणों के स्वरूप के वर्णन का प्रयोजन यह है कि यात्राकाल* में जैसा शुभ तथा अशुभ द्रेष्काण हो वैसे ही फल को विचारे और जिस द्रेष्काण में चोरी इत्यादि हो उसी द्रेष्काण के समान चोर का स्वरूप जाने ।। ३६ ।।

दो० श्रीवराहकृतजातके, वर्णित काणनिकाय ।
रामरत्नकृत भाषा, विगत सतइसाँध्याय ।। २७ ।।

—:०:—

अथोपसंहाराध्यायोऽष्टविंशः ।

राशिप्रभेदो ग्रहयोनिभेदो
वियोनिजन्माऽथ निषेककालः ।
जन्माथ सद्यो मरणं तथायु-
र्दशाविपाकोऽष्टकवर्गसंज्ञः ।। १ ।।
कर्माजीवो राजयोगाः खयोगा-
श्चान्द्रा योगा द्विग्रहाद्याश्च योगाः ।
प्रव्रज्याऽथो राशिशीलानि दृष्टि-
र्भावस्तस्मादाश्रयोऽथ प्रकीर्णः ।। २ ।।

---

*यात्रायाम्—"द्रेष्काणाकारचेष्टां गुणसदृशफलं योजयेद्वृद्धिहेतो
द्रेष्काणे सौम्यरूपे कुसुमफलयुते रत्नभाण्डान्विते च ।
सौम्यैर्दृष्टे जयः स्यात्प्रहरणसदृशे पापदृष्टे च भङ्गः
संमोहो वाथ बन्धः सभुजगनिगडे पापयुक्ते पिपासुः ।।"

अन्यदपि चौररूपादिज्ञाने षट्पंचाशिकायाम्—
"अंशकाज्ज्ञायते द्रव्यं द्रेष्काणैस्तस्कराः स्मृताः ।
राशिभ्यः कालदिग्देशा वयो ज्ञातिश्च लग्नपात् ।।"

नेष्टा योगा जातकं कामिनीनां
निर्याणं स्यान्नष्टजन्मा दृकाणः ।
अध्यायानां विंशतिः पञ्चयुक्ता
जन्मन्येतद्यात्रिकं चाभिधास्ये ॥ ३ ॥

ग्रन्थस्थविषय-परिगणन ।

राशिप्रभेदाध्याय १, ग्रहयोनिभेदाध्याय २, वियोनिजन्माध्याय ३, निषेकाध्याय ४, सूतिकाध्याय ५, अरिष्टाध्याय ६, आयुर्दायाध्याय ७, दशान्तर्दशाध्याय ८, अष्टकवर्गाध्याय ९, कर्माजीवाध्याय १०, राजयोगाध्याय ११, नाभसयोगाध्याय १२, चन्द्रयोगाध्याय १३, द्विग्रहादियोगाध्याय १४, प्रव्रज्यायोगाध्याय १५, राशिशीलाध्याय तीन खण्ड १६, दृष्टिफलाध्याय १७, भावाध्याय १८, आश्रययोगाध्याय १९, प्रकीर्णाध्याय २०, अनिष्टयोगाध्याय २१, स्त्रीजातकाध्याय २२, निर्याणाध्याय २३, नष्टजातकाध्याय २४ और द्रेष्काणाध्याय २५। ये पच्चीस अध्याय इस जातक में मैंने कहे हैं। इसके अनन्तर यात्रा में संगृहीत विषयों को कहता हूँ ॥ १–३ ॥

प्रश्नास्तिथिर्भं दिवसः क्षणश्च
चन्द्रो विलग्नं त्वथ लग्नभेदः ।
शुद्धिर्ग्रहाणामथ चापवादो
विमिश्रकाख्यं तनुवेपनं च ॥ ४ ॥

प्रश्नभेदाध्याय १, तिथिबलाध्याय २, नक्षत्राभिधान ३, दिवसाभिधान ४, मुहूर्तनिर्देश ५, चन्द्रबलाध्याय ६, लग्ननिर्णय ७, लग्नविशेषभेद ८, ग्रहशुद्धि ९, अपवादाध्याय १०, मिश्रकाध्याय ११, अङ्गस्फुरणाध्याय १२ ॥ ४ ॥

अतः परं गुह्यकपूजनं स्यात्
स्वप्नं ततः स्नानविधिः प्रदिष्टः ।

यज्ञो ग्रहाणामथ निर्गमश्च
क्रमाच्च दिष्टः शकुनोपदेशः ॥ ५ ॥

इसके अनन्तर गुह्यक पूजन १३, स्वप्नाध्याय १४, स्नानविधि १५, ग्रहयज्ञ १६, प्रस्थानविधि १७, शकुनोपदेश १८ ॥५॥

विवाहकालः करणं ग्रहाणां
प्रोक्तं पृथक् तद्विपुला च शाखा ।
स्कन्धैस्त्रिभिर्ज्योतिषसंग्रहोऽयं
मया कृतो दैवविदां हिताय ॥ ६ ॥

विवाहकाल १९, ग्रहस्पष्टकरण २० और ग्रहकरण की अनेक शाखाएँ पृथक्-पृथक् कही हैं। तथा गणित, होरा और संहिता इन तीन खण्डों करके मैंने यह ज्योतिष-शास्त्र का संग्रह ज्योतिषियों के हित के लिये किया है ॥ ६ ॥

पृथुविरचितमन्यैः शास्त्रमेतत्समस्तं
तदनु लघु मयेदं तत्प्रदेशार्थमेव ।
कृतमिह हि समर्थं धीविषाणामलत्वे
मम यदिह यदुक्तं सज्जनैः क्षम्यतां तत् ॥ ७ ॥

अन्याचार्यों ने जिसको बहुत विस्तार से कहा है उसको ही मैंने बहुत थोड़े शब्दों में कहा है। यद्यपि यह स्वल्प होकर भी बुद्धिरूप शृंगों के मल को दूर करने में समर्थ है, तो भी सज्जनों से मेरी यही प्रार्थना है कि इसमें जो कुछ मैंने अयोग्य कहा हो, उसको क्षमा करें ॥ ७ ॥

ग्रन्थस्य यत्प्रचरतोऽस्य विनाशमेति
लेख्याद् बहुश्रुतमुखाधिगमक्रमेण ।
यद्वा मया कुकृतमल्पमिहाकृतं वा
कार्यं तदत्र विदुषा परिहृत्य रागम् ॥ ८ ॥

मेरी यह भी प्रार्थना है कि इस ग्रन्थ के प्रचार होने से अर्थात् शिष्य-प्रशिष्य द्वारा हाथों हाथ जाने से और लेखक के दोष से जो कुछ अशुद्ध हुआ हो और यदि कुछ मुझसे निन्दित लिखा गया हो अथवा मैंने इसमें जो कुछ न किया हो अर्थात् छोड़ दिया हो, पण्डितों को उचित है कि उत्तम पण्डितों से जानकर और पक्षपात को छोड़ करके उस सबको शुद्ध कर लेवें ॥ ८ ॥

आदित्यदासतनयस्तदवाप्तबोधः
कापित्थके सवितृलब्धवरप्रसादः ।
आवन्तिको मुनिमतान्यवलोक्य सम्य-
ग्घोरां वराहमिहिरो रुचिराञ्चकार ॥ ९ ॥

उज्जयिनीपुरी के पास कापित्थक नाम ग्राम के रहनेवाले आदित्यदास नाम ब्राह्मण के पुत्र और उन्हीं आदित्यदास ही से पढ़े हुए तथा सूर्यनारायण से वर को पाये हुए, उज्जयिनीपुरी में निवास करनेवाले श्रीवराहमिहिरजी ने अनेक मुनियों के मतों को देख तथा विचार करके इस उत्तम होराशास्त्र की रचना की है ॥ ९ ॥

दिनकरमुनिगुरुचरणप्रणिपातकृतप्रसादमतिनेदम् ।
शास्त्रमुपसंगृहीतं नमोऽस्तु पूर्वप्रणेतृभ्यः ॥ १० ॥

इति श्रीवराहमिहिरकृते बृहज्जातके उपसंहाराध्यायोऽष्टाविंशः ॥ २८ ॥

सूर्य, वशिष्ठादि मुनि और गुरु श्री आदित्यदास इन सबके चरणों के प्रणाम से निर्मल की हुई बुद्धिवाले मैंने जिन शास्त्रकारों के शास्त्रों का संग्रह किया है उन प्राचीन शास्त्रकारों के चरणों में मेरा नमस्कार होवे ॥ १० ॥

टीकाकार का परिचय।

लखनऊ के पासवाले कान्हीपुर बासवाले,
अन्तेवासि शाशवाले दास अरिकाम के;
कालिका सों तातवाले गोकुल सों प्रतातवाले,
नातभाइ बातवाले अवस्थ्युपनाम के।
नामवाले दामवाले मुंशी सों स्वामिवाले,
कारक बृहज्जातक कि भाषारूप काम के;
उन्नीससै उञ्चासवाले संवत् वैशाखवाले,
मास पूर्णमासि तित्थि रामरत्न नाम के ॥

दो० श्रीवराहकृतजातके कविकुलविषय जनाय।
रामरत्नकृत भाषा, विगत अठइसाँध्याय ॥ २८ ॥

इति श्री वराहमिहिरविरचितं बृहज्जातकं समाप्तम् ॥

संपादक का परिचय।

पटियाला के राज्य में, बसई है शुभ ग्राम।
जहाँ बसे भुवदेजी, चेतराम गुणधाम ॥ १ ॥
उनके सुत मोहन भये, जिन कुल कियो सनाथ।
उनके सुत भे हरकिशन, तत्सुत भे रघुनाथ ॥ २ ॥
चार पुत्र रघुनाथ के, इमरत पेमूराम।
उदयराम शुभ गुणसदन, ठंडुराम शुभ नाम ॥ ३ ॥
पेमुराम के षट् सुवन, सदाराम कृपुराम।
रूपराम जीसुख तथा, श्रीकुशाल भक्तराम ॥ ४ ॥
ठंडुराम के पाँच सुत, सर्वसुख बूजनराम।
हुकुमचन्द डेडराजजी, और सरूपाराम ॥ ५ ॥
श्रीसर्वसुख के पाँच सुत, मिहिरचन्द द्विजराज।
गोवर्धन चनीलालजी, गंगाराम हिमराज ॥ ६ ॥
मिहिरचन्द के एक सुत, मनीलाल शुभ नाम।
तिनका जेठा सुवन मैं, खूबचन्द यह नाम ॥ ७ ॥

शुभमस्तु।

श्रीमती कमला भार्गव द्वारा—तेजकुमार-प्रेस (प्रा०) लिमिटेड, लखनऊ में मुद्रित।

श्रीमती कमला भार्गव द्वारा
तेजकुमार प्रेस (प्रा०) लिमिटेड,
लखनऊ, में मुद्रित